

विषयः पृष्ठांकः

### चतुर्दशस्तरंगः

अथ च्छायापुरुषलक्षणम् ६२

मूत्रपरीक्षा १४।२७॥ .... ६३

### पञ्चदशस्तरंगः

अथ दूताविचारः .... ६६

मलपरीक्षा १६।१० .... ७

### षोडशस्तरंगः

अथ वृक्परीक्षा .... ६६

शङ्कुनाः .... ६७

स्वप्नाः १६।१२ .... ११

### सप्तदशस्तरंगः

अथ धातुशोधनम् .... ६८

पारदशोधनम् .... ११

गन्धकशोधनम् .... ६१

पङ्गुणगन्धकजारणविधिः ११

गन्धकपिष्टीकरणम् .... ६२

मस्मसूतः .... ६३

रसमूर्छनम् .... ११

हिङ्गुलाछाष्टिः .... ६४

रसबंधनम् .... ११

रसमुखकरणम् .... ११

अजीर्णनाशनम् .... ६५

सुवर्णजारणम् .... ११

लवणसुधानिधिरसः .... ११

हिरण्यगर्भगुटिका .... ६६

रसासिद्धिरसः .... ११

कर्पूररसः .... ६७

सुवर्णादिसर्वधातुशुद्धिः ६८

लोहमारणम् .... ११

तालकशुद्धिः .... ७०

मनःशिलारसशुद्धिः .... ११

जैपालशोधनम् .... ११

विषयः पृष्ठांकः

तुल्यशुद्धिः .... ७०

तारमाक्षिकशुद्धिः .... ११

स्वर्णमाक्षिकशुद्धिः .... ११

दरदशुद्धिः .... ११

शिलाजतुशुद्धिः .... ७१

विपातिदुकशुद्धिः .... ११

किट्टशुद्धिः .... ११

धान्याभ्रकरणविधिः .... ११

विषशुद्धिः .... ११

उपरसादिशुद्धिः .... ११

स्वर्णमारणम् .... ७२

रूप्यमारणगुणौ .... ११

रीतिकांस्यमारणम् .... ७३

नागमारणम् .... ११

वंगमारणगुणौ .... ११

ताम्रमारणम् .... ११

अभ्रकमारणगुणौ .... ७४

वज्रमारणम् .... ७५

वैकांतमारणम् .... ११

अभ्रकसत्त्वपातनम् .... ११

मूनागसत्त्वपातनविधिः ७६

सर्वसत्त्वमारणम् १७।१२ ११

### अष्टादशस्तरंगः

अथ स्वरसादिः .... ११

स्वरसकल्पना .... ११

कल्ककल्पना .... ७७

छायाकल्पना .... ११

यवागूः .... ७८

सप्तगुष्टिकोद्युपः .... ११

विलेपी .... ११

पेया .... ११

यक्तम् .... ७९

| विषयः                  | पृष्ठांकः |
|------------------------|-----------|
| शुद्धमंडः ....         | ७९        |
| अष्टगुणमंडः ....       | ११        |
| वाद्यमण्डः ....        | ११        |
| लाजमंडः ....           | ११        |
| मधूकपुष्पादिफांटकल्पना | ११        |
| हिमकल्पना ....         | ८०        |
| चूर्णकल्पना ....       | ११        |
| वटिका ....             | ११        |
| अवलेहः ....            | ८१        |
| गणाः ....              | ११        |
| त्रिफला ....           | ११        |
| त्रिकटु ....           | ११        |
| पंचकोलम् ....          | ११        |
| त्रिसुगंधि ....        | ८२        |
| जीवतीयगणः ....         | ११        |
| अष्टवर्गः ....         | ११        |
| पंचलवणानि ....         | ११        |
| क्षाराः ...            | ८३        |
| दशमूलपंचमूले ....      | ११        |
| पंचवल्कलम् १८।६२ ....  | ११        |

### एकोनविंशस्तरंगः

|                                     |    |
|-------------------------------------|----|
| अथ प्रथमज्वरलक्षणम्                 | ११ |
| वातज्वरलक्षणम् ....                 | ८५ |
| पित्तज्वरलक्षणम् ....               | ११ |
| श्लेष्मज्वरलक्षणम् ....             | ११ |
| वातपित्तज्वरलक्षणम् ....            | ११ |
| वातश्लेष्मज्वरलक्षणम् ....          | ८६ |
| श्लेष्मपित्तज्वरलक्षणम् ....        | ११ |
| सन्निपातज्वरलक्षणम् ...             | ११ |
| त्रयोदशसन्निपाताः ....              | ८७ |
| प्रथमं ज्वरनिदान-<br>म् १९।१०३ .... | ९० |

| विषयः | पृष्ठांकः |
|-------|-----------|
|-------|-----------|

### विंशतितमस्तरंगः

|                                    |     |
|------------------------------------|-----|
| अथ ज्वरचिकित्सा ....               | ९३  |
| (वातज्वरे) गुडूच्यादिः             | ९६  |
| शालिपण्यादिः ....                  | ९७  |
| किरातादिः ....                     | ११  |
| अश्वकंबुकोरसः ....                 | ११  |
| (पित्तज्वरे) कट्फलादिः             | ११  |
| (श्लेष्मज्वरे) ....                | ९८  |
| बीजपूरादिः ....                    | ११  |
| भूर्निवादिः ....                   | ११  |
| आमलक्यादिः ....                    | ११  |
| चतुर्भद्रावलेहिकाः ....            | ११  |
| गुडूच्यादिः ....                   | ९९  |
| (वातपित्तज्वरे) ....               | ११  |
| पंचभद्रम् ....                     | ११  |
| त्रिफलाम्बु ....                   | ११  |
| वातश्लेष्मज्वरे ....               | ११  |
| क्षुद्रादिः ....                   | ११  |
| आरोग्यपंचकम्                       | ११  |
| (पित्तश्लेष्मज्वरे) ....           | ११  |
| अमृताष्टकम् ....                   | ११  |
| (संनिपातचिकित्सायां )              | १०० |
| दशमूलम् ....                       | ११  |
| भूर्निवाद्यष्टादशांगः ...          | ११  |
| निवादिः ....                       | १०१ |
| चूतित्तकपायः ....                  | ११  |
| अष्टांगावलेहिका ....               | ११  |
| दशमूलेष्वष्टादशांगः ....           | १०२ |
| चतुर्दशांगः ....                   | ११  |
| संनिपातसाध्यासाध्यवि-<br>चारः .... | १०३ |

| विषयः  | पृष्ठांकः |
|--|-----------|
| सिद्धार्थकादिः ....                          | ”         |
| सन्धिगादिज्वरचिकित्सा १०४                    | ”         |
| पंचमुष्टिकः .... १०५                         | ”         |
| विषमज्वरचिकित्सा .... १०६                    | ”         |
| तृतीयादिज्वरचिकित्सा                         | ”         |
| रसमार्गतोज्वरचिकित्सा १०८                    | ”         |
| सर्वज्वरारिः ....                            | ”         |
| सन्निपातज्वरहरो वीरभद्राख्यो<br>रसः .... १०९ | ”         |
| ब्रह्माक्षरसः ....                           | ”         |
| विद्याधरोरसः .... ११०                        | ”         |
| पंचाननोरसः ....                              | ”         |
| महाज्वरांकुशरसः ....                         | ”         |
| चिंतामणिरसः .... १११                         | ”         |
| सूचिकाभरणोरसः ....                           | ”         |
| सर्वज्वरहरोरसः ....                          | ”         |
| विषूचिकायांचुक्राद्यं तैलम् ११२              | ”         |
| महाशीतज्वरांकुशः ....                        | ”         |
| शीतारिरसः ....                               | ”         |
| लघुमालिनीवसंतः .... ११३                      | ”         |
| बृहन्मालिनीवसंतः ....                        | ”         |
| अथ जोर्णज्वरेतैलानि.... ११४                  | ”         |
| पट्टतक्रतैलम् ....                           | ”         |
| लाक्षादितैलमनुभूतम् ....                     | ”         |
| लघुलक्ष्मणदितैलम् .... ११५                   | ”         |
| पट्टचरणतैलम् ....                            | ”         |
| अङ्गारकतैलम् ....                            | ”         |
| अथ ज्वरहराणि चूर्णानि                        | ”         |
| आमलक्यादिचूर्णम् ....                        | ”         |
| तालीसाद्यंचूर्णम् ....                       | ”         |
| सुदर्शनं चूर्णम् .... ११६                    | ”         |
| सितोपलाद्यं चूर्णम् .... ११७                 | ”         |
| कट्फलादिचूर्णम् २० । ११४                     | ”         |

| विषयः                       | पृष्ठांकः |
|-----------------------------|-----------|
| एकविंशतितमस्तरंगः           |           |
| अथातीसारचिकित्सा ....       | ”         |
| गंगाधरचूर्णम् .... ११९      | ”         |
| कूटजावलेहः .... १२१         | ”         |
| लघुकूटजावलेहः ....          | ”         |
| कपित्थाष्टकम् .... १२२      | ”         |
| लाईचूर्णम् ....             | ”         |
| बृहल्लाल्पचूर्णम् २१।४३     | ”         |
| द्वाविंशस्तरंगः             |           |
| अथसग्रहणीचिकित्सा ....      | ”         |
| कल्याणकावलेहः .... १२४      | ”         |
| तक्रहरीतकी ....             | ”         |
| जातिफलादिचूर्णम् .... १२५   | ”         |
| तालीसाद्यं चूर्णम् ....     | ”         |
| चित्रकादिगुटिका .... १२६    | ”         |
| ग्रहणीकपाटरसः २२।२८         | ”         |
| त्रयोविंशस्तरंगः            |           |
| अथाशोरोरोगचिकित्सा .... १२७ | ”         |
| मूरणपिंडिका .... १२८        | ”         |
| कांकायनवटकः .... १२९        | ”         |
| समशर्करचूर्णम् ....         | ”         |
| चतुःसप्तो मोदकः ....        | ”         |
| अर्शःकुठाररसः .... १३३      | ”         |
| बालवद्धरसः ....             | ”         |
| नित्योदितरसः २३।५९          | ”         |
| चतुर्विंशस्तरंगः            |           |
| अथाजीर्णचिकित्सा .... १३४   | ”         |
| संजीवनीगुटिका .... १३५      | ”         |
| विषूचिकांजनम् ....          | ”         |
| अग्निमुस्तचूर्णम् ....      | ”         |
| हिंम्वष्टकम् .... १३६       | ”         |

| विषयः                  | पृष्ठांकः |
|------------------------|-----------|
| वृद्धवैश्वानरचूर्णम्   | .... १३६  |
| लघुवैश्वानरचूर्णम्     | .... "    |
| लवणभास्करचूर्णम्       | .... "    |
| शंखद्रावरसः            | .... १३७  |
| क्रव्यादरसः            | .... "    |
| बृहत्क्रव्यादरसः       | .... १३८  |
| शंखवटी                 | .... १३९  |
| भस्मकरोगनिदानचिकित्सा  | १४०       |
| अजीर्णरोगः             | .... १४१  |
| अग्निकुमाररसः          | .... "    |
| पाशुपतास्त्रो रसः      | .... "    |
| आदित्यरसः              | .... १४२  |
| अग्निमुखोरसः           | .... "    |
| अजीर्णारिरसः           | .... १४३  |
| चंडाग्रिरसः            | .... "    |
| अथ कृमिचिकित्सा        | .... "    |
| विडंगादितैलम्          | .... १४४  |
| रसादिलेपः              | .... १४५  |
| कृमिमुद्गररसः          | २४।१३ "   |
| <b>पंचविंशस्तरंगः</b>  |           |
| अथ पांडुः              | .... "    |
| आमलक्यवलेहः            | .... १४६  |
| मवायसं चूर्णम्         | .... १४७  |
| मंहुवरवटकः             | .... "    |
| कुम्भाह्वयचूर्णम्      | .... "    |
| चंपकादिचूर्णम्         | .... १४८  |
| त्रैलोक्यनाथोरसः       | २५।३१ "   |
| <b>षड्विंशस्तरंगः</b>  |           |
| अथ रक्तपित्तरोगनिदानम् | १४९       |
| दूर्वाद्यं घृतम्       | .... १५०  |
| वासाहरीतकी             | .... "    |
| चंदनाद्यं चूर्णम्      | .... १५१  |

| विषयः                  | पृष्ठांकः      |
|------------------------|----------------|
| कूष्माण्डकम्           | .... १५१       |
| वासाखण्डः              | .... १५२       |
| खण्डखाद्यं लोहम्       | .... "         |
| रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो |                |
| रसः                    | २६।४९ .... १५४ |
| <b>सप्तविंशस्तरंगः</b> |                |
| अथ क्षयरोगनिदानम्      | .... "         |
| चतुर्दशांगलोहम्        | .... १५५       |
| च्यवनप्रासः            | .... "         |
| वासालेहः               | .... १५६       |
| तालीसाद्यं चूर्णम्     | .... "         |
| मृद्वीकासवः            | .... १५७       |
| वृहन्नवायसचूर्णम्      | .... "         |
| सितोपलाद्यं चूर्णम्    | .... "         |
| पिप्पल्याद्यरिष्टः     | .... १५८       |
| छागलाद्यं घृतम्        | .... "         |
| चंदनाद्यं तैलम्        | .... "         |
| अगस्त्यहरीतक्यवलेहः    | १५९            |
| कुमुदेश्वररसः          | .... १६०       |
| पंचामृततरसः            | .... "         |
| वसंतकुसुमाकररसः        | .... "         |
| मालतीवसंतः             | .... "         |
| रत्नगर्भपोटली रसः      | .... "         |
| खंडपिप्पल्यवलेहः       | .... १६२       |
| राजमृगांकरसः           | .... "         |
| सृगांकरसः              | .... १६३       |
| कनकमुंदरोरसः           | २७।८२ "        |
| <b>अष्टविंशस्तरंगः</b> |                |
| अथोरः क्षतचिकित्सा     | .... १६४       |
| एलाद्या गुटिका         | .... "         |
| द्राक्षाद्यं घृतम्     | .... १६५       |

| विषयः                       | पृष्ठांकः |
|-----------------------------|-----------|
| अथ कासरोगः ....             | १६५       |
| मरिचादिगुटिका ....          | "         |
| मागोत्तरवटकः ....           | १६६       |
| पर्पटीरसः ....              | "         |
| पारदादिचूर्णम् ....         | १६७       |
| कासघ्नीगुटिका ....          | "         |
| कफघ्नीगुटिका ....           | "         |
| कासकर्तरी २८।३९ ...         | "         |
| <b>एकोनत्रिंशस्तरंगः</b>    |           |
| अथ हिक्काचिकित्सा           |           |
| २९।१८ ....                  | १६८       |
| <b>त्रिंशस्तरंगः</b>        |           |
| अथ श्वासचिकित्सा ....       | १७०       |
| माङ्गीहरीतक्यवलेहः ....     | "         |
| श्वासकुठारो रसः ....        | १७१       |
| सोमनाथताम्रम् ३०।१२         | "         |
| <b>एकत्रिंशस्तरंगः</b>      |           |
| अथ स्वरभेदः ....            | १७२       |
| चव्याघो मोदकः ३१।४          | "         |
| <b>द्वात्रिंशस्तरंगः</b>    |           |
| अथारोचकचिकित्सा ३२।४        | "         |
| <b>त्रयास्त्रिंशस्तरंगः</b> |           |
| अथ छर्दिरोगचिकि-            |           |
| त्सा ३३।११ ....             | १७३       |
| <b>चतुर्त्रिंशस्तरंगः</b>   |           |
| अथ वृष्णाचिकि-              |           |
| त्सा ३४।११ ....             | १७४       |
| <b>पंचत्रिंशस्तरंगः</b>     |           |
| अथ मूर्छाचिकित्सा           |           |
| ३५।२ ....                   | १७६       |

| विषयः                       | पृष्ठांकः |
|-----------------------------|-----------|
| <b>षट्त्रिंशस्तरंगः</b>     |           |
| अथ पानात्ययचिकित्सा         |           |
| <b>सप्तत्रिंशस्तरंगः</b>    |           |
| अथ दाहचिकित्सा ३७।६         | १७८       |
| <b>अष्टात्रिंशस्तरंगः</b>   |           |
| अथोन्मादचिकित्सा ....       | १७९       |
| सिद्धार्थकाद्यगदः ....      | "         |
| कल्याणकं घृतम् ....         | १८०       |
| हिम्वाद्यं घृतम् ३८।२३      | १८१       |
| <b>एकोनचत्वारिंशस्तरंगः</b> |           |
| अथापस्मारः ....             | "         |
| करंजादिप्रयोगः ....         | १८२       |
| भैरवरसः ३९।१० ....          | "         |
| <b>चत्वारिंशस्तरंगः</b>     |           |
| अथ वातव्याधिः ....          | १८३       |
| मापादिसप्तकम् ....          | "         |
| रसोनसप्तकम् ....            | "         |
| रसोनपंचकम् ....             | १८४       |
| वातकर्पणविधिः ....          | "         |
| मापाद्यंतैलम् ....          | १८५       |
| महाबलातैलम् ....            | १८६       |
| मध्यमनारायणतैलम् ....       | १८७       |
| प्रसारणीतैलम् ....          | १८८       |
| महानारायणतैलम् ....         | १८९       |
| वृहन्मापादितैलम् ....       | १९०       |
| रास्नाद्योगुग्गुलुः ....    | १९१       |
| द्वात्रिंशको गुग्गुलुः .... | "         |
| त्रयोदशांगो गुग्गुलुः ....  | "         |
| योगराजगुग्गुलुः ....        | १९४       |
| वृहद्योगराजगुग्गुलुः ....   | १९५       |
| महारास्नादिः ....           | १९६       |

| विषयः                       | पृष्ठांकः |
|-----------------------------|-----------|
| वातनाशनोरसः .... १९७        |           |
| स्वच्छंदभैरवोरसः ४० । ३६ .. |           |

### एकचत्वारिंशस्तरंगः

|                            |     |
|----------------------------|-----|
| अथ वातरक्तचिकित्सा ....    | १९८ |
| नवकार्षिकः काथः ....       | १९८ |
| कैशोरको गुग्गुलुः ....     | १९८ |
| बृहन्मंजिष्ठादिः ....      | १९८ |
| लघुमंजिष्ठादिः ....        | १९८ |
| मंजिष्ठादिः ....           | १९८ |
| महातिक्तकं घृतम् ....      | २०० |
| बृहन्मरिचादितैलम् ....     | २०१ |
| पिण्डतैलम् ....            | २०१ |
| सर्वेश्वरोरसः ४१ । ३९ .... | २०१ |

### द्वाचत्वारिंशस्तरंगः

|                              |     |
|------------------------------|-----|
| अयामवातचिकित्सा ....         | २०२ |
| रास्त्रादिपंचकम् ....        | २०२ |
| रास्त्रादिसप्तकम् ....       | २०३ |
| रास्त्रादिः ....             | २०३ |
| सिंहनादगुग्गुलुः ....        | २०३ |
| महारसोनपिण्डः ४२ । ३० ॥ .... | २०३ |

### त्रयश्चत्वारिंशस्तरंगः

|                            |     |
|----------------------------|-----|
| अथ शूलचिकित्सा ....        | २०५ |
| लघुवैश्वानराष्टकम् ....    | २०६ |
| खंडपिप्पली ....            | २०६ |
| त्रिपुरभैरवोरसः ....       | २०७ |
| शार्दूलगुटिका ....         | २०७ |
| शूलगजकेसरी ....            | २०८ |
| अग्निमुखोरस ....           | २०८ |
| सूर्यप्रभावटी ४३ । २८ .... | २०८ |

### चतुश्चत्वारिंशस्तरंगः

|                     |     |
|---------------------|-----|
| अथ परिणामशूलम् .... | २०९ |
| क्षीरमण्डूरः ....   | २०९ |

| विषयः                     | पृष्ठांकः |
|---------------------------|-----------|
| तारामण्डूरः ....          | १९९       |
| शूलदावानलो रसः ४४ । १४ .. | १९९       |

### पञ्चचत्वारिंशस्तरंगः

|                            |     |
|----------------------------|-----|
| अथोदावर्तचिकित्सा ....     | २१० |
| नाराचकंचूर्णम् ....        | २१० |
| क्रव्यादो रसः ४५ । १७ .... | २१० |

### षट्चत्वारिंशस्तरंगः

|                              |     |
|------------------------------|-----|
| अथ गुल्मचिकित्सा ....        | २११ |
| मिश्रकः स्नेहः ....          | २१२ |
| नादेयोरसः ....               | २१२ |
| वज्रक्षारं ....              | २१३ |
| हिंवाद्यं चूर्णम् ४६ । २१ .. | २१३ |

### सप्तचत्वारिंशस्तरंगः

|                             |     |
|-----------------------------|-----|
| अथहृद्रोगचिकित्सा ४७ । ५ .. | २१४ |
|-----------------------------|-----|

### अष्टाचत्वारिंशस्तरंगः

|  |     |
|--|-----|
| अथ मूत्ररुचूर्चि-<br>कित्सा ४८ । २८ .... | २१५ |
|--|-----|

### एकोनपञ्चाशस्तरंगः

|                           |     |
|---------------------------|-----|
| अथ मूत्राघातचिकित्सा .... | २१७ |
| तद्रेदावातकुंडलिकादयः ..  | २१७ |
| चित्रकायं घृतम् ....      | २१८ |
| चंद्रकलारसः ४९ । ११ ..    | २१८ |

### पञ्चाशस्तरंगः

|                            |     |
|----------------------------|-----|
| अथाश्मरीचिकित्सा ....      | २१९ |
| वीरतर्वादिः ....           | २१९ |
| त्रिविक्रमो रसः ५० । ११ .. | २२० |

### एकपञ्चाशस्तरंगः

|                            |     |
|----------------------------|-----|
| अथ प्रमेहरोगचिकित्सा ..    | २२१ |
| इंद्रियशोधनम् ....         | २२१ |
| न्यग्रोधाद्यं चूर्णम् .... | २२१ |

| विषयः                  | पृष्ठांकः |
|------------------------|-----------|
| चन्द्रप्रभागुटिका .... | २२१       |
| पूगीपाकः ....          | २२२       |
| अपरःपूगीपाकः ....      | २२३       |
| धान्वन्तरं घृन्तम् ... | "         |
| मेघनादोरसः ....        | २२४       |
| हरिशंकरो रसः ....      | "         |
| वंगेश्वरोरसः ....      | "         |
| प्रमेहकुठारोरसः ५१।२९  | "         |

### द्वापञ्चाशस्तरंगः

|                      |     |
|----------------------|-----|
| अथमेदश्चिकित्सा ५२।६ | २२५ |
|----------------------|-----|

### त्रयःपञ्चाशस्तरंगः

|                        |     |
|------------------------|-----|
| अथोदरम् ....           | "   |
| पटोलाद्यं चूर्णम् .... | २२६ |
| नारायणचूर्णम् ....     | "   |
| विंदुघृतम् ....        | २२७ |
| क्रव्यादोरसः ....      | २२८ |
| उदरारिरसः ....         | "   |
| नाराचरसः ५३।२८         | "   |

### चतुःपञ्चाशस्तरंगः

|                           |   |
|---------------------------|---|
| अथ श्वयथुरोगचिकित्सा ५४।९ | " |
|---------------------------|---|

### पञ्चपञ्चाशस्तरंगः

|                           |     |
|---------------------------|-----|
| अथ मुष्कहृदिचिकित्सा ५५।९ | २२९ |
|---------------------------|-----|

### षट्पञ्चाशस्तरंगः

|                      |     |
|----------------------|-----|
| अथ व्रणचिकित्सा ५६।३ | २३० |
|----------------------|-----|

### सप्तपञ्चाशस्तरंगः

|                        |   |
|------------------------|---|
| अथ गंडमालाचिकित्सा २३१ |   |
| तुंडीतैलम् ....        | " |
| व्योपाद्यं तैलम् ....  | " |
| चुचुंदरीतैलम् ....     | " |
| सौभागजनम् ....         | " |

| विषयः                  | पृष्ठांकः |
|------------------------|-----------|
| अथ गर्गगडचिकित्सा .... | २३२       |
| अथाग्रथिचिकित्सा ५७।२३ | "         |

### अष्टपञ्चाशस्तरंगः

|                        |     |
|------------------------|-----|
| अथ श्मीपदचिकित्सा .... | २३४ |
| विडंगाद्यंतैलम् ५८।८   | २३५ |

### एकोनपष्टितमस्तरंगः

|                         |   |
|-------------------------|---|
| अथविद्रधिचिकित्सा ५९।११ | " |
|-------------------------|---|

### पष्टितमस्तरंगः

|                          |     |
|--------------------------|-----|
| अथ व्रणशोथः ....         | २३७ |
| त्रिफलागुग्गुलुः ....    | २३९ |
| अमृताद्यो गुग्गुलुः .... | "   |
| जात्याद्यं घृतम् ....    | "   |
| स्वर्जिकाद्यं घृतम् .... | २४० |
| पुनर्नवाएकम् ....        | "   |
| अथ सद्योव्रणचिकित्सा     | "   |
| विपरीतमल्लं तैलम् ....   | २४१ |
| अथ भग्नानांचिकित्सा .... | "   |
| अथ नाडीव्रणचिकित्सा २४२  |     |
| सप्तांगगुग्गुलुः ....    | २४३ |
| निर्गुडोतैलम् ६०।६२      | "   |

### एकपष्टितमस्तरंगः

|                         |     |
|-------------------------|-----|
| अथ भगंदरचिकित्सा ....   | २४६ |
| रूपराजोरसः ....         | २४८ |
| नवकापिको गुग्गुलुः .... | २४९ |
| चित्रकाद्यं तैलम् ....  | २५० |
| करवीराद्यं तैलम् ....   | २५१ |
| रविताण्डवो रसः ....     | २५२ |
| अथोपदंशचिकित्सा ....    | २५६ |
| अथशूकदोषचिकित्सा ६१।३२  | "   |

### द्वापष्टितमस्तरंगः

|                       |     |
|-----------------------|-----|
| अथ कुष्ठचिकित्सा .... | २४७ |
|-----------------------|-----|

| विषयः  | पृष्ठांकः     |
|--|---------------|
| महाकषायः                                     | .... २४८      |
| सिंदूराद्यं तैलम्                            | .... २४८      |
| मोहेश्वरंघृतम्                               | .... २४८      |
| खदिराष्टकम्                                  | .... २४८      |
| अर्कतैलम्                                    | .... २४८      |
| आदित्यपाकतैलम्                               | .... २४८      |
| लघुमरिचाद्यतैलम्                             | .... २४८      |
| बोल्लजलम्                                    | .... २४८      |
| महाभल्लातकः                                  | .... २४८      |
| बृहन्मंजिष्ठादिः                             | .... २४८      |
| कुष्ठकालानलं तैलम्                           | .... २४८      |
| बृहत्सिंदूराद्यं तैलम्                       | .... २४८      |
| सैधवाद्यं घृतम्                              | .... २४८      |
| तालम्  | .... २४८      |
| महातालेश्वररसः                               | .... २४८      |
| कुष्ठकुठारो रसः                              | ६२।२१ २४८     |
| त्रयःपष्टितमस्तरंगः                          |               |
| अथ शीतपित्तोददोत्कोष्ठचि-<br>कित्सा ६३।४.... | २४८           |
| महचतुःपष्टितमस्तरंगः                         |               |
| ाम्लपित्तचिकित्सा....                        | २४८           |
| अप्यकेलखण्डः                                 | .... २४८      |
| लघुगविलासोरसः                                | .... २४८      |
| संडाण्डावलेहः                                | .... २४८      |
| त्रिपुडपिप्पली                               | .... २४८      |
| शार्ङ्गादिगुटिका, चन्द्रकलार-                |               |
| शूलोऽपि                                      | .... २४८      |
| स्त्रीमृतं चूर्णम्                           | .... २४८      |
| शतावरीघृतम्                                  | ६४।२८ २४८     |
| पञ्चपष्टितमस्तरंगः                           |               |
| अथ विसर्पचिकित्सा                            | .... २४८      |
| दशांगः                                       | ६५।४ .... २४८ |

| विषयः                            | पृष्ठांकः      |
|----------------------------------|----------------|
| पट्पष्टितमस्तरंगः                |                |
| अथ विस्फोटचिकित्सा               | ६६।५ २४९       |
| सप्तपष्टितमस्तरंगः               |                |
| अथ स्नायुकचिकित्सा               | .... २४९       |
| अथ ममूरिकाचिकित्सा               | २४९            |
| अमृतादिः                         | .... २४९       |
| दशांगलेपः                        | ६७।११ .... २४९ |
| अष्टपष्टितमस्तरंगः               |                |
| अथ क्षुद्ररोगपरिगणनचिकि-<br>त्सा | .... २४९       |
| हरिद्रादितैलम्                   | .... २४९       |
| मंजिष्ठाद्यं तैलम्               | ६८।३६ २४९      |
| एकोनसप्ततितमस्तरंगः              |                |
| अथ मुखरोगचिकित्सा                | .... २४९       |
| खदिराद्यं तैलम्                  | .... २४९       |
| कालकचूर्णम्                      | .... २४९       |
| पीतकं चूर्णम्                    | .... २४९       |
| जात्यादिकवलः                     | .... २४९       |
| कुंकुमाद्यं तैलम्                | .... २४९       |
| खदिरगुटिका                       | ६९।३० .... २४९ |
| सप्ततितमस्तरंगः                  |                |
| अथ कर्णरोगचिकित्सा               | २५०            |
| क्षारतैलम्                       | .... २५०       |
| कर्णामृतं तैलम्                  | .... २५०       |
| हिङ्गवाद्यं तैलम्                | .... २५०       |
| अपामार्गतैलम्                    | .... २५०       |
| शंवूकतैलम्                       | .... २५०       |
| गन्धकतैलम्                       | .... २५०       |
| लवङ्गक्षारतैलम्                  | .... २५०       |
| शतावरी तैलम्                     | ७०।२०          |



विषयः पृष्ठांकः

### एकसप्ततितमस्तरंगः

|                         |     |
|-------------------------|-----|
| अथ नेत्ररोगचिकित्सा     | २७३ |
| रसादिवर्तिः ....        | १   |
| जीवंत्याद्यं घृतम् .... | १   |
| उपचारकल्पना ....        | १   |
| पटोलाद्यं घृतम् ....    | २७४ |
| उपनाहः ....             | १   |
| यष्टीकायः ....          | २७५ |
| महात्रिफलकंघृतम् ....   | १   |
| लघुत्रिफलाघृतम् ....    | १   |
| वासकादिकायः ....        | २७६ |
| पृथुवासादिः ....        | २७७ |
| पटोलादिर्गणः ....       | १   |
| चन्द्रोदयावर्तिः ....   | २७८ |
| नेत्रसंजीवनी शला-       |     |

का ७१।६७ .... २८०

### द्वासप्ततितमस्तरंगः

|                         |     |
|-------------------------|-----|
| अथ नासारोगचिकित्सा      | २८१ |
| चित्रकहरीतकी ....       | १   |
| हिङ्वादितैलम् ....      | २८२ |
| कट्फलादिचूर्णकायः ७२।१४ | १   |

### त्रिसप्ततितमस्तरंगः

|                         |     |
|-------------------------|-----|
| अथ शिरोरोगचिकित्सा      | १   |
| स्मरफलादिघमनम् ....     | २८२ |
| अर्यमेदः ....           | १   |
| पद्मिन्दुतैलम् ....     | १   |
| केशरोहणम् ....          | २८४ |
| केशरंजनम् ....          | १   |
| विडङ्गाद्यं तैलम् ७३।२६ | २८५ |

### चतुःसप्ततितमस्तरंगः

|                     |     |
|---------------------|-----|
| अथ प्रदररोगचिकित्सा | १   |
| जीरकावलेहः ....     | २८६ |

विषयः पृष्ठांकः

गुह्यरोगादिः ७४।१५॥ २८७

### पञ्चसप्ततितमस्तरंगः

|                                     |     |
|-------------------------------------|-----|
| अथ गर्भस्थित्युपायाः ....           | १   |
| गर्भनिवारणोपायः ....                | २८८ |
| गर्भसंरक्षणम् ....                  | २८९ |
| मूढगर्भचिकित्सा ....                | २९० |
| गर्भावष्टमकं त्रिंशत्ख्ययंत्रम् २९१ |     |
| (सूतिकादौपे) ....                   | २९२ |
| हेमसुंदरतैलम् ....                  | १   |
| कनकसुंदरतैलम् ....                  | २९२ |
| चक्रकाञ्जिकम् ....                  | १   |
| सौभाग्यशुण्ठी ....                  | १   |
| दशमूलादिः ....                      | २९३ |
| सहचरादिः कायः ....                  | १   |
| निर्गुब्बादिः कायः ....             | १   |
| अनुमृता बृहत्सौभाग्यशुण्ठी          | १   |
| प्रतापलंकेश्वररसः ७५।६९             | १   |

### षट्सप्ततितमस्तरंगः

|                         |     |
|-------------------------|-----|
| अथ स्त्रीवराङ्गचिकित्सा | २९३ |
| योनिलोमनिवारणम् ७६।४    | १   |

### सप्तसप्ततितमस्तरंगः

|                                   |    |
|-----------------------------------|----|
| अथ घालरोगचिकित्सा                 | ६  |
| अष्टमंगलं घृतम् ....              | २७ |
| अष्टपंक्त्युद्धर्तनम् ....        | १८ |
| अश्वगंधादि घृतम् ....             | १९ |
| लाक्षादितैलम् ....                | ३२ |
| दिवसमासवर्षप्रवृत्त्याग्रहजुष्टम् | ३  |
| कारः तत्रमन्त्रः ७७।१५            | ६  |

### अष्टसप्ततितमस्तरंगः

|                     |     |
|---------------------|-----|
| अथ विषचिकित्सा .... | ३०२ |
| सर्पविषम् ....      | १   |

| विषयः                   | पृष्ठांकः |
|-------------------------|-----------|
| दृष्टिकविषयम्           | .... ३०३  |
| कृत्रिमविषयम्           | .... ३०४  |
| श्वानविषयम्             | .... ३०४  |
| पिडिकामक्षिकादिविषयम्   | ३०५       |
| वरटीविषयम्              | .... ३०५  |
| भ्रमरविषयम्             | .... ३०५  |
| मूषकविषयम्              | .... ३०५  |
| मंडूकविषयम्             | .... ३०५  |
| स्त्रीबद्धविषयम्        | .... ३०५  |
| शृंगिमत्स्यविषयचिकित्सा | ३०५       |
| पिपीलिकाविषयम्          | .... ३०५  |
| शतपदी ( गोम )विषयम्     | ३०५       |
| लूताविषयम्              | ६८।३३ ३०५ |
| एकोनाशीतितमस्तरंगः      |           |
| अथ रसायनप्रकरणम्        | ७९।२१ ३०५ |
| अशीतितमस्तरंगः          |           |
| अथवाजीकरणतन्त्रम्       | ३०८       |
| कामदेववटी               | .... ३१०  |
| महासुगंधितैलम्          | .... ३११  |
| कामदेवचूर्णम्           | .... ३१२  |
| गन्धापाकः               | .... ३१२  |
| नमंजरीवटिका             | .... ३१३  |

| विषयः                        | पृष्ठांकः  |
|------------------------------|------------|
| कपिकच्छुपाकः                 | .... ३१४   |
| कूष्मांडपाकः                 | .... ३१४   |
| गोक्षुरपाकः                  | .... ३१५   |
| अथ वीर्यस्तंभनम्             | .... ३१५   |
| सौगतशुटिका                   | .... ३१६   |
| महायोगः                      | .... ३१७   |
| रसरराजविधिः                  | .... ३१७   |
| चंद्रोदयोरसः मकरध्वजः        | ३१८        |
| अपरो रसरराजः                 | .... ३१९   |
| लेपवटी                       | .... ३२०   |
| अथ लिङ्गवृद्धिकरणम्          | .... ३२१   |
| अथ लिङ्गस्थूलीकरणम्          | ३२१        |
| नितंबकर्णस्तनलिङ्गवृद्धिः    | ३२२        |
| योनि संकोचनम्                | .... ३२२   |
| रोमाभावापधम्                 | ८०।११६ ३२२ |
| एकशीतितमस्तरंगः              |            |
| अथ ऋतुचर्या                  | .... ३२३   |
| पट्टतु हरीतकी                | .... ३२३   |
| वसन्ताद्यृतूनां स्वरूपसेवनप- |            |
| थ्यविचारः                    | .... ३२३   |
| ग्राह्याग्राह्यवैद्यविचारः   | ३२५        |
| ग्रन्थान्तमंगलाचरणम्         | ८१।१९ ३२५  |

इति योगतरंगिणीविषयानुक्रमणिकासमाप्ताः

गंगाविष्णुश्रीकृष्णदास

श्रीवेंकटेश्वरछापखाना

(मुंबई.)

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

## ॥ अथ योगतरंगिणी ॥



प्रथमस्तरंगः ।

कपोलैर्विगलहोलदानपानीयपिच्छिलम् ॥

भ्रमद्भ्रमरझंकारं वन्देहं हिरदाननम् ॥ १ ॥

आपस्तं वस्यारवेहोपनाम्नो

धाम्नो भासां कोडपल्लीभवस्य ॥

तैलंगस्य प्रीतिभाजो गिरीशे

काशीवासं कुर्वतो भूरिकीर्तैः ॥ २ ॥

राज्ञां मान्यस्यात्र सिंगणभट्ट-

स्यासीत्पुत्रो बह्वभो वेदविद्यः ॥

तस्यासीरन्सूनवोऽमी त्रिमहो

रामो गोपश्चेति नाम्ना त्रयोऽपि ॥ ३ ॥

तेषु त्रिमहभट्टेन नाम्ना योगतरंगिणी ॥

चिकित्सालिख्यते भूरिग्रंथेभ्यः स्वपरार्थिना ॥ ४ ॥

देहादुत्पद्यते पुंसः पुरुषार्थचतुष्टयम् ॥

न नीरोगः स कुत्रापि तच्छान्तिस्तु चिकित्सया ॥ ५ ॥

क्वचिद्धर्मः क्वचिन्मैत्री क्वचिदर्थः क्वचिद्यशः ॥

कर्माभ्यासः क्वचिच्चेति चिकित्सा नास्ति निष्फला ॥ ६ ॥

अतो मम श्रमस्तोमश्चिकित्सायां जयत्ययम् ॥

संक्षिप्ता रसयुक्तं संहिता भुवि जृम्भताम् ॥ ७ ॥

१ कपोलयोर्विगलम् पक्ष्मं च यद्दानपानीयं दानोदकं तेन पिच्छिलं वि-  
ष्णम् । २ हिरदानं गणेशम् । ३ धर्मार्थकाममोक्षस्वरूपम् ।

रोगपङ्कार्णवे मग्नं यः समुद्धरते नरम् ॥  
 कस्तेन न कृतो धर्मः कां च पूजां न सोर्हति ॥ ८ ॥  
 जन्मान्तरकृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते ॥  
 तच्छांतिरौषधैर्दानैर्जपहोमसुरार्चनैः ॥ ९ ॥

हारीतात्

शल्पं शालाक्यमगदं कुमरभरणं तथा ॥  
 कायभूतक्रिया वाजीकरणं च रसायनम् ॥  
 अष्टावंगानि तस्याहुश्चिकित्सा यत्र संस्थिता ॥ १० ॥  
 वैद्यो व्याध्युपसृष्टश्च भेषजं परिचारकः ॥  
 एते पादाश्चिकित्सायाः कर्मसाधनहेतवः ॥ ११ ॥  
 ज्ञातेशास्त्रः शुचिः गूरो लघुहस्तः कृतोद्यमः ॥  
 द्वैष्टकर्मा कृती धर्मी स भिषक्पाद उच्यते ॥ १२ ॥  
 आढ्यो रोगी भिषग्बन्धो दक्षिणो ज्ञापको रुजाम् ॥  
 अस्त्रलक्षणः पथ्यशीलः पादोऽपरो मतः ॥ १३ ॥  
 दोषकालवयोदेशमात्राप्रकृतिरेतसाम् ॥  
 सात्त्विकं पद्मेपजं तत्स्यात्परः पादश्चिकित्सते ॥ १४ ॥  
 अयादाशी जितस्वप्नो हितो धर्मार्थकोविदः ॥  
 बहुदर्शी कर्मदक्षः पादः स्यात्पद्मिन्नायकः ॥ १५ ॥  
 घातः पित्तं कफश्चेति त्रयो दोषाः समामृतः ॥  
 भ्रंति देहं पिरुतास्तेऽपिरुता पथयन्ति च ॥ १६ ॥

चयप्रकोपोपशमा वायोर्ग्रीष्मादिषु त्रिषु ॥  
वर्षादिषु च पित्तस्थ श्लेष्मणः शिशिरादिषु ॥ १७ ॥  
ते' व्यापिनोपि हृन्नाभ्योरधोमध्योर्ध्वसंस्थिताः ॥  
वयोहोरात्रभुक्तानामन्तर्मध्यादिनाः क्रमात् ॥ १८ ॥  
जैंगलं वातभूयिष्ठमनूपं च कफोन्नतम् ॥  
साधारणं सममलं त्रिधा भूदेशमादिशेत् ॥ १९ ॥  
मात्रा चतुर्विधा ज्ञेया समा मंदा च तीक्ष्णका ॥  
विषर्मा चेति संप्रोक्ता तत्तद्बह्विविशेषतः ॥ २० ॥  
शुक्रान्तवस्थैर्जन्मोदौ विषेणैव विषक्रमे ॥  
'तैः स्युः प्रकृतयस्तिस्त्रो हीनमध्येोत्तमाः पृथक् ॥ २१ ॥  
मलायत्तं वलं पुंसां शुक्रायत्तं तु जीवितम् ॥  
अतश्चिकित्सितं कार्यं संरक्ष्य मलरेतसी ॥ २२ ॥  
जातमात्रश्चिकित्स्यस्तु नोपेक्ष्योऽल्पतया गदः ॥  
बह्विशस्त्रविषैस्तुल्यः स्वैल्पोपि विकरोत्ययम् ॥ २३ ॥  
यावज्जीवं चिकित्स्यस्तु नोपेक्ष्यो भिषंजा गदी ॥  
कदाचिदैवयोगेन दृष्टारिष्टोऽपि जीवति ॥ २४ ॥  
चिकित्सितं शरीरं यो न निष्क्रीणाति दुर्मतिः ॥  
सं यत्करोति सुकृतं तत्सर्वं भिषंगेश्रुते ॥ २५ ॥

१ वातादयः । २ अने वायुः मध्ये पित्तं आदौ कफः इति क्रमादवस्था-  
दिषु ज्ञेय । ३ जलवृक्षरहितं देशं । ४ जलवृक्षबहुलं देश । ५ कफयु-  
क्त । ६ इति यत्र समं तत्साधारणम् । ७ समगतादिक । ८ न्यूनाधिका ।  
९ यहदग्निस्तद्वन्मात्रा देया । १० वीर्यरजःस्थे । ११ ऋतुसमये ।  
१२ वातादिभिः । १३ वातेन हीना पित्तेन मध्यमा कफेन उत्तमा प्रकृतिर्ज्ञेया ।  
१४ स्वल्पोपि दोष । १५ वैद्येन । १६ अरिष्टो मृत्युसूचकः इति । १७ न  
मोचयेति । १८ पुमान् । १९ इत्यनेन पापं न ज्ञेय । २० वैद्यः  
२१ उपायुक्ते ।

नैव कुर्वीत लोभेन चिकित्सापुण्यविक्रयम् ॥  
 ईश्वराणां वसुमतां लिप्सेतार्थं तु वृत्तये ॥ २६ ॥  
 रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम् ॥  
 ततः कर्म भिषक्पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥ २७ ॥  
 कर्मप्रकोपजाः केचित्केचिदोषप्रकोपजाः ॥  
 कर्मदोषोद्भवाः केचिन्मनःकायस्थिता गदाः ॥ २८ ॥  
 कर्मक्षयात्कर्मकृता दोषा ज्ञात्स्वयमौषधैः ॥  
 कर्मदोषोद्भवा यांति कर्मदोषं व्याख्यातव्यम् ॥ २९ ॥  
 यथाशास्त्रं तु निर्णीतो यथा व्याधिश्चिकित्सितः ॥  
 न शमं याति यो व्याधिः स ज्ञेयः कर्मजो बुधे ॥ ३० ॥  
 पुण्यैश्च भेषजैः शांतास्ते ज्ञेयाः कर्मदोषजाः ॥  
 विज्ञेया दोषजास्त्वन्ये केवला वाध संकराः ॥ ३१ ॥  
 रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता ॥  
 निर्जागंतुविभेदेन ते च रोगा द्विधा मताः ॥ ३२ ॥  
 याभिः क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातवः समाः ॥  
 सां चिकित्सा विकाराणां कर्म तद्भिषजां मतम् ॥  
 स्वहेतूपचिता दोषाः सामां रसपथानुगाः ॥  
 रसमामं पाचयित्वा कुर्युर्दोषान् पृथक्पृथक् ॥ ३३ ॥

१ धनवतां । २ धनं । ३ यो रोगस्तस्यौषधः । ४ कुटार्शआदिका  
 ५ ज्वराऽतीसारद्विकाः । ६ प्रमेहधासादिकं । ७ नाशं । ८ यथा  
 ९ यो व्याधिः स निश्चितः । १० औषधैः । ११ धानपित्तकफाः ।  
 रसमूहः । १३ वातादीनां यदसमत्वं तदेव रोगत्वं । १४ वातादीनां  
 य समत्वं तदेव अरोगत्वमिति श्रेयम् । १५ एकोत्तरं मृत्युश्चातमपि  
 मन्त्रक्षते तेष्वेकः बालसंयुक्तः दोषास्त्रागनुजाः स्मृता इति यद्य  
 २६ उपायैः । २७ कर्मिणेति श्रेयः । २८ स्वस्वकारणेन संचिताः । १  
 तादयः । २० आमसहिताः ।

स एव पाचनो ज्ञेयो न च दोषान्विपाचयेत् ॥  
 दोषपाकाद्वातुपाकान्मरणं सर्वथा नृणाम् ॥ ३५ ॥  
 विकारनामा कुशलो न जिह्नीयात् कदाचन ॥  
 न हि सर्वविकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवास्थितिः ॥ ३६ ॥  
 दर्शनस्पर्शनप्रश्नैर्व्याधिर्ज्ञानं त्रिधा मतम् ॥  
 आयुरादि दृशो स्पर्शाच्छीतादि प्रश्नतोऽपरम् ॥ ३७ ॥  
 स्वभावाद्व्याधयः साध्याः केचिज्जाप्या उपेक्षिताः ॥  
 साध्या याप्यत्वमायांति याप्याश्चासाध्यतां तथा ॥ ३८ ॥  
 निवृत्तोपि पुनर्व्याधिः स्वल्पेनायाति हेतुना ॥  
 दोषैर्मागीकृते देहे खेपु सूक्ष्म इवानलः ॥ ३९ ॥  
 व्याधेस्तत्त्वपरिज्ञानं वेदनायाश्च निग्रहः ॥  
 एतद्वैद्यस्य वैद्यत्वं न वैद्यः प्रभुरायुषः ॥ ४० ॥  
 नास्ति रोगो विना दोषैर्यस्मात्तस्माद्विचक्षणः ॥  
 अनुक्तमपि दोषाणां लिंगैर्व्याधिमुपाचरेत् ॥ ४१ ॥  
 यथाह तीसटाचार्यः ॥

वातस्य पित्तस्य कफस्य चापि  
 विकारिणः कायवृत्तां हि काये ॥  
 प्रकोपहेतुः कुपितस्य लिंगं  
 चिकित्सिते चेति निरूपणायम् ॥ ४२ ॥

लक्षैस्तिक्तैः कषायैः कटुभिरनशनैर्वर्गसंधारणैश्च  
 व्यायामैश्च व्यवायैः प्रतारणवलंबद्विग्रहैर्जागरैश्च ॥

१ पाचनेर्ज्ञेय इति वा पाचः २ वैद्यः ३ लज्जां न कुर्यात् ४ निधत्ता ५ स्वे-  
 १ ललाटे न ज्ञायति वक्षः इत्यादिकं ज्ञानं दर्शनेन भवति ६ संत्यक्ताः ७ अ-  
 हेतकारणेन ८ चिद्रेषु ९ जानीयात् १० देहिनां ११ निदानम् १२ संधा-  
 रणैः १३ तंप्पैः १४ मूत्रादिमहणैः १५ जलप्रावः १६ बलिना सह युद्धैः ।



श्यामानीवारकंगुप्रभृतिभिरशनैरुल्लसद्भिः पयोदै-  
रन्ने जीर्णे च जंतोरिति भवति तनौ मारुतस्य प्रकोपः २३  
कट्वम्लोष्णविदाहि तीक्ष्णलवणक्रोधोपवासातप-  
स्त्रीसंपर्कतिलातैसीदधिसुरासुक्कारनालादिभिः ॥  
भुक्ते जीर्यति भोजने च शरदि ग्रीष्मे सति प्राणिनां  
मध्याह्ने च तथार्धरात्रसमये पित्तप्रकोपो भवेत् ॥ ४४ ॥

गुरुमधुरातिशीतदधिदुग्धं नवान्नपय-  
स्त्रिलविकृतीक्षुभक्षणातिदिवाशयनैः ॥  
सैमविप्रेमाशनाध्यसनपायसपिष्टरुतै-  
रपि च कफः प्रकुप्यति मधौ च दिनादिषु च ॥ ४५ ॥  
इति प्रकोपकारणैः प्रकोपमेत्यसर्वगाः ॥  
समीरणादयस्तनौ रुजः सृजंति जंतुषु ॥ ४६ ॥

वातपित्तकफकोपलक्षणं  
सूचितं यदिह सूत्रसंग्रहे ॥  
प्रोच्यते तदिह सांप्रतं मया  
रूपरीक्षणमैनेन कारयेत् ॥ ४७ ॥

दृशि शिरसि च शंखश्रोत्रनेत्रांतरेषु  
भुवि दृदि हनुमन्यास्कंधमूर्धोर्ध्वसंधौ ॥  
रुगतिनिशि दिवाल्पा स्यादकस्मात्प्रशान्ता  
भवति हि भुजजंघास्तब्धसंकोचता च ॥ ४८ ॥

१ यथा कुर्वद्भिः । २ मेघैः । ३ लंपनम् । ४ खोतगमः । ५ अल-  
सी । ६ कांन्याभेदः । ७ कांजी । ८ भोजने कृते सति । ९ पाकं  
गच्छति सति । १० मयाघृतसेवनात् । ११ यस्मिन् समये भोजनं करो-  
ति तस्मिन् समये कफप्रकोपो ज्ञेयः । १२ भुक्तोपरि यद्भोजनं तत् । १३ दु-  
र्गन्धिः । १४ कथ्यते । १५ अधुना । १६ लक्षणम् ।

कटिविटपयकृत्सुक्कोभिं च शीहि पृष्ठे  
 जठरवृषणवक्षःकुक्षिकक्षांतरेषु ॥  
 प्रसरति गुरुशूलं नाभिवस्तिस्तनेषु  
 त्रिकंगुदवलिगुह्योपांतपक्षद्वयेषु ॥ ४९ ॥  
 वदनविरसता स्याद्वर्चसः कर्कशत्वं  
 भवति वपुषि कार्श्यं रात्रिनिद्रानिवृत्तिः ॥  
 त्वचि च परुषता स्यात्स्याच्च वैषम्यमग्ने-  
 रिति पवनविकारे लक्षणं प्रोक्तमेतत् ॥ ५० ॥  
 भ्रममदमुखशोषस्वेदसंतापमूर्च्छा  
 मुखनयननखत्वङ्मूत्रविट्पीतता च ॥  
 प्रलपनमतिसारश्चारुचिश्च ज्वरश्च  
 तृडतिशिशिरतेच्छा पित्तरोगस्य लिङ्गम् ॥ ५१ ॥  
 अङ्गस्य गौरवमपाटवमोन्तराग्ने-  
 रंक्लेशता च हृदयस्य मुखप्रसेकः ॥  
 आलस्यमास्यमधुरत्वमकांडकंडू-  
 रापांडुता नयनयोरतिरोमहर्षः ॥ ५२ ॥  
 प्रज्ञोष्णतिर्वमथुपीनसकासनिद्रा-  
 तंद्रादयश्चूलचुलायनमुल्वणं च ॥  
 स्यादोष्ठकंठरसनारंदमूलतालु-  
 घ्राणोक्षणश्रवणशङ्कुलिकान्तरेषु ॥ ५३ ॥

१ तालुदेशे । २ बहुशूलं । ३ नाभेरधोभागः । ४ पृष्ठवंशाधोभागः ।  
 ५ निर्वहयं । ६ कठोरत्वं । ७ कठोरता । ८ मंदगतिः । ९ अतिशीत-  
 लेष्णः । १० मन्दत्वं । ११ जठराग्नेः । १२ उपस्थितवमनता । १३ ला-  
 लाजावः । १४ अनायासकण्डूः । १५ संज्ञानाशः । १६ स्फुरणम् ।  
 १७ निद्रा । १८ दन्तमूलम् । १९ नेत्रे । २० कर्णौ । २१ कक्षा ।

श्लेष्मोद्भवे भवति लिङ्गमिदं विकारे

संसर्गजेषु च गदेषु भवेद्धिदोषम् ॥

जंतोरिदं पवनपित्तकफप्रकोप-

लिङ्गं त्रिदोषजरुजि प्रविभज्य योज्यम् ॥ ५४ ॥

॥ उक्तं च ॥

कफवातौ वातकफौ वातः पित्तं च वृद्धिसमौ ॥

त्रिभिराद्यैस्त्रिभिरंत्यैस्त्रिभिरोद्यपरैस्तदन्यैश्च ॥ ५५ ॥

अंत्याद्यावाद्यमाद्यांत्यावंत्यं कोपसमौ मलम् ॥

मध्यमध्येतरौ मध्यं प्रयोगान्नयतस्त्रिकौ ॥ ५६ ॥

आद्यमध्यं नयत्यंत्यं मधुराद्याः शमेतरौ ॥

आद्यं मध्यांत्यमाद्यं च मध्यमांतिममंतिमम् ॥ ५७ ॥

आद्यमध्यं मध्यमांत्यमाद्यं मध्यांतिमं क्रमात् ॥

१ मधुराम्ललवणकटुतिक्तकपायाः षड्रसाः तत्र त्रिभिराद्यैः मधुराम्ललवणैः कफो वृद्धिं याति वातः शमं याति इत्यर्थः । २ अंत्यैस्त्रिभिः कटुतिक्तकपायैः वातः वृद्धिं याति कफः शमं याति इत्यर्थः । ३ आद्यपरैः आद्यौ मधुरस्तस्मात्परैरम्ललवणकटुकैस्त्रिभिः पित्तं वृद्धिं याति । तदन्यैः मधुरतिक्तकपायैः पित्तं शमं याति । ४ अंत्यत्रिकः कटुतिक्तकपायः आद्यत्रिकः मधुराम्ललवणः एतौ त्रिकौ आद्यं मलं कोपशमौ नयतः । अन्येन कोपः । आद्येन शमः । ५ आद्यत्रिकः मधुराम्ललवणः अंत्यः कटुतिक्तकपायः एतौ क्रमेण अंत्यं मलं कफं कोपशमं नयतः । ६ मध्यमं मध्यौ च मध्यमं मध्यौ विद्येते यस्मिन्तः । त्रिकस्थो मध्योऽम्लः षड्रस रसेषु मध्यौ लवणकटुः अयमम्ललवणकटुकाण्यो मध्यमत्रिकः इतरोऽस्मादन्यमधुरतिक्तकपायाद्य एतौ मध्यं मलं पित्तं कोपशमौ नयतः । अम्ललवणकटुकैः कोपः मधुरतिक्तकपायैः शमः । ७ मधुराद्याः षड्रसाः तेषु मधुरः आद्यं वायुं मध्यं पित्तं शमं नयति । ८ अंत्यं कफं कोपं नयति । अन्यः आद्यं वायुं शमं नयति । ९ मध्यान्त्यं पित्तकफौ कोपं नयति । लवणः आद्यं वायुं शमं नयति । १० मध्यमांतिमं पित्तकफौ कोपं नयति । कटुः अंतिमं कफं शमं नयति । ११ आद्यं वातं मध्यं पित्तं कोपं नयति । १२ तिक्तः मध्यमान्त्यं पित्तकफौ शमं नयति ।

आद्यं दोषं रसाः प्रायः प्रयोगपरिशीलिताः॥५८॥ युग्मं॥

रात्र्यहोरादिमध्यांते पुनश्चांत्याद्यमध्यमे ॥

मध्ये चांते तथादौ च दोषैर्नाल्पातिरुक् क्रमात् ॥ ५९ ॥

भुक्ते जीर्यति जीर्णेने जीर्णे भुक्ते च जीर्यति ॥

जीर्णे जीर्यति भुक्ते च दोषैर्नाल्पातिशूलरुक् ॥ ६० ॥

कर्फपित्तानिलाः पूर्वमध्यांतेषु व्यवस्थिताः ॥

देहाहोरात्रिवयसां संधिष्वपि कफानिलौ ॥ ६१ ॥

आदावंते च दौर्वल्यं विसर्गादानयोर्नृणाम् ॥

१ आद्यं वायुं कोषं नयति कषायः मध्यान्तिमं पित्तकफौ शमं नयति ।  
 २ लक्षणादिना अभ्यस्ताः । ३ रात्रिष्व अहश्च रात्र्यहनी तयोरादिमध्यतिषु  
 भागेषु वातेन हृक् नाल्पातिविशिष्टा भवेत् । रात्र्यहोरादौ न मध्येऽल्पा रा-  
 त्र्यन्ते अति अत्यन्तं । रात्र्यहोरादौ पित्तेन हृक् न भवति अन्ते भागे  
 ऽल्पा मध्ये भागे अत्यन्तं भवति । तथा रात्र्यहोर्मध्ये चांति तथादौ च कफेन  
 हृक् सर्वरोगग्रहणाच्चाल्पातिविशिष्टा भवति । ४ अन्ते भुक्तेऽभ्यवहते सतिजी-  
 र्यति पाकं गच्छति जीर्णे पाकं गते सनि अन्न इति सर्वत्र सवन्ध्यते तेनाय-  
 मर्थः । भुक्तेऽन्ते वातशूलरुक् न भवति जीर्यति अल्पा ईपत् भवति जीर्णे  
 चातिभवति । पित्तशूलरुक् जीर्णेने न भुक्तेऽल्पा जीर्यत्यत्यन्तं भवति ।  
 श्लेष्मरुक् जीर्णेने न जीर्यत्यल्पा भुक्ते चाति भवति इति । ५ क-  
 फपित्तानिलाः देहाऽहोरात्रिवयसां पूर्वमध्यांतेषु यथासंख्यं व्यवस्थिताः ।  
 देहस्य पूर्वभागे शिर आरभ्य वक्षोते कफः व्यवस्थितः । मध्ये आमाशय-  
 मारभ्य नाभ्यन्ते पित्तं व्यवस्थितं । अन्तेनाभेरधोभागे वातो व्यवस्थितः ।  
 देहस्य शिरोमूलत्वादेवं भागकल्पना । अह्नस्त्रिधाविमक्तस्य पूर्वभागे कफः  
 मध्याह्ने पित्तं अपराह्णे वायुः । तथा रात्रिर्ज्या । वयसोपि पूर्वभागे वा-  
 ल्यावस्थायां कफः । मध्ये तरुणावस्थायां पित्तं । अन्ते वृद्धावस्थायां वा-  
 युः । देहाहोरात्रिवयसां संधिषु कफानिलावेव । देहस्य पूर्वभागमध्यभागयोः  
 सन्धौ ररःसंज्ञकः कफः । मध्यभागांतभागयोः सन्धौ पक्षाशयाख्ये वातः ।  
 एतच्च यथासंख्यमित्यावर्त्य लभ्यते । रात्र्या साकमहःसन्धौ प्रभातसंज्ञे । अह्ना  
 साकं रात्र्ये सन्धौ प्रदोपसंज्ञे यथाक्रमं कफवातो व्यवस्थितौ । बाल्यतारुण्ययोः  
 संधौ श्लेष्मा । तारुण्यवार्द्धक्ययोः सन्धौ वायुः इति व्याख्या कथिता । ६ विस-  
 र्गो दक्षिणायनं वर्षादयः त्रय ऋतवः । बलस्य विसर्जनाद्विसर्गश्चोच्यते । आ-

मध्ये मध्यं बलं त्वन्ते श्रेष्ठमादौ च निर्दिशेत् ॥ ६२ ॥

॥ किं चान्यदपि ॥

हेत्वादिरूपाकृतिसात्म्यंजाति-

भेदेः समीक्ष्यातुरसर्वरोगान् ॥

चिकित्सितं कर्षणबृंहणारूढं

कुर्वीत वैद्यो विधिवत्सुयोगैः ॥ ६३ ॥

दिव्यौषधीनां बहवः प्रभेदा

बृन्दारकाणामिव विस्फुरन्ति ॥

ज्ञात्वेति संदेहमपोस्य धीरैः

संभावनीया विविधप्रभावाः ॥ ६४ ॥

स्वाभाविकागन्तुककायिकान्तरा

रोगा भवेयुः किल कर्मदोषजाः ॥

तच्छेदनार्थं दुरितापहारिणः

दानः शिशिराद्याख्य ऋतवः उत्तरायणं । बलस्यादानादानं चोच्यते । एतयो-  
र्यथाक्रमे आदौ वर्षाख्ये ऋतौ अन्ते धर्मऋतौ नृणां बलहानि निर्दिशेत् तथा वि-  
सर्गस्य मध्ये शरदि आदानस्य मध्ये वसन्ते मध्यं बलं निर्दिशेत् । तथा वि-  
सर्गस्वप्ति हेमन्तर्तौ आदानस्यापि शिशिरे श्रेष्ठं अत्यन्तं बलं निर्दिशेत् । एतेन  
एतदुक्तं भवति ॥ विसर्गं यद्योत्तरं बलमभिवर्धते । आदाने यद्योत्तरं क्षीयते । तेन  
विसर्गस्य यावदाद्ये दिवसे बलः । तावदादानस्यान्ते दिने । यावत् द्वितीये दिने विस-  
र्गस्य तावदादानस्योपान्ते दिने । अनया युक्त्या विसर्गस्याद्ये ऋतौ वर्षाख्ये यावद्बले  
तावदादानस्यान्ते ऋतौ । विसर्गस्य मध्यर्तौ यावता तावदादानस्योपान्त्ये वस-  
न्तर्तौ । यावद्विसर्गस्यान्ते हेमन्तर्तौ तावदादानस्याद्ये शिशिराख्ये । आरोहावरो-  
हक्रमयान्तस्य वृद्धिक्षयौ भवतः ॥

१ निदानपूर्वकपोषशमसंप्राप्तय एतैर्भेदैः । २ अष्टौ ज्वरा इति । ३ दृष्टा ।  
कृपिपुटाख्यं । ४ तान् भेदान् । ५ दूरीकृत्य । ६ संयोजनीयाः । ७ औषधयः ।  
८ स्वाभाविका रोगाः क्षुत्पिपासादयः । आगन्तुकामूनाभिर्पणादयः । कायि-  
का अजीर्णादयः । आन्तराः मानसिकाः कामादय इति चतुर्धा । कर्मजाः दो-  
षजाः कर्मदोषजाः इति त्रिधा भवेयुः ।

श्रेयोमयान् योगवरान्नियोजयेत् ॥ ६५ ॥ इति शार्ङ्गधरात् ॥  
तत्र तावदनिलः शम्भवेति स्नेहवस्तिपेरिपेकनिरूहैः ॥  
भुक्तमात्रबलदेन नराणामोदनेन मृदुमांसरसेन ॥ ६६ ॥

द्राक्षयात्रिफलया त्रिवृता च  
स्त्रंसनेन रुधिरस्रुतिभिश्च ॥  
सर्पिषा च सितया पयसा च  
स्वादुना भवति पित्तनिवृत्तिः ॥ ६७ ॥  
लघनेन वसनेन यवान्न-  
प्राशनेन शिरसश्च विरैकैः ॥  
कट्फलादिकवलैरहिर्माभि-  
श्चान्निरत्र शम्भवेति कफश्च ॥ ६८ ॥  
इति सूत्रस्थाने चिकित्सा कलिकांतः ॥

इति योगतरंगिण्यां ग्रंथावतारिका नाम प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयस्तरंगः ।

॥ प्रथमं परिभाषा ॥

न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित् ॥  
अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥ १ ॥  
मानं च द्विविधं प्रोक्तं कालिङ्गं मागधं तथा ॥  
कालिङ्गान्मागधं श्रेष्ठमिति मानविदो विदुः ॥ २ ॥  
त्रसरेणुर्वुधैः प्रोक्तस्त्रिशता परमाणुभिः ॥  
त्रसरेणोस्तु पर्यायो नाम्ना वंशी निगद्यते ॥ ३ ॥

१ विरेचनं । २ निषेधः । ३ विरेचनं । ४ घृतेन । ५ दुग्धेन । ६ नवीन-  
यवभोजनेन । ७ नस्यकर्मभिः । ८ उष्णोदकैः । ९ पन्थात ।  
१० प्रमाणेन ।

जालांतरगतैः सूर्यकरैर्वशी विलोक्यते ॥  
 पङ्कशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः पङ्क्तिश्च राजिका ॥ ४ ॥  
 तिसृभी राजिकाभिश्च सर्पपः प्रोच्यते बुधैः ॥  
 यवोष्टसर्पपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम् ॥ ५ ॥  
 पङ्क्तिस्तु रक्तिकाभिः स्यान्मापको हेमधानकौ ॥  
 मापैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्धरणः स निगद्यते ॥ ६ ॥  
 टंकः स एव कथितस्तद्व्यं कोल उच्यते ॥  
 क्षुद्रेवो वटकश्चैव द्रङ्गणः स निगद्यते ॥ ७ ॥  
 कोलद्वयं च कर्पः स्यात्ता प्रोक्ता पाणिमानिका ॥  
 अक्षः पिचुः पाणितलं किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥ ८ ॥  
 विडालपदकं चैव तथा पोडशिका मन्ता ॥  
 करमध्ये हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥ ९ ॥  
 उदुंबरं च पर्यायैः कर्प एव निगद्यते ॥  
 स्यात्कर्पाभ्यामर्धपलं गुक्तिरष्टमिका तथा ॥ १० ॥  
 गुक्तिभ्यां च पलं ज्ञेयं मुपिरात्रं चतुर्थिका ॥  
 प्रकुञ्चः पोडशी विल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥ ११ ॥  
 पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतं च निगद्यते ॥  
 प्रसृतिभ्यामंजलिः स्यात्कुडवोर्धशरावकः ॥ १३ ॥  
 अर्धमानं च स ज्ञेयः कुडवाभ्यां च माणिका ॥  
 शरावोष्टपलं तद्वत् ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥ १४ ॥

१ यवचतुष्टयं । २ स एव मापकः पर्यायशब्देन हेमधानकौ निगद्यते ।  
 ३ क्षुद्रम इत्यपि पाठः । ४ कथिता । ५ मासेकीसरक । ६ सैवपर्या-  
 यशब्देन अटटंकमिता भुक्तिरिति । ७ पोडशटंकम् पलं शातव्यमिति शेषः ।  
 ८ द्वाविंशत्पलं प्रसृतिः ज्ञेयः । ९ चतुःषष्टिकानां टंकानामंजलिर्ज्ञे-  
 यः । १० अष्टाविंशच्छतोत्तरटंकानां माणिकेत्यर्थः । ११ निपुणैः ।

शरावाभ्यां भवेत्प्रस्थंश्चतुःप्रस्थैस्तथाढकम् ॥  
 भाजनं कांस्यपात्रं च चतुःषष्टिपलश्च सः ॥ १५ ॥  
 चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणो मतः ॥  
 उन्मानं च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसंज्ञकः ॥  
 द्रोणाभ्यां शूर्पकुंभौ च चतुःषष्टिशरावकः ॥ १६ ॥  
 शूर्पाभ्यां च भवेद्द्रोणी बाहुगोणी च सा स्मृता ॥  
 द्रोणीचतुष्टयं स्वारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः ॥ १७ ॥  
 चतुःसहस्रपलिका पणवत्यधिका च सा ॥  
 पलानां द्विसहस्रं च भार एकः प्रकीर्तितः ॥ १८ ॥  
 तुला पलशतं ज्ञेया सर्वत्रैव विनिश्चयः ॥  
 माषटंकाक्षविल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम् ॥ १९ ॥  
 राशिर्गोणी स्वारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥  
 गुंजादिमानमारभ्य यावत्स्यात्कुडवस्थितिः ॥ २० ॥  
 द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणां तावन्मानं समं मतम् ॥  
 प्रस्थादिमानमारभ्य द्विगुणं तद्रवार्द्रयोः ॥ २१ ॥  
 मानं तथा तुलायास्तु द्विगुणं न कचित्स्मृतम् ॥  
 मृद्वृक्षवेणुलोहाद्यैर्भाण्डं यच्चतुरगुलम् ॥ २२ ॥  
 विस्तीर्णं च तथोच्चं च तन्मानं कुडवं वदेत् ॥  
 यदौषधं तु प्रथमं यस्य योगस्य कथ्यते ॥ २३ ॥  
 तन्नाम्नैव स योगो हि कथ्यते कचिदन्यथा ॥  
 इति मागधी परिभाषा ॥ अथ कालिंगपरिभाषा ।  
 यवो द्वादशभिर्गौरसर्पपैः प्रोच्यते बुधैः ॥

१ पट्टपचाशदुत्तरद्विशतटंकानां प्रस्थो ज्ञेयः । २ चतुर्विंशतोत्तरसहस्रटंकाना-  
 माढकं ज्ञेयम् । ३ पणवत्युत्तरचतुःसहस्रटंकानां द्रोणो ज्ञेयः । ४ अटसह-  
 स्रदिनवत्यधिकशतटंकानां शूर्पकुंभौ ज्ञेयौ । ५ षोडशसहस्रचतुरशीत्यधिक-  
 त्रिशतटंकानां द्रोणी ज्ञेया ।



यवद्वयेन गुंजा स्याद्विगुञ्जो बल्ल उच्यते ॥ २४ ॥  
 मापो गुंजाभिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्कश्चित् ॥  
 स्याच्चतुर्मापकैः शाणः सनिष्कष्टङ्क एव च ॥ २५ ॥  
 गद्याणो मापकैः पङ्भिः कर्पः स्याद्विगुमापकः ॥  
 चतुःकर्पैः पलं प्रोक्तं दशशाणामितं बुधैः ॥ २६ ॥  
 चतुःपलैश्च कुडवं प्रस्थाद्याः पूर्ववन्मताः ॥

॥ इति कौलिंगपरिभाषा ॥ शार्ङ्गधरात् ।

त्रुटिः स्याद्विगुमाभिः पङ्क्तिस्तवर्द्धिका समीरिता ॥ २७ ॥  
 ताभिः पङ्क्तिर्भवेद्युका पङ्क्त्युकाभी रजो मतम् ॥  
 जालांतरगतैः सूर्यकरैर्वशी विलोक्यते ॥ २८ ॥  
 तस्या नामान्तरं ज्ञेयं त्रसरेणू रजस्तथा ॥

अथ कृष्णात्रेयात्

रजांसि त्रीणि सिंकता ताभिः षोडशभिस्तथा ॥ २९ ॥  
 सर्पपश्च भवेद्वैरस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदुः ॥  
 तद्वयं धान्यकं मापं तद्वयं रक्तिका मता ॥ ३० ॥  
 रक्तिकाद्वितयेनापि बल्लः प्रोक्तो विशारदैः ॥  
 चतुर्भिश्चण्डिका तैः स्यादेवं मानपरंपरा ॥ ३१ ॥  
 इति योगतरंगिण्यां परिभाषाकथनं नाम द्वितीयस्तरंगः ।

तृतीयस्तरंगः ।

॥ अथ युक्तायुक्तकथनम् ॥

नवान्येव हि योज्यानि द्रव्याण्यखिलकर्मसु ॥  
 विनाविडंगरुष्णाभ्यां गुडधान्याज्यमाक्षिकैः ॥ १ ॥  
 गुडूची कुटजो वासा कूर्माण्डश्च शतावरी ॥

अश्वगंधासहचरौ शतपुष्पा प्रसारिणी ॥ २ ॥  
 प्रयोज्या च सदैवाद्री द्विगुणां नैव कारयेत् ॥  
 शुष्कं नवीनं यद्रव्यं योज्यं सकलकर्मसु ॥ ३ ॥  
 आर्द्रं च द्विगुणं योज्यमेव सर्वत्र निश्चयः ॥  
 कालेऽनुक्ते प्रभातं स्यादंगेऽनुक्ते जटा भवेत् ॥ ४ ॥  
 भागेऽनुक्ते हि साम्यं स्यात् पात्रे नुक्ते तु मृन्मयम् ॥  
 एकमप्यौषधं योगे यस्मिन् यत्पुनरुच्यते ॥ ५ ॥  
 मानतो द्विगुणं प्रोक्तं तद्रव्यं तत्त्वदर्शिभिः ॥  
 गुणहीनं भवेद्वर्षादूर्ध्वं तद्रूपमौषधम् ॥ ६ ॥  
 मासद्वयात्तथा चूर्णं हीनवीर्यत्वमाप्नुयात् ॥  
 हीनत्वं गुटिकालेहौ लभेते वत्सरात्परम् ॥ ७ ॥  
 हीनाः स्युर्धृतैलाद्याश्चतुर्मासाधिकात्तथा ॥  
 औषध्यो लघुपाकाः स्युर्निर्वीर्या वत्सरात्परम् ॥ ८ ॥  
 पुराणाः स्युर्गुणैर्युक्ता आसवा धातवो रसाः ॥  
 व्याधेरयुक्तं यद्रव्यं गणोक्तमपि तत्त्यजेत् ॥  
 अनुक्तमपि यद्युक्तं योजयेत्तत्र तदुधः ॥ ९ ॥  
 ॥ इति शार्ङ्गधरात् ॥  
 बज्राभावे तु वैक्रान्तं स्वर्णाऽभावे तु मांसिकम् ॥  
 हेममाक्षिकजं सत्त्वं मतं हेमसमं गुणैः ॥ १० ॥  
 विमलामाक्षिकं ज्ञेयं ध्रुवं रजतवद्गुणैः ॥  
 मुक्ताऽभावे क्षिपेन्नूनं मुक्ताशुक्तिं च तद्गुणाम् ॥ ११ ॥  
 अभावेभ्रकसत्त्वस्य कान्तलोहं प्रयोजयेत् ॥  
 कान्ताभावे तीक्ष्णलोहमित्युक्तं रसदर्पणे ॥ १२ ॥

अभावे मधुनो योज्यो गुडो जीर्णश्च तद्गुणः ॥  
 सिताभावे भवेत् खण्डं शाल्यं भवि च पंष्टिकाः ॥ १३ ॥  
 असंभवे तु द्राक्षायाः प्रदेयं कौशमरीफलम् ॥  
 वृक्षाम्लं न भवेत्तत्र दाडिमाम्लं प्रयोजयेत् ॥ १४ ॥  
 वेतसाम्लस्य चाभावे हरिमन्याम्लमादिशेत् ॥  
 अभावे चन्दनस्यापि मेलयेद्रक्तचन्दनम् ॥ १५ ॥  
 तुगाभावे प्रदातव्या त्वक्क्षीरी तद्गुणा बुधैः ॥  
 अभावे सति पत्राणां रसादेर्भावनाविधौ ॥  
 विषमुष्टिकपायेण पङ्गुणा भावना भवेत् ॥ १६ ॥

॥ इति गोरक्षमतात् ॥

भेदाजीवककाकोलीद्वन्द्वाऽभावे प्रयोजयेत् ॥  
 यष्टीविदार्यश्वगंधा बलावाराहिकाथ वा ॥ १७ ॥  
 ॥ इति वैद्यालंकारात् ॥

फलमामंमपुष्टं च त्यज्येद्विल्वादृते सदा ॥  
 द्राक्षाविल्वशिवादीनां फलं शुष्कं गुणोत्तरम् ॥ १८ ॥  
 आदिशब्दाद्विभीतकपरूपादेरपि ॥ गोरक्षमतात् ॥  
 अंतःसंमार्जने मोदास्थाने योज्या जवानिका ॥  
 वहिःसंमार्जने मोदा ह्यजमोदैव गृह्यते ॥ १९ ॥  
 अंतःसंमार्जने योज्यं वचास्थाने कुलिञ्जनम् ॥  
 वहिःसंमार्जने सैव प्रयोक्तव्या मनीषिभिः ॥ २० ॥  
 कृष्णजीरकयोगेन कर्तव्ये भक्ष्यभेषजे ॥

१ पुरातनः । २ चामरविशेषः । ३ साठीचामर इति भा० । ४ अमा-  
 मौ । ५ कभारी(कुष्ठेरन) । ६ अम्लवेतस्येति वा पाठः । ७ यंशलोचनम् । ८ यस्य  
 वृक्षस्य पत्राणां रसादेरभावस्तस्य वृक्षस्य कपायेण पङ्गुणा भावना देया । पत्रा-  
 णामित्यत्र 'पित्ताना' मित्येकस्मिन्पुस्तके(?) । ९ तन्नामग्रन्यात् । १० अपक्वं ।  
 ११ लघु ।

तस्य स्थाने प्रदातव्यो जीरकः कुशलैः सदा ॥ २१ ॥

सारश्च खदिरादीनां निवादीनां त्वचः स्मृताः ॥

फलं च दाडिमादीनां पटोलादेर्दलं मतम् ॥ २२ ॥

॥ इति वृद्धशौनकात् ॥

क्वचित्पत्रं क्वचित्मूलं क्वचित्पुष्पं क्वचित्फलम् ॥

क्वचिद्बीजं क्वचित्काथं क्वचिद्वल्कं क्वचिज्जलम् ॥ २३ ॥

क्वचिन्नालं योजनीयं क्षीरं क्षारं क्वचित्क्वचित् ॥

एकैकस्यौषधस्यैव यथायोगं प्रयोजयेत् ॥ २४ ॥

अर्धं सिद्धरसस्य तैलयुतयोर्लेहस्य भागोष्टमः

संसिद्धारखिललोहचूर्णगुटिकादीनां तथा सप्तमः ॥

यो दीयेत भिषग्बराय सरुंजा निर्दिश्य धन्वन्तरि

देहारोग्यसुखाप्तये निर्गदितो भागः स धान्वन्तरिः ॥ २५ ॥

क्रीतद्रव्यस्य भैषज्यभागश्चैकादशो हि यः ॥

वणिग्भ्यो गृह्यते वैद्यै रुद्रभागः स कथ्यते ॥ २६ ॥

गृहीत्वाधिकमीशांशाद्यो ऽसमीचीनं मौषधम् ॥

दापयेद्बुद्धवैद्यः स स्याद्विश्वासघातकः ॥ २७ ॥

॥ इति वैद्यालंकारात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां युक्तायुक्तकथनं नाम तृतीयस्तरङ्गः ।

चतुर्थस्तरंगः ।

स्नेहाद्या अथ कथ्यन्ते योगा रोगोपधातकाः ॥

स्नेहश्चतुर्विधः प्रोक्तो घृतं तैलं वसा तथा ॥ १ ॥

मज्जा च तं पिवेन्मर्त्यः किञ्चिदभ्युदिते रवौ ॥

१ स्नेहजीरकः । २ रसः । ३ विचादीनामिति तत्रतत्र श्रेय । ४ अर्द्धभागः ।  
५ रसादेर्भागः । ६ श्रेष्ठवैद्याय । ७ योगिणा । ८ हृदिध्यात्वा । ९ कथितः ।  
१० अयोग्यम् । ११ मांसजैः । १२ अस्थिमध्यजैः । १३ उदिते सति ।

स्थावरो जंगमश्चेति द्वियोनिः स्नेह उच्यते ॥  
 तिलतैलं स्थावरेषु जंगमेषु घृतं वैरम् ॥ २ ॥  
 द्वाभ्यां त्रिभिश्चतुर्भिस्तैर्यमकस्त्रिवृतो महान् ॥  
 पिवेद्यहं चतुरहं पञ्चाहं षडहं तथा ॥ ३ ॥  
 सप्तरात्रात्परं स्नेहः सात्मीभवति सेवितः ॥  
 दोषकालाग्निवयसां बलं दृष्ट्वा प्रयोजयेत् ॥ ४ ॥  
 हीनां च मध्यमां ज्येष्ठां मात्रां स्नेहस्य बुद्धिमान् ॥ ५ ॥  
 अमात्रया तथाकाले मिथ्याहारविहारतः ॥  
 स्नेहः करोति शोफार्शस्तन्द्रानिद्राविसंज्ञताः ॥ ६ ॥  
 देया दीप्ताग्नये मात्रा स्नेहस्य पलसंमिता ॥  
 मध्यमाथ त्रिकर्पास्यात् जघन्या च द्विकर्पिकी ॥ ७ ॥  
 केवलं पैत्तिके सर्पिर्वातिके सैधवान्वितम् ॥  
 पेयं बहुकफे चापि व्योषक्षारसमन्वितम् ॥ ८ ॥  
 रुक्षक्षतविपातानां वातपित्तविकारिणाम् ॥  
 हीनमेधास्मृतीनां च सर्पिः पाने प्रशस्यते ॥ ९ ॥  
 रुमिकोपानिलाविष्टः प्रवृद्धकफमेदसः ॥  
 विवेयुस्तैलसात्म्या ये तैलं दाढ्यार्थिनश्च ये ॥ १० ॥  
 व्यापामकर्पिताः शुष्का रेतोरिक्ता महारुजः ॥  
 मन्दाग्निमरुतप्रांणा वसायोग्या नरा मताः ॥ ११ ॥  
 कुरोशयाः क्लेशसहा घातार्ता दीप्तवद्भयः ॥

१ घृततैलाभ्यां यमकः । २ घृततैलवसाभित्त्रिवृतः । ३ घृततैलवसामज्जाभि-  
 महान् इति त्रयो भेदाः । ४ घृतं च्यवहं तैलं चतुरहं वसा पञ्चाहं मज्जा षडहं प-  
 व क्रमेण । ५ स्नेहे घृतादिसेवितः । ६ अहोरात्रेण पच्यते । मांसं यदि याम-  
 चतुष्टये जीर्यति दिनार्द्धेन द्वियामे जीर्यति इति ज्ञेयम् । ७ व्यायामो मल्लादिपुर्न-  
 धनुरारुर्पणादि तत्त्वर्पिताः क्षीणाः । ८ अत्र 'शुष्करेतोरक्ता' इत्यपि पाठः । शु-  
 ष्कं क्षीण रेतो वीर्यं रक्तं च येषां ते शुष्करेतोरक्ताः । ९ वीर्यहीनाः । १० प्रा-  
 णोबलम् । ११ कुरा आशयाः कोष्ठा येषां ते बद्धोरमनसो वा । १२ दुःखसदा ।

मज्जानमापिबेयुंस्ते सर्पिर्वा सर्वतो हितम् ॥ १२ ॥

शीतकाले दिवा स्नेहमुष्णकाले पिबेन्निशि ॥

वातपित्ताधिके रात्रौ वातश्लेष्माधिके दिवा ॥ १३ ॥

नस्याऽभ्यंजनगंडूपैर्मूर्द्धकर्णाक्षितर्पणैः ॥

तैलं घृतं वा युंजीत दृष्ट्वा दोषबलावलम् ॥ १४ ॥

घृते कौष्णं जलं पेयं तैले यूषः प्रशस्यते ॥

वसामज्जाविधौ मंडमनुपानं सुखावहम् ॥ १५ ॥

बृद्धबालकृशा रूक्षाः क्षीणास्त्राः क्षीणरेतसः ॥

वातातीक्ष्णितमिराती ये तेषां स्नेहनमुत्तमम् ॥ १६ ॥

रूक्षस्य स्नेहनं स्नेहैरतिस्निग्धस्य रूक्षणम् ॥ १७ ॥

॥ अतिस्निग्धस्य लक्षणमाह ॥

भक्तद्वेषो मुखस्त्रावो गुदे दाहप्रवाहिका ॥

तंद्रातीसारपांडुत्वं भृशं स्निग्धस्य लक्षणम् ॥ १८ ॥

श्यामाकचणकाद्यैश्च भक्तपिण्याकसक्तुभिः ॥

रूक्षणं कारयेदेतैर्यथादोषं बलावलम् ॥ १९ ॥

स्नेहे व्यायामसंशीतवेमाघातप्रजागरान् ॥

दिवास्वप्नमभिष्यंदि रूक्षान्नं च विवर्जयेत् ॥ २० ॥

॥ इति शार्ङ्गधरात् ॥

॥ अथ स्नेहपानविधिः ॥

विघ्नेशक्षेत्रपालौ वटुकमपि शुभे वासरे पूजयित्वा

तैलस्पर्ज्यस्यार्कवारचयतिनिपुणः संस्मृत्तिसंप्रदायौत् ॥

१ सर्पेषु रोगेषु । २ दिवसे । ३ ईषदुष्णं । ४ क्षीणरुधिराः । ५ क्षी-  
णवोर्याः । ६ पुष्टपाणाम् । ७ अनिच्छेदपीतस्य । ८ गणेशः । ९ भूमि-  
पः । १० भैरवः । ११ दिने । १२ घृतस्य । १३ सुवैद्यः । १४ सं-  
स्कारम् । १५ शास्त्रमर्यादायाः ।

आदौ वह्निं प्रदद्याद्यदंबाधि शनैः शब्दफेनव्ययः स्या-  
 त्पश्चान्मूर्तिपङ्क्तैस्तद्विशभिरलघुभिर्नीतिपीनैर्विशोध्यम्॥  
 एकं संस्थाप्य घृत्तं विधिवदंथ पचेद्वासरादग्निमाद्यं  
 कायैः कल्कैश्च दुग्धैस्तदनुसुरेभिभिः शोधयेत्तैर्विशोध्यम्॥  
 कस्तूरी चंदनं गैलैर्जलैर्जलदशठैरक्तेपाटीरकुष्ठ-  
 त्वक्मंजिष्टातुरुष्कागुरुनखरदलश्वेतकाकोलमुख्यैः २२

॥ इति सारसंग्रहात् ॥

“तैलं कृत्वा कटाहे विमलदृढतरे मंदमंदानिलैस्त-  
 त्पक्वं निष्फेनभावं व्रजति किल यदा शैत्यभावं ततस्तु॥  
 मंजिष्टारात्रिलोधैर्जलधरनलिकैः शामलैः साक्षपथ्यैः  
 शूचीपुष्पांघ्रिनीरैरुपहितमथितस्तैलगंधं जहाति ॥  
 तैलस्येदुकलांशकैकविकसाभागास्तु तस्यांऽशिका  
 ये चान्येपि वरा पयोदरजनीहीवेररोधादयः ॥  
 आम्रजंबूकपित्तानां बीजपूरकविल्वयोः ॥  
 शोधनं तिलतैलस्य पल्लवानां तु पंचकम् ॥”  
 जलस्नेहौपथीनां च प्रमाणं यत्र नोदितम् ॥  
 तत्र स्यादौषधात्स्नेहः स्नेहात् कायश्चतुर्गुणः ॥ २३ ॥  
 स्नेहाच्चतुर्गुणं काप्यं सदा च स्नेहसंविधौ ॥  
 चतुर्गुणं जलं दत्वा कायः कप्यसमो मतः ॥ २४ ॥

॥ इति चरकात् ॥

कल्काच्चतुर्गुणं स्नेहः स्नेहात्काप्यं चतुर्गुणम् ॥  
 काथ्याच्चतुर्गुणं धारि कायः काप्यसमो मतः ॥ २५ ॥

१ यावत्कालम् । २ मंदमंदं । ३ फेननाशः । ४ मृत्तोलकैः । ५ सं-  
 स्थापनं कृत्वा । ६ दिनम् । ७ यथाशास्त्रम् । ८ तद्वर्तमानम् । ९ मुग्ध-  
 पित्तद्रव्यैः । १० शुद्धतैलम् । ११ कर्पूरः । १२ नागरम् । १३ रक्तचंदनम् ।  
 १४ कापद्रव्यात् ।

मृदौ चतुर्गुणं देयं कठिनेऽष्टगुणं जलम् ॥  
 कठिनात्कठिने द्रव्ये वारि षोडशभागिकम् ॥ २६ ॥  
 स्नेहकल्को यदाऽगुल्यावर्तितो वर्तिवद्भवेत् ॥  
 बह्वौ क्षिप्ते च नोऽशब्दस्तदा सिद्धं विनिर्दिशेत् ॥ २७ ॥  
 ॥ अन्यच्च ॥

शङ्खव्युपरमे प्राप्ते फेनस्योऽपशमे तथा ॥  
 गन्धवर्णरसादीनां संपत्तौ सिद्धिमादिशेत् ॥ २८ ॥  
 घृतस्यैवं विपकस्य संसिद्धिं कुशलो भिषक् ॥  
 फेनोद्गमे च तैलस्य शेषं घृतवदादिशेत् ॥ २९ ॥  
 इति योगरत्नावलीतः ॥

अकल्कयोग्यद्रव्याणां कठिनानां विचारतः ॥  
 काथो विधीयतेन्येषां कल्क एव भिषद्मतः ॥ ३० ॥  
 इति वैद्यालंकारात् ॥  
 आदौ संचारयेत् कायं पश्चात्कल्कं ततः पयः ॥  
 ततोऽन्यत्सुरभि द्रव्यमेव स्नेहविधौ क्रमः ॥ ३१ ॥  
 इति मतिमुकुरात् ॥

क्षीरं स्नेहसमं दद्यादनुक्ते स्नेहसंविधौ ॥  
 शरुद्रसं मांसरसं मूत्रं सौवीरकादिकम् ॥ ३२ ॥  
 स्नेहादष्टगुणं देयं जलं च द्विगुणं क्षिपेत् ॥  
 अर्धावशिष्टः कर्तव्यः पाको गन्धांशुकं ततः ॥ ३३ ॥  
 चन्द्रकस्तूरिकादीनां सहस्रांशं प्रयोजयेत् ॥  
 पुष्पाणि गन्धनियांसं सिद्धे शीतेऽवतारिते ॥ ३४ ॥  
 इति चरकात् ॥



दृपत्पिष्टो भवेत्कल्कः काथोग्निकथितो मतः ॥  
 स्नेहपाकस्त्रिधा प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा ॥ ३५ ॥  
 ईपत्सरसकल्कस्तु स्नेहपाको मृदुर्भवेत् ॥  
 मध्यपाकस्य संसिद्धिः कल्के नीरसकोमले ॥ ३६ ॥  
 ईपत्कठिनकल्कश्च स्नेहपाको भवेत्खरः ॥  
 तदूर्ध्वं दग्धपाकः स्यादाहकृन्निष्प्रयोजनः ॥ ३७ ॥  
 अतिपाकश्च निर्वीर्यो वह्निमांशकरश्च सः ॥  
 नस्यार्थे स्यान्मृदुः पाको मध्यमः सर्वकर्मसु ॥ ३८ ॥  
 अभ्यंगार्थे खरः प्रोक्तो युंज्यादेवं यथोचितम् ॥  
 घृततैलगुडादीस्तु साधयेन्नैकवासरे ॥ ३९ ॥  
 प्रकुर्वन्त्युपिता ह्येते विशेषाहुर्णसंचयम् ४० ॥ शार्ङ्गधरात्  
 इति योगतरंगिण्यां स्नेहपाकविधिर्नाम चतुर्थस्तरंगः ॥

### पञ्चमस्तरंगः ।

अथ पञ्च कर्माणि । तत्र प्रथमं स्वेदविधिः  
 स्वेदश्चतुर्विधः प्रोक्तस्तापोष्णस्वेदसंज्ञकौ ॥  
 उपनाहो द्रवस्वेदः सर्वे वातार्तिहारिणः ॥ १ ॥  
 स्वेदौ तापोष्णजौ प्रायः श्लेष्मघ्नौ समुदीरितौ ॥  
 उपनाहस्तु वातघ्नः पित्तसंज्ञे द्रवो हितः ॥ २ ॥  
 महावले महाव्याधौ शीते स्वेदो महान्मतः ॥

१ नस्यकर्मणि । २ पाकः । ३ तीक्ष्णः पाकः । ४ घृता-  
 र्शनैकदिनेन कारयेत् । ५ रात्रौ वसिताः । ६ गुणसमुहम् । ७ तापो-  
 ष्णौ एतौ द्वौ स्वेदसंज्ञितौ भवतः । उपनाहो द्रवः स्वेदः एतौ द्वौ एव चत्वारः  
 सर्वे वातहारिणो भवन्ति । चतुर्विधस्वेदस्य वातनाशकत्वेऽपि विशेषमाह । अन्य-  
 तरसंघटे वातमिश्रितेऽपि द्रवः स्वेदो विहित इति मुश्रुताभिप्रायः । केवलपित्तसु  
 सर्वस्वेदानि पिष्टाः शीतजलावगाह एव प्रशस्तः । ८ स्वेदः । ९ पि-  
 त्तस्य योगे । १० अधिकः ।

दुर्बले दुर्बलस्वेदो मध्यमे मध्यमो मतः ॥ ३ ॥  
 “ येषां नस्यं प्रदातव्यं वेस्तिश्चापि हि देहिनाम् ॥  
 शोधनीयाश्च ये केचित्पूर्वं स्वेद्याश्च ते मताः ॥ ”  
 स्वेद्या ऊर्ध्वं त्रयोपीह भगंदर्यैर्ज्ञासस्तथा ॥  
 अश्मर्या चातुरो जंतुः शमयेच्छास्त्रकर्मणः ॥ ४ ॥  
 पश्चास्वेद्यो हृते शल्ये मूढगर्भगदे तथा ॥  
 काले प्रसूताऽकाले वा पश्चात्स्वेद्या नितंविनी ॥ ५ ॥  
 सर्वान्स्वेदान्निर्वाते च जीर्णाहारे च कारयेत् ॥  
 स्विद्यमानशरीरस्य हृदयं शीतलैः स्पृशेत् ॥ ६ ॥  
 स्नेहोभ्यक्तशरीरस्य शीतैराच्छाद्य चक्षुषी ॥  
 अजीर्णी दुर्बलो मेही क्षंतक्षीणः पिपासितः ॥ ७ ॥  
 अतीसारी रक्तपित्ती पांडुरोगी तथोदरी ॥  
 मदारतो गर्भिणी चैव न हि स्वेद्या विज्ञानता ॥ ८ ॥  
 एतानपि मृदुस्वेदैः स्वेदसाध्यानुपाचरेत् ॥  
 मृदुस्वेदं प्रयुंजीत तथा हृन्मुष्कदृष्टिषु ॥ ९ ॥  
 अतिस्वेदात्संधिपीडा दाहस्तृष्णा क्रमो भ्रमः ॥  
 पित्तासृक्पिडकाकोपस्तत्र शीतैरुपाचरेत् ॥ १० ॥  
 तेषु तापाभिधः स्वेदो बालुकावस्त्रपाणिभिः ॥  
 ॥ अथ ऊष्मस्वेदमाह ॥

१ स्वल्पः । २ नाधिकोनाल्पः । ३ अपिशृम्दात्पूर्वमपि । ४ कालेनव-  
 ममासादमे प्रसूता । ५ अकाले नवमासात्पूर्वं प्रसूता । ६ निर्वातस्थाने । ७ पुं-  
 सः । ८ कमलकदलीपत्राद्यैः । ९ स्नेहस्विन्नस्य । १० उदरक्षतक्षीणः । ११ वै-  
 येन । १२ तस्य निर्माणान्नरके लिखितं । अंगारैः खदिराद्यैर्निर्धूमैः बालुकां तत्रां  
 कृत्वा परंढपत्रांतरितंस्वेदः पाणिकंदुकवस्त्राणांदुरामिना उष्णं कृत्वा स्वेदांगार  
 मृत्पात्रे स्थापयित्वा स्वेदः कर्तव्यः । १३ बालुकादेः स्विन्नस्य विरेके सति वमनं कृ-  
 ते सति हृदयं शीतलैर्धनान्दिभिः स्पृशेत् । १४ लोहपिण्डिकाटादिभिस्तैः यः  
 स्वेदः स ऊष्मस्वेदः । १५ चतुर्विधस्वेदेषु ।

प्रस्तरैरम्लासितैश्च कायेरल्लकवेष्टिते ॥ ११ ॥

अथ वा वातनिर्णाशिद्रवकाथरसादिभिः ॥

उष्णैर्घटं पूरयित्वा पार्श्वे छिद्रं विधाय च ॥ १२ ॥

विमुद्रास्यं त्रिखंडां च धातुजां काष्ठजामथ ॥

पङ्गुलास्यां गोपुच्छां नार्डी युंज्याद्विहैस्तिकाम् ॥ १३ ॥

सुखोपविष्टमभ्यक्तं गुरुप्रावरणावृतम् ॥

हस्तिशुंडिकया नाड्या स्वेदयेद्वातरोगिणम् ॥ १४ ॥

॥ अपर ऊष्मस्वेदप्रकारः ॥

पुरुषायार्ममात्रं वा भूमिमुत्कीर्य स्वादिरैः ॥

काष्ठैर्दग्ध्वा तथाभ्युक्ष्य क्षीरधान्याम्लवारिभिः ॥ १५ ॥

वातघ्नपत्रैराच्छाद्य शयानं स्वेदयेन्नरम् ॥

एवं माषादिभिः स्विन्त्रैः शयानं स्वेदमाचरेत् ॥ १६ ॥

तथोपनाहस्वेदं च कुर्याद्वातहरौपधैः ॥

प्रदिग्धदेहं यातार्त क्षीरमांसरसान्वितैः ॥ १७ ॥

अम्लपिष्टैः सलवणैः सुखोष्णैः स्नेहसंयुतैः ॥

उपग्राम्यान्पमानैर्जीवनीयगणेन च ॥ १८ ॥

दधिसौवीरैर्कक्षीरैर्वीरतर्वादिना तथा ॥

कुलत्पमापगोर्धूमरतमोतिलसर्पपैः ॥ १९ ॥

जतुष्णश्लेष्मजलजोष्णालौष्टिकजलजैः ॥

एरंडमूलबीजैश्च रास्नामूलकशिशुभिः ॥ २० ॥

मिसिरुष्णाकुटुम्भैश्च लवणैर्म्लान्संयुतैः ॥

१. वत्सप्यादिभिः २. पत्तांगैः । ३. निर्वह । ४. गोपुच्छावापय  
५. मिसिरुष्णाकुटुम्भैः । ६. वृत्तमन्त्रार्थम् । ७. मुनिराष्ट्रं मनाकुर्वी  
८. पुष्पदंष्ट्रपद्मार्थम् । ९. मृदिरसंमिश्रः । १०. अभ्यासिष्य । ११. एरंडपत्रैः  
१२. दधिसौवीरैः । १३. पौषपं कुदाय । १४. वाती इति ।  
१५. मन्त्रान् इति । १६. गोदा इति । १७. वत्सप्यादिभिः ।

प्रसारिण्यश्वगंधाभ्यां बलया दशमूलकैः ॥ २१ ॥  
 गुहूच्या वानरीबीजैर्यथांलाभं समाहृतैः ॥  
 धुण्णैः स्विन्नैश्च वस्त्रेण बद्धैः संस्वेदयेन्नरम् ॥ २२ ॥  
 महाशाल्वणसंज्ञोयं योगः सर्वानिलार्तिजित् ॥  
 द्रवस्वेदस्तुवातघ्नद्रव्यकाथेन पूरितम् ॥ २३ ॥  
 कटाहं कोष्णकं चापि सूपविष्टोवगाहयेत् ॥  
 तस्य विधानमाह ।  
 नाभेः षडंगुलं यावन्मग्नः काथस्य धारया ॥ २४ ॥  
 कोष्णया स्कंधयोः सिक्तः स्निग्धैः स्निग्धतनुर्नरः ॥  
 एवं तैलेन दुग्धेन सर्पिषा स्वेदयेन्नरम् ॥ २५ ॥  
 एकांतरे व्यंतरे वा स्नेहो युक्तोवगाहने ॥  
 शिरामुखैर्लोमकूपैर्धमनोभिश्च तर्पयेत् ॥ २६ ॥  
 शरीरे बलमाधत्ते युक्तं स्नेहोवगाहने ॥  
 जलसिक्तस्य वर्धते यथामूलैकुरास्तरौः ॥ २७ ॥  
 तथा धातुविवृद्धिर्हि स्नेहसिक्तस्य जायते ॥  
 नातः परतरः कश्चिदुपायो वातनाशनः ॥ २८ ॥  
 कर्पासारिथकुलत्थिकातिलयवैर्मापंतसीपैष्टिका-  
 मुद्गरैरंडपुनर्नवायुगलकैर्धान्याम्लसिक्तैः समैः ॥

१ 'खिरेषा' इति भा० । २ 'कचफरी' इ० भा० । ३ प्राप्तेः । ४ कुट्टितैः । ५ स्वे-  
 दितैः । ६ वातप्रदशमूलायं ब्रवंतस्काथेन पूरितम् । ७ धृततैलाभ्यंगः । ८ स्वेदा-  
 भ्यंतरे किं कुर्यादित्याह । ९ सम्यक्स्विन्नं सम्यक्स्वेदितं पुनः विमृदितं धृततैलाभ्यं-  
 गं पश्चात् शनैः उष्णां बुनास्नानं कुर्यादिति पूर्वक्रियया संबंधः अनभिस्यंदि स्रोतोरोधि-  
 भोजयेत् । व्यायामं भ्रमायनं कारयेत् । शुभ्रुते चतुर्भिधैश्च स्नेहः कथितः । चरकवा-  
 ग्भटशरीत्रयोदशविधः । मन्यज्ञानायैतदपि लिख्यते । तदुक्तं वाग्भटे । संकर-  
 स्तरेनाडीपरिषेकोऽत्र गाहनं । जेता कोष्णघनः कर्पूकुटीकुंभीतयात्रमूः । कूपो-  
 होलाकइत्येते स्वेदायां त्रयोदश । एषां लक्षणं वाग्भटे दर्शितम् । ९ पुंसः । १०  
 'उद्' इति भा० । ११ 'साडीचावल' । १२ शीशाडी ।

स्वेदो ग्रीहिभवो बुधैर्निगदितो वातामयानां हितो-  
 हन्यात्पृष्ठगतां रुजं त्रिकगतां पार्श्वार्थिकट्यूरुगाम् ॥ २९ ॥  
 शीतशूलव्युपरमे स्तंभगौरवनिग्रहे ॥  
 दीप्तेग्नौ मार्दवे जाते स्वेदनाद्विरतिर्मता ॥ ३० ॥  
 इति योगतरंगिण्यांस्वेदविधिकथनं नाम पञ्चमस्तरंगः ।

पष्ठस्तरंगः ।

॥ अथ वमनविधिः ॥

शरत्काले वसन्ते च प्रावृद्धकाले च देहिनाम् ॥  
 वमनं रेचनं चैव कारयेत्कुशलो भिषक् ॥ १ ॥  
 बलवन्तं कफव्यासं हृल्लासादिनिपीडितम् ॥  
 तथा वमनं सात्त्विकं च धीरचित्तं च वामयेत् ॥ २ ॥  
 विषदोषे स्तन्यरोगे मन्दाऽग्नौ श्लीषदे ऽर्बुदे ॥  
 हृद्रोगकुष्ठवीर्यमृषामेहाजीर्णभ्रमेषु च ॥ ३ ॥  
 विदारिकापचीकासश्वासपीनसवृद्धिषु ॥  
 अपस्मारे ज्वरोन्मादे तथा रक्तातिसारिषु ॥ ४ ॥  
 नासातिस्विषोष्ठपाके च कर्णस्रावे द्विजिह्वके ॥  
 गलशुंठ्यामतीसारे पित्तश्लेष्मगदे तथा ॥ ५ ॥  
 मेदोगदेरुर्चा चैव वमनं कारयेद्विषक् ॥  
 न वामनीयस्त्रिभिरी न गुल्मी नोदरी कृशः ॥ ६ ॥  
 नातिबृद्धो गर्भिणी च न स्त्र्यलो न क्षतातुरः ॥  
 मदारतो वालको रुक्षः क्षुधितश्च निरुहितः ॥ ७ ॥  
 उदावर्त्यूर्ध्वरक्ती च दुश्छर्द्यः केनलानिली ॥

१ शोणितमा । २ निवृत्तं सति । ३ माद्यं गति । ४ स त्रयङ्गात्वायमनेन्मुव-  
 दोपश्चात्ताभन्यथाभ्यर्ग्यात्पर्यवेदपदशान्ता । तथा तेषां प्रथान्तरे । भिषज् शो-  
 धनं प्रादुश्यं स्वस्थेन सर्वदा । पञ्चगव्येषु पोष्यदेवस्य ममदीरणम् । ५ प्रदी-  
 प । ६ वैद्यः । ७ वमनसदृशम् । ८ मातृभोजने ।

पांडुरोगी कृमिव्यासः पठनांस्वरधातकः ॥ ८ ॥  
 एतेप्यजीर्णव्यथिता वाम्या ये विषेपीडिताः ॥  
 कफव्यासाश्च ते वाम्या मधूककाथपानतः ॥ ९ ॥  
 सुकुमारं कृशं वालं वृद्धं भीरुं न वामयेत् ॥  
 पीत्वा यवागूमाकंठं क्षीरतक्रदर्धानि च ॥ १० ॥  
 असात्म्यैः श्लेष्मलैर्भोज्यैर्दोषानुत्क्रेश्य दोहिनः ॥  
 स्निग्धस्विन्नाय वमनं दत्तं सम्यक्प्रवर्तते ॥ ११ ॥  
 वमनेषु च सर्वेषु सैधवं मधुना हितम् ॥  
 बीभत्सं वमनं दद्याद्विपरीतं विरेचनम् ॥ १२ ॥  
 काथद्रव्यस्य कुडवं स्थापयित्वा जलाढकम् ॥  
 अर्धभागावशिष्टं च वमनेष्वपि चारयेत् ॥ १३ ॥  
 काथपाने नवप्रस्थाः श्रेष्ठा मात्रा प्रकीर्तिता ॥  
 मध्यमा पणिमता प्रोक्ता त्रिप्रस्था च कनीयसी ॥ १४ ॥  
 कल्कचूर्णावलेहानां त्रिपलं श्रेष्ठमात्रया ॥  
 मध्यमं द्विपलं विद्यात्कनीयस्तु पलं भवेत् ॥ १५ ॥  
 वमने चापि वेगाः स्युरष्टौ पित्तांत उत्तमाः ॥  
 पङ्केगा मध्यवेगाश्च चत्वारस्त्ववरा मताः ॥ १६ ॥  
 वमने च विरेके च तथा शोणितमोक्षणे ॥  
 सार्धत्रयोदशपलं प्रस्थमाहुर्मनीषिणः ॥ १७ ॥  
 कफं कदुकतीक्ष्णोष्णैः पित्तं स्वादु हिमैर्जयेत् ॥  
 सुस्वादुलवणाम्लोष्णैः संसृष्टं वायुना कफम् ॥ १८ ॥  
 कृष्णाराठफलं सिंधुकफे कोष्णजलैः पिवेत् ॥  
 पटोलवासानिवैश्च पित्ते शीतं जलं पिवेत् ॥ १९ ॥

सश्लेष्मवातपीडायां सक्षीरं मदनं पिवेत् ॥  
 अजीर्णं कोष्णपानीयं सिंधुं पीत्वा वमेत्सुधीः ॥ २० ॥  
 वामनं पाययित्वा तु जानुमात्रासने स्थितम् ॥  
 कंठमेरंडनालेनस्पृशन्तं वामयेद्धिषक् ॥ २१ ॥  
 प्रसेको हृद्ग्रहः कंठः कंठुर्दुश्छर्दिते भवेत् ॥  
 अतिवांते भवेत्तृष्णा हिक्कोद्वारौ विसंज्ञता ॥ २२ ॥  
 जिह्वानिःसर्पणं चाक्ष्णोर्व्यावर्तिर्हनुसंहतिः ॥  
 रक्तच्छर्दिष्ठीवनं च कंठपीडा च जायते ॥ २३ ॥  
 वमनस्यातियोगे तु मृदु कुर्याद्विरेचनम् ॥  
 वमनांतःप्रविष्टायां जिह्वायां कवलग्रहः ॥ २४ ॥  
 स्निग्धाम्ललवणैर्हृद्यैर्घृतक्षीररसैर्हितः ॥  
 फलान्यम्लानि खादेयुस्तस्य चान्येग्रतो नराः ॥ २५ ॥  
 निःसृतां तु तिलैर्द्राक्षाकल्कलिप्तां प्रवेशयेत् ॥  
 व्यावृतेक्ष्णोर्घृताभ्यक्ते पीडयेच्च शनैःशनैः ॥ २६ ॥  
 हनोर्मौक्षे स्मृतः स्वेदो रक्ते छर्दिविधौ पुनः ॥  
 यात्री रसांजनोश्शिरलाजचंदनवारिभिः ॥ २७ ॥

द्वयैश्च जांगलरसैः कृत्वा यूपं च भोजयेत् ॥ ३० ॥  
तद्वा निद्रास्यदौर्गन्ध्यं पाण्डुश्च ग्रहणीगदः ॥  
सुवांतस्य न पीडायै भवत्येते कदाचन ॥ ३१ ॥  
अजीर्णं शीतपानीयं व्यायामं मैथुनं तथा ॥  
स्नेहाभ्यंगान्प्रदेहंश्च दिनैकं वर्जयेत्सुधीः ॥ ३२ ॥  
इति श्रीयोगतरंगिण्यां वमनविधिकथनं नामषष्ठस्तरंगः ।

॥ सप्तमस्तरंगः ॥

॥ अथ विरेकविधिः ॥

स्निग्धस्विन्नस्य वांतस्य दद्यात्सम्यग्विरेचनम् ॥  
अवांतस्य त्वधःस्त्रस्तो ग्रहणीं छादयेत्कफः ॥ १ ॥  
मंदाग्निं गौरवं कुर्याज्जनयेद्वाप्रवाहिकाम् ॥  
अथ वा पाचनैरामं वलासं च विपाचयेत् ॥ २ ॥  
पित्ते विरेचनं युज्यादामोद्धूते गदे तथा ॥  
उदरे च तथाध्माने कोष्ठाशुद्धौ विशेषतः ॥ ३ ॥  
दोषाः कदाचित्कुप्यन्ति जिता लघनपाचनैः ॥  
ये तु संशोधनैः शुद्धा न तेषां पुनरुद्भवः ॥ ४ ॥  
बालवृद्धावतिस्निग्धः क्षतक्षीणोभयान्वितः ॥  
श्रांतस्तृपार्तः स्थूलश्च गर्भिणी च नवज्वरी ॥ ५ ॥  
नवप्रसूता नारी च मंदाग्निश्च मदात्ययी ॥  
शल्यो धृतश्च रूक्षश्च न विरेच्या विजानता ॥ ६ ॥

१ गरमिस्यपिपातः । २ स्नेहाभ्यंगप्रकोपं च द्वितीयपातः । ३ तैलमर्दनं विपूण्यादौ प्रशस्तं न कृत्रिमवमने । ४ शुष्कैरंडादिभिः पाचयेत् यद्वा स्नेहजै-  
र्वृतबुग्धादिभिः । तथा स्वेदैः पिष्टिकादिभिः स्विन्नस्य स्वेदितस्य वमनं का-  
र्यमिति विधिः । ५ पक्षाद्विरेको वांतस्येति सुश्रुतवचनं अस्यार्थः वांतं कृत्वा  
सम्यक्वमनं पद्धतसमृद्धं पद्धतस्यक्तवमनं पुनरुदरं संक्षेपितं पुनरुदरं उष्णं  
कृतस्वेदं पुनरुदरं लघुभुक्तं योद्धशेद्धि योद्धशे दिवसे विरेचयेत् ।



जीर्णज्वरी गरव्यासो वात्तरक्ती भगंदरी ॥  
 अर्शःपांडूदरग्रंथीहृद्रोगारुचिपीडिताः ॥ ७ ॥  
 योनिरोगप्रमेहार्ता गुल्मप्लीहव्रणार्दिताः ॥  
 विद्रधिच्छादिविस्फोटविसूचीकुष्ठसंयुताः ॥ ८ ॥  
 कर्णनासाशिरोवक्रगुदमेहामयान्विताः ॥  
 प्लीहशोफाक्षिरोगार्ताः रुमिक्षारानिलादिताः ॥ ९ ॥  
 शूलिनो मूत्रघातार्ता विरेकार्हा नरा मत्ताः ॥  
 बहुपित्तो मृदुः प्रोक्तो बहुश्लेष्मा च मध्यमः ॥ १० ॥  
 बहुवातः क्रूरकोष्ठो दुर्विरेच्यः स कथ्यते ॥  
 मृद्वी मात्रा मृदौ कोष्ठे मध्यकोष्ठे तु मध्यमा ॥ ११ ॥  
 क्रूरे तीक्ष्णा मत्ता द्रव्यैर्मृदुमध्यमतीक्ष्णकैः ॥  
 मृदुर्द्राक्षापयश्चरुतैलैरपि विरिच्यते ॥ १२ ॥  
 मध्यमस्त्रिवृतातित्ताराजवृक्षैर्विरिच्यते ॥  
 क्रूरछुकपयसाहेमक्षीरीदंतीफलादिभिः ॥ १३ ॥  
 मात्रोत्तमा विरेकस्य त्रिगद्वैगैः कफांतका ॥  
 वैगैर्विशतिभिर्मध्या हीनोक्ता दशवेगकैः ॥ १४ ॥  
 द्विपलं श्रेष्ठमाख्यातं मध्यमं तु पलं भवेत् ॥  
 पलार्धं च कपायाणां कनीयस्तु विरेचनम् ॥ १५ ॥  
 कल्कमोदकचूर्णानां कर्प मध्वाज्यलेहृतः ॥  
 कर्पद्वयं पलं वापि देयो रोगाद्यपेक्षया ॥ १६ ॥  
 पित्तोत्तरे त्रिवृच्चूर्णं द्राक्षाकायादिभिः पिबेत् ॥  
 त्रिफलाकाथगोभूत्रैः पिवेद्योषं कफादित- ॥ १७ ॥

त्रिवृत्सैधवशुंठीनां चूर्णमम्लैः पिवेन्नरः ॥  
 वातार्दितो विरेकाय जागलानां रसेन वा ॥ १८ ॥  
 एरंडतैलं त्रिफलाक्वाथेन द्विगुणेन वा ॥  
 युक्तं पीतं पयोभिर्वा न चिरेण विरिच्यते ॥ १९ ॥  
 त्रिवृता कौटजं वीजं पिप्पली विश्वभेषजम् ॥  
 समृद्धीकारसः क्षौद्रं वर्षाकाले विरेचनम् ॥ २० ॥  
 त्रिवृदुरालभोर्दीच्यशर्करामुस्तचंदनम् ॥  
 द्राक्षांबुना सयष्ट्याहं शीतलं च घृणात्यये ॥ २१ ॥  
 त्रिवृता जीरकं पाठा रज्ज्वाजी संरलं वचा ॥  
 हेमंक्षीरी च हेमंते चूर्णमुष्णांबुना पिवेत् ॥ २२ ॥  
 पिप्पली नागरं सिंधुः श्यामा त्रिवृतया सह ॥  
 लिहेत्क्षौद्रेण शिशिरे वसंते च विरेचनम् ॥ २३ ॥  
 त्रिवृता शर्करातुल्या ग्रीष्मकाले विरेचनम् ॥  
 अभया मरिचं शुंठी विडंगामलकानि च ॥ २४ ॥  
 पिप्पली पिप्पलीमूलं तैक्पत्रं मुस्तमेव च ॥  
 एतानि समभागानि दंती च त्रिगुणा भवेत् ॥ २५ ॥  
 त्रिवृदष्टगुणा ज्ञेया षड्गुणा चात्र शर्करा ॥  
 मधुना मोदकान्कृत्वा कर्पमात्रप्रमाणतः ॥ २६ ॥  
 एकैकं भक्षयेत्प्रातः शीतं चानुपिवेज्जलम् ॥  
 तावद्विरिच्यते जंतुर्यावदुष्णं न सेवते ॥ २७ ॥  
 यानाहारविहारेषु भवेन्निर्णयत्रणः सदा ॥

१ त्रिवृत्कादिभिः । २ दुग्धे । ३ निसोल । ४ द्रव्ययम् ।  
 ५ पमासो । ६ नेत्रपाता । ७ शरदि । ८ जीरास्याद । ९ वीड ।  
 १० गोरु । ११ विषायसे । १२ मज्जपत्रज । १३ केचिदित्यादौ चतुर्गुणा-  
 गृह्यादित्यादः । १४ निर्भयः ।

विषमज्वरमंदाग्निपांडुकासभगंदरान् ॥ २८ ॥

वातामकुष्ठगुल्माशौगलगंडभ्रमोदरान् ॥

विदाहप्लीहमेहांश्च यक्ष्माणं नयनामयान् ॥ २९ ॥

वातरोगांस्तथाध्मानं मूत्रकृच्छ्राणि चाश्मरीम् ॥

पृष्ठपार्श्वरुजं जानुजंघोदररुजं जयेत् ॥ ३० ॥

सततं शीलनादेपः पलितानि विनाशयेत् ॥

अभया मोदका ह्येते रसायनमनुत्तमम् ॥ ३१ ॥

इत्यभयामोदकः ॥

मृद्धीका कंदुरोहिणी जलधरः शंपांकमज्जा शिवा

कृष्णा मूलपटोलिके त्रिवृदिलांबुश्रीयपत्रं समम् ॥

संकाध्याशु निर्पीत एष तु गणः संरेचयेदाश्वयं

तांबूलाशिनमग्निसेविनमिलागेहस्थितं मानवम् ॥ ३२ ॥

पीत्वा विरेचनं शीतजलैः संसिच्य चक्षुषी ॥

सुगंधि किंचिदाग्राय तांबूलं शीलयेद्दरम् ॥ ३३ ॥

निवातस्थो न वेगांश्च धारयेन्न स्वपेक्षया ॥

शीतांबु न स्पृशेत्काऽपि कोष्णं नीरं पिवेन्मुहुः ॥ ३४ ॥

घलासौपथपित्तानि वारि वांते यथा व्रजेत् ॥

रेकान्तथा मलं पित्तं भेषजं च कफो व्रजेत् ॥ ३५ ॥

दुर्विरिक्तस्य नाभेस्तु स्तब्धत्वं कुक्षिशूलता ॥

पुरीषयातसंगं च कंडूमण्डलगौरवम् ॥ ३६ ॥

विदाहोरुचिराध्मानं भ्रमश्छर्दिश्च जायते ॥ ३७ ॥

तं पुनः पाचनैः स्नेहैः पक्त्वा संस्नेह्यं रेचयेत् ॥

१ वा रसायनधरा स्मृताः पाठः । २ कुटकी । ३ अमलतास । ४ इलाय-  
ची । ५ तांबूलमक्षिण । ६ अमितापन । ७ दुर्विरेचितम् । ८ आरवधादिभिः ।  
९ घृतपानाद्यै । १० आमै । ११ स्नेहनकृत्वा ।

तेनास्योपद्रवा यांति दीप्ताग्नेर्लघुता भवेत् ॥ ३८ ॥

विरेकस्यातियोगेन मूर्छाभ्रंशो गुदस्य च ॥

गूलं कफातियोगः स्यान्मांसधावनसंनिभम् ॥ ३९ ॥

मेदोनिभं जलाभासं रक्तं चापि विरिच्यते ॥

तस्य शीतांबुभिः सिक्त्वा शरीरं तंडुलांबुभिः ॥ ४० ॥

मधुमिश्रैस्तथोशीरैः कारयेद्दमनं मृदु ॥ ४१ ॥

संहेकारत्वचः कल्को दध्ना सौवीरकेण वा ॥

पिष्टो नाभिप्रलेपेन हंत्यतीसारमुल्बणम् ॥ ४२ ॥

केचिद्विरेकातिरेके ग्रहणार्थं पथ्यमाहुः ।

अजाक्षीरं रसं वापि वैष्किरं हारिणं तथा ॥

शालिभिः पट्टिभिः स्वल्पं मसूरैर्वापि भोजयेत् ॥ ४३ ॥

शीतैः संग्राहिभिर्द्रव्यैः कुर्यात्संग्रहणं भिषक् ॥

लाघवे मनसस्तुष्टावनुलोमं गतेनिले ॥ ४४ ॥

सुविरिक्तं नरं ज्ञात्वा पाचनं पाययेन्निशि ॥

इंद्रियाणां बलं बुद्धेः प्रसादो बह्निदीप्तिता ॥ ४५ ॥

धातुस्थैर्यं बलस्थैर्यं भवेद्रेचनसेवनात् ॥

प्रवातसेवां शीतांबु स्नेहाभ्यंगमजीर्णताम् ॥ ४६ ॥

व्यायामं मैथुनं चैव न सेवेत विरेचितः ॥

शालिपट्टिकमुद्गाद्यैर्यवागूं भोजयेत्कृताम् ॥

जंघालविष्किराणां वा रसैः शाल्योदनं हितम् ॥ ४७ ॥

इति शार्ङ्गधरात् ॥

शंभोर्वीजं सटकं वलिमरिचयुतं शृंगवेरं च तुल्यं

योज्यं नैकुंभवीजं शिखिगणवलिनं मर्दितं याममेकं ।  
भुक्तं गुंजादिमात्रं शिशिरजलयुतं त्यक्ततप्तत्वमुच्चै-  
रिच्छाभेदी रसोयं प्रवलमलहरः सर्वरोगैकहर्ता ॥ ४८

इति सारसंग्रहात् ॥

“व्योपवैरैलामुस्तविडंगं पत्रमखिलसममत्रलवंगम् ॥  
सर्वेभ्यो द्विस्त्रिवृताकंदं प्रवलमलहरमुष्णकवंधम् ॥

शिवा कृष्णामूलं त्रिकदुकमंजाजी जलधर-

स्त्रिवृद्वात्रीभूर्मातिरुपदुविडंगामरंसुमम् ॥

दलंकुष्ठं हिं गुज्ज्वलनशितिसंपिष्यमृदुलं

जलैरावेग्युत्थैर्मलहरमिदंसूष्णपयसा ॥”

जैपालेन समं सूतव्योपटंकणगंधकम् ॥

नाराचः स्याद्रसो मापमात्रः सर्पिःसितायुतः ॥ ४९ ॥

हंति संग्रहमानाहमामगूलं नवज्वरम् ॥

वेलाज्वरं विरेकेण शीतलांबुनिपेवणात् ॥ ५० ॥

इति नाराचो रसः रसरत्नप्रदीपात् ।

शुंठी तीक्ष्णरसेद्रटकणवल्लिप्रोक्तं समं तद्विधा ॥

कुंभवीजयुतं विमर्षं सभवेदिच्छाविभेदी रसः ॥ ५१ ॥

षष्ठः शर्करयाऽधिकूपचुलुकं पुंसः सुखं रेचये-

न्निःशोषं मलदोषमेव विनिहंत्युच्चैर्यथेमं हरिः ॥ ५२ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां विरेकविधिर्नाम सप्तमस्तरंगः ॥

अथ वस्तिविधिः ॥

वस्तिर्द्विधानुवासाख्यो निरुहश्च ततः परम् ॥

१ जमानगोग । २ उष्णजलं न पिबेत् । ३ त्रिकटु । ४ पत्रज । ५ अथवा एक  
नाम । ६ उष्णजलं । ७ जीर्ण । ८ भूम्यामले । ९ तथैव १० पत्रज । ११ वि-  
चक । १२ जेचुलपीवेन्दुलनामै । १३ मिरष । १४ गन्धक । १५ जमानगोग ।

१ः स्नेहैर्दीयते स स्यादनुवासननामकः ॥ १ ॥  
 कषायक्षीरतैलैर्वा निरूहः स निगद्यते ॥  
 वस्तिभिर्दीयते यस्मात्तस्माद्वस्तिरिति स्मृता ॥ २ ॥  
 मृगाऽजशूकरगवां महिषस्यापि वा भवेत् ॥  
 मूत्रकोशस्तु वस्तिः स्यादलाभे चान्यचर्मजः ॥ ३ ॥  
 नेत्रं कार्यं सुवर्णादि धातुमृदूक्षवेणुभिः ॥  
 नैलैर्दन्तैर्विषाणाग्रैर्मणिभिर्वा विधीयते ॥ ४ ॥  
 आतुरांगुष्ठमानेन मूले स्थूलं विधीयते ॥  
 कनिष्ठिकापरीणाहमग्रे च गुटिकामुखम् ॥ ५ ॥  
 मुद्गच्छिद्रयुतं वक्त्रे गोपुच्छसदृशं दृढम् ॥  
 षडंगुलमितं तच्च किंवा स्याद्वादशांगुलम् ॥ ६ ॥  
 योजयेत्तत्र वस्तिं च बन्धद्वयविधानतः ॥  
 उत्तमस्य पलैः षड्विर्मध्यमस्य पलैस्त्रिभिः ॥ ७ ॥  
 पलेनार्धेन हीनस्य युक्ता मात्राऽनुवासने ॥  
 भोजयित्वा यथाशास्त्रं कृतचक्रमणं ततः ॥ ८ ॥  
 उत्सृष्टानिलविण्मूत्रं योजयेत्स्नेहवस्तिना ॥  
 गुप्तस्य वामपार्श्वे वा वामजंघाप्रसारिणः ॥ ९ ॥  
 प्रकुंचितान्यजंघस्य नेत्रं स्निग्धे गुदे न्यसेत् ॥  
 शमेन पाणिना वस्तिकंठमालिंघ्य धीरधीः ॥ १० ॥

१ यस्मात्तद्वस्तिभिरुदकोशाद्यैः दीयते गुददेशे तस्मात्तद्वस्तिरिति स्मृतं ।  
 २ गुदप्रवेशनलिका । ३ रूप । ४ नरखल । ५ वस्तिदन्तैः । ६ सूर्यकांतादिभिः ।  
 ७ एकजर्षादारभ्य यावत्पञ्चद्वयं तावत्षडंगुलमानं नेत्रमवति । ततः पञ्चद्वयात् यावत्  
 द्वादशजर्षा स्यात् तावत् अष्टममित अष्टांगुलप्रमाणं नेत्रं स्यात् ततः परं  
 द्वादशजर्षानन्तरं द्वादशभिः अंगुलेर्नेत्रं ईष्यतां प्राप्यतां । ८ उत्तमबलपु  
 रस्य । ९ सार्धपलेन । १० अतिस्निग्ध । १० इतस्ततश्चालितं । ११ वस्ति-  
 मुख । १२ रुद्धा ।

वस्ति संपीडयेत्पश्चात्सध्यवेगोन्यपौणिनां ॥  
 जंभाकासक्षवादींश्च वस्तिकाले न कारयेत् ॥ ११ ॥  
 त्रिंशन्मात्रांमितिः कालः प्रोक्तो वस्तेस्तु पीडने ॥  
 जाते विधाने तु ततः कुर्यान्निद्रां यथासुखम् ॥ १२ ॥  
 सतैलः सपुरीषश्च स्नेहः प्रत्येति यस्य तु ॥  
 उपद्रवं विना चैव स सम्यगनुवासितः ॥ १३ ॥  
 अनेन विधिना देयाः सप्त वाष्टौ नवौपि वा ॥  
 अनायाते त्वहोरात्रे स्नेहं संशोधनैर्हरेत् ॥ १४ ॥  
 अतिसंक्षेपतः प्रोक्तो वस्तिरेपाऽनुवासनः ॥  
 इत्यनुवासनवस्तिः । अथ निरूहवस्तिः ॥  
 निरूहस्यापरं नामप्रोक्तमास्थापनं बुधैः ॥  
 स्वस्थानस्थापनादोपधातूनां स्थापनं मतम् ॥ १५ ॥  
 निरूहस्य प्रमाणं तु प्रस्थं पादोत्तरं मतम् ॥  
 मध्यमं प्रस्थमुद्विष्टं हीनं च कुडवास्त्रयः ॥ १६ ॥  
 अनुवास्यस्तु रुक्षः स्यात्तीक्ष्णाग्निः केवलानिली ॥  
 नानुवास्यस्तु कुष्ठी वै मेही स्थूली तथोदरी ॥ १७ ॥  
 न स्थाप्या नानुवास्याः स्युरजीर्णोन्मादतृड्युताः ॥  
 शोकमूर्च्छारुचिभयाश्वासकासक्षयातुराः ॥ १८ ॥  
 अतिस्लिग्धः क्लिष्टदोषः क्षतोरस्कः रुशस्तथा ॥  
 आध्मानच्छर्दिहिकार्शःकासश्वासप्रपीडितः ॥ १९ ॥  
 गुदे शोफातिसारातो विसृचीकुष्ठसंयुतः ॥  
 गर्भिणी मधुमेहीचनास्थाप्यश्च जलोदरी ॥ २० ॥

१ प्रवेद्येत् । २ निश्चलप्रमाणम् । ३ दक्षिणहस्तेन । ४ जानुर्गड  
 मायेष्टचतुर्याष्टैः कुर्यात् । ५ एवमात्राभेदे दशमर्शत्रयनिश्चयः इत्युक्तं  
 ६ 'सप्त वाष्टौ च वस्तय' इति वा पाठः । ६ वरणाधिकम् ।

वातव्याधावुदावर्ते वातासृग्विषमज्वरे ॥

मूर्छातृष्णोदरानाहमूत्ररुच्छ्राश्मरीषु च ॥ २१ ॥

वृद्धासृग्दरमंदाग्निप्रमेहेषुनिरूहणम् ॥

मगधामधुंकाभयविल्ववचा-

मिसिपुष्करमूलसटीशिखिभिः ॥

मदनामरदारुयुतैर्विषचे-

त्पयसागुदवस्तिपुतैलमिदम् ॥ २२ ॥

गुडार्तिडिकाकुडवस्तुभवेदपिचात्रंमूत्रकुडवद्वितयम् ॥

मिसिरामंठराठंकांसिधुयुतंनृनिरूहणंहिविहितंमुनिभिः ॥

इतिदिङ्मात्रोनिरूहवस्तिः ॥

अतः परं प्रवक्ष्यामिवस्तिमुत्तरसंज्ञितम् ॥

द्वादशांगुलमानेन नेत्रं वा सर्पकर्णिकम् ॥ २३ ॥

मालतीपुष्पवृंताभं छिद्रं सर्पपनिर्गमम् ॥

पंचविंशतिवर्षाणामधोमात्रा द्विकर्षिकी ॥ २५ ॥

तदूर्ध्वं पलमात्रा हि स्नेहस्यापि भिषग्वरैः ॥

स्थितस्य जानुमात्रे च पीठेऽन्विष्य शलाकया ॥ २६ ॥

स्निग्धयामेदूमार्गे च ततो नेत्रं नियोजयेत् ॥

अनुवासक्रमः सर्वोऽप्यन्यो वापि निवेदितः ॥ २७ ॥

खीणांदशांगुलं नेत्रं स्थूलं श्रोतं कनिष्ठया ॥

मुद्गच्छिद्राननं योज्यं योन्यंतश्चतुरंगुलम् ॥

व्यंगुलं मूत्रमार्गे तु सूक्ष्मं नेत्रं नियोजयेत् ॥

मूत्ररुच्छ्रविकारेषु बालानामेकमंगुलम् ॥ २८ ॥

१ महुया । २ गोमुत्र । ३ होग । ४ मदनफल । ५ नलिता-  
लक्षणम् । ६ मध्येकृतकर्णिक कमलपत्रंकार्णिकायन्मध्यमाय । ७ प-  
चविंशतेरूर्ध्वस्नेहस्यपल० । ८ छिद्रकृत्या । ९ निरूह ।  
१० मेद्रे ।



स्वेदावरोधः संतापः सर्वांगग्रहणं तथा ॥

युगपद्यत्र रोगे तु स ज्वरः परिकीर्तितः ॥ १५ ॥

इति सामान्यज्वरलक्षणम् ॥ अथ वातज्वरलक्षणम् ॥

वेपथुर्विषमो वेगः कंठौष्ठमुखशोथणम् ॥

निद्रानाशः क्षवस्तंभो गात्राणां रौक्ष्यमेव च ॥ १६ ॥

शिरोद्ध्वान्तरुग्बक्रवैरस्यं गाढविट्ठता ॥

गूलाध्माने जृम्भणं च भवन्त्यनिलजे ज्वरे ॥ १७ ॥

अथ पित्तज्वरलक्षणम् ॥

वेगस्तीक्ष्णोतिसारश्च निद्राल्पत्वं तथा वमिः ॥

कंठौष्ठमुखनासानां पाकः स्वेदश्च जायते ॥ १८ ॥

प्रलापो वक्रकटुता मूर्छा दाहो मदस्तृषा ॥

पीतविण्मूत्रनेत्रत्वं पैत्तिके भ्रम एव च ॥ १९ ॥

अथ श्लेष्मज्वरलक्षणम् ॥

स्तैमित्यं स्तिमितो वेग आलस्यं मधुरास्यता ॥

गुल्ममूत्रपुरीषत्वं स्तंभस्तृप्तिस्तथैव च ॥ २० ॥

गौरवं शीतमुत्केदो रोमहर्षोतिनिद्रता ॥

अंगेषु पिडिकाः शीताः प्रसेकश्छर्दितन्द्रिके ॥ २१ ॥

कंडूप्रलापउष्णाभिलापिता वह्निमार्दवम् ॥

प्रतिश्यायोरुचिः कासः कफजेक्ष्णोश्च गुल्मता ॥ २२ ॥

इति श्लेष्मज्वरलक्षणम् ॥

अथ वातपित्तज्वरलक्षणम् ॥

तृष्णा मूर्छा भ्रमो दाहः स्वप्ननाशः शिरोरुजा ॥

कंठास्यशोषो वमथू रोमहर्षोरुचिस्तमः ॥

पर्वभेदश्च जृम्भा च वातपित्तज्वराकृतिः ॥ २३ ॥

छर्दिस्तृष्णा च मूच्छा च तथा पानात्ययादयः ॥  
दाहारव्यश्च तथोन्मादो ह्यपस्मारो निलामयः ॥ ३ ॥  
वातरक्तमुरुस्तंभमामवातोथ गूलरुक् ॥  
पक्तिजं गूलमानाहमुदावर्तोथ गुल्मरुक् ॥ ४ ॥  
हृद्रोगो मूत्ररुच्छं च मूत्राघातस्तथाश्मरी ॥  
प्रमेहो मधुमेहश्च पिडकाश्च प्रमेहजाः ॥ ५ ॥  
मेदोदोषोदरं शोथो वृद्धिश्च गलगंडकः ॥  
गंडमालापची ग्रंथी ह्यर्बुदं श्लीपदं तथा ॥ ६ ॥  
विद्रधी व्रणशोथौ च द्वौ व्रणौ भग्नन्दाडिकौ ॥  
भगंदरोपदंशौ च शूलदोषस्त्वगामयः ॥ ७ ॥  
शीतपित्तमुददंश्चोत्कोठकश्चान्लपित्तकम् ॥  
विसर्पश्च सविस्फोटस्तथैव च मसूरिका ॥ ८ ॥  
क्षुद्रास्यकर्णनासाक्षिशिरस्त्रीवालकामयाः ॥  
विषं चेत्ययमुद्देशः संग्रहेस्मिन्प्रकीर्तितः ॥ ९ ॥  
तत्र क्रमप्राप्तस्य प्रथमं ज्वरस्य लक्षणम् ॥  
देहेंद्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो वली ॥ १० ॥  
ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा ॥  
दक्षापमानसंकुडुरुद्रनिश्वाससंभवः ॥ ११ ॥  
ज्वरोष्ठधा पृथग्द्वंद्वसंवातागंतुजः स्मृतः ॥  
भिध्याहारविहाराभ्यां दोषा ह्यामाशयाश्रयाः ॥ १२ ॥  
वहिर्निरस्य कोष्ठाग्निं ज्वरदाः स्यू रसानुगाः ॥  
श्रमोरतिर्विषण्णत्वं वैरस्यं नयनप्लवः ॥ १३ ॥  
इच्छाद्वेषौ मुहुश्चापि शीतवातातपादिषु ॥  
जृम्भांगमर्दौ गुरुता रोमहर्षोरुचिस्तमः ॥ १४ ॥  
अप्रहर्षश्च शीतं च भवंत्युत्पत्स्यति ज्वरे ॥

कृशत्वं नातिगात्राणां सततं कंठकूजनम् ॥ ३३ ॥

कोष्ठानां श्यामरक्तानां मंडलानां च दर्शनम् ॥

मूकत्वं स्रोतसां पाको गुरुत्वमुदरस्य च ॥

त्रिरात्पाकश्च दोषाणां सन्निपातज्वराकृतिः ॥ ३४ ॥

अथ भल्लूकमतात्रयोदश सन्निपाता लिख्यन्ते ॥

ह्रस्वणैः श्लेष्मणैः पट् स्युर्हीनमध्याऽधिकैश्च पट् ॥

समैश्चैको विकारास्ते सन्निपातास्त्रयोदश ॥ ३५ ॥

तृष्णा तंद्रा भ्रमः कासस्तालुशोषो ज्वरोऽरुचिः ॥

आनाहो गात्रसंभेदः श्वासकं पश्चमभ्रमाः ॥ ३६ ॥

विद्वास्थ्ये सन्निपाते स्याद्वल्लिगं पित्तानिलोत्त्वणे ॥

संभेदो दक्षिणे पार्श्वे हृदि शीर्षे गलग्रहः ॥ ३७ ॥

दाहोऽतः शीतता वाह्ये निष्ठीवः कफपित्तयोः ॥

हिक्का प्रमीलकः श्वासो निद्रा कंठप्रतापकः ॥ ३८ ॥

तृष्णा पुरीषसंभेदो वदने तिक्तं तारुचिः ॥

कफपित्तात्मके चैतल्लक्षणं भल्लसंज्ञके ॥ ३९ ॥

क्षुण्णाशो जठरे दाहः कटिर्वस्त्योश्च दूयनम् ॥

शिरोगौरवमालस्यं निद्रा शीतज्वरो रुजा ॥ ४० ॥

मन्यास्तंभः प्रवांतिश्च तृष्णायाश्च विनिग्रहः ॥

सन्निपाते शर्करास्थ्ये कफवातोत्त्वणे भवेत् ॥ ४१ ॥

मूर्छां ग्लानिर्ज्वरो हिक्का तृष्णा दाहो वलक्षयः ॥

उरःसादोऽतिनिद्रा च स्फुरणं गुदनिसृतिः ॥ ४२ ॥

पर्वशूलं प्रलापश्च विण्मूत्रं शोणितप्रभम् ॥

पिडिकोद्वेष्टनं शूलं वंस्तिकर्पः प्ररोदनम् ॥ ४३ ॥

अथ वातश्लेष्मज्वरलक्षणम् ॥

स्तैमित्यं पर्वणां भेदो निद्रा गौरवमेव च ॥

शिरोग्रहः प्रतिश्यायः कासः स्वेदाप्रवर्तनम् ॥

संतापो मध्यवेगश्च वातश्लेष्मज्वराकृतिः ॥ २४ ॥

इति वातश्लेष्मज्वरलक्षणम् ॥

अथ श्लेष्मपित्तज्वरलक्षणम् ॥

लिप्ततिकास्यता तंद्रा मोहः कासोरुचिस्तृषा ॥

मुहुर्दाहो मुहुः शैत्यं श्लेष्मपित्तज्वराकृतिः ॥ २५ ॥

इति श्लेष्मपित्तज्वरलक्षणम्

सामान्यतो विशेषात्तु जृम्भात्यर्थं समीरणात् ॥

पित्तान्नयनयोर्दाहः कफान्नान्नाभिनन्दनम् ॥ २६ ॥

सर्वलिंगसमावायः सर्वदोषप्रकोपजे ॥

रूपैरन्यतराभ्यां च संसृष्टं द्वंद्वजं विदुः ॥ २७ ॥

अथ संनिपातज्वरलक्षणम् ॥

क्षणे दाहः क्षणे शीतमस्थिसंधिशिरोरुजा ॥

सस्त्रावे कलुषे रक्ते निर्भुग्रे चापि लोचने ॥ २८ ॥

सस्वनौ सरुजौ कर्णौ कंठः शूकैरिवावृतः ॥

तंद्रा मोहः प्रलापश्च कासः श्वातो रुचिर्भ्रमः ॥ २९ ॥

तद्वच्छीतं महानिद्रा दिवा जागरणं निशि ॥

सदा वा नैव वा निद्रा महास्वेदोऽथ नैव वा ॥ ३० ॥

गीतनर्तनहास्यादिविकृतेहाप्रवर्तनम् ॥

परिदग्धा स्वरस्पर्शा जिह्वा स्रस्तांगता परम् ॥ ३१ ॥

घोवनं रक्तपित्तस्य कफेनोन्मिथ्रितस्य च ॥

शिरसोलुंठनं तृष्णा निद्रानाशो हृदि व्यथा ॥ ३२ ॥

स्वेदमूत्रपुरीषाणां चिराद्दर्शनमल्पशः ॥

व्यालाकृतिः स विज्ञेयस्त्रयहादवाङ् न सिध्यति ॥ ५५ ॥  
 मध्यक्षीणाधिका यत्र कुर्युर्वातादयः क्रमात् ॥  
 स्वंस्वं रूपं स्वशक्त्या च जिह्वां स्तब्धां सुकर्कशाम् ॥ ५६ ॥  
 कंठकूजनमालस्यं मुखमौलक्तकोपमम् ॥  
 शूकपूर्णगलत्वं च शुष्ककंठोष्ठतालुकः ॥ ५७ ॥  
 अंतर्दाहं गुदभ्रंशं वाग्भ्रंशं दृष्टिनिग्रहम् ॥  
 सरक्तकफनिष्ठीवं रुच्छ्रात्स्तोकं मुहुर्मुहुः ॥ ५८ ॥  
 प्रमीलश्वासकासानां प्रत्यहं परिवर्धनम् ॥  
 अनिष्टेच्छा मनोग्लानिः पार्श्वे वाणहतोपमे ॥ ५९ ॥  
 कफस्याकृष्यमाणस्य हृदयादप्रवर्तनम् ॥  
 पार्श्वघातं तथा कर्ण्डैस्तुद्यते भिद्यते भृशम् ॥ ६० ॥  
 एष कर्कटको नाम सन्निपातः सुदारुणः ॥  
 वृद्धमध्यमहीनास्तु कुर्युर्वातादयः क्रमात् ॥ ६१ ॥  
 एकपक्षाभिघातं च यत्र लिंगं स्वकंस्वकम् ॥  
 कंपमूर्छाभ्रमायासविलापारतिमोहनम् ॥ ६२ ॥  
 तंमोहक इति ख्यातः सन्निपातोतिकष्टदः ॥  
 हीनप्रवृद्धमध्याख्या यत्र वातादयः क्रमात् ॥ ६३ ॥  
 कुर्वत्यतोनेकगदं स्वंस्वं लिंगं च शक्तिः ॥  
 कफपित्तांशजांस्तेभ्यो निर्गमः स्फोटसंभवः ॥ ६४ ॥  
 सर्वस्त्रोतःप्रपाकश्च संग्रामाख्ये ज्वरे मतः ॥  
 प्रवृद्धहीनमध्यस्था यत्र वातादयः क्रमात् ॥ ६५ ॥  
 स्वंस्वं लिंगं प्रकुर्वति विलापायासकंपनम् ॥  
 मन्यास्तंभं च मृत्युं च मूर्छामोहोरतिभ्रमम् ॥ ६६ ॥  
 सन्निपातः सविज्ञेयस्तज्ज्ञैः कंकचसंज्ञितः ॥

दाहः सर्वाङ्गसंभेदो दर्शनस्य च निग्रहः ॥  
 लिंगं विस्फुरकारुष्ये तु सन्निपातेनिलोत्वणे ॥ ४४ ॥  
 बहिरंतर्ज्वरो दाहः शीतयोगात्कफानिलौ ॥  
 कुरुतः कुपितौ श्वासकासहिक्काप्रमीलकान् ॥ ४५ ॥  
 पर्वभेदं विसूर्ची च प्रलापं गौरवं क्लमम् ॥  
 नाभिपार्श्वे रुजा तस्य छिन्नः श्वासः प्रवर्तते ॥ ४६ ॥  
 स्रोतोभ्यः शोणतावृत्तिः गूलः श्वासस्तृपा भृशम् ॥  
 स्यादहोरात्रजीवित्वं पित्ताढ्ये शीघ्रकारिणि ॥ ४७ ॥  
 तंद्रा शीतज्वरो दाहो हृद्ग्रहो मधुरास्यता ॥  
 अरुचिर्गौरवालस्ये श्लेष्मनिधीवनं भृशम् ॥ ४८ ॥  
 तृप्तिर्मूर्छा वमिस्तृष्णा दृष्टिवाक्छ्रोत्रनिग्रहः ॥  
 कफस्य निग्रहात्पित्तं कुर्यात्सोपद्रवं ज्वरम् ॥ ४९ ॥  
 पित्तस्य निग्रहात्कुब्जो मेदोमज्जास्थितोनिलः ॥  
 हृद्भेदं बहिरार्यासं कृत्वा हंत्युपवासतः ॥ ५० ॥  
 अत्र चेत्क्षीयति भुंक्ते वा त्रिरात्रं नैव जीवति ॥  
 भवेत्फणके रूपं सन्निपाते कफोत्वणे ॥ ५१ ॥  
 मध्यक्षीणाधिकाः कुर्युः पित्तवातकफाः क्रमात् ॥  
 मध्यं दाहं ज्वरं नित्यं स्वल्पगूलं विसंज्ञताम् ॥ ५२ ॥  
 मन्यायां हृदये कंठे मस्तके वदने रुजम् ॥  
 हिक्काङ्गगौरवं ग्लानिं वाक्सङ्गं तनुसङ्गताम् ॥ ५३ ॥  
 प्रमीलं च कटीतोदं कासं श्वासं च जत्रुरुक् ॥  
 उत्प्रेष्य कर्णमूलं च गूलं शान्तिं गता अपि ॥ ५४ ॥  
 कुर्वति कर्णमूलारुच्यं पिडिकां कर्णमूलजाम् ॥

१ नेत्रस्य । २ नाशः । ३ पुंसः । ४ दृष्टिरप्रवृत्तिः । ५ नाभिः ।  
 ६ वेदः । ७ तपनात् । ८ व्याघ्र कुरुते । ९ नाभिः । १० मूर्खत्वं  
 ११ तंद्रा । १२ प्रकटीकृत्य ।

क्रमादसाध्यः खलु कृच्छ्रसाध्यः

सुखेन साध्यो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥ ७७ ॥

त्रयः प्रकुपिता दोषा-ऊरःस्रोतोनुगामिनः ॥

आमाववद्धा ग्रथिता बुद्धीन्द्रियमनोगताः ॥ ७८ ॥

जनयन्ति महाघोरमभिन्यासं ज्वरं दृढम् ॥

तेन संजीयते रोगी गतसर्वेन्द्रियक्रियः ॥ ७९ ॥

प्रत्याख्येयः स भूयिष्ठं कश्चिदेवात्र सिध्यति ॥

अभिचाराभिपंगाभ्यामभिघाताभिशापतः ॥ ८० ॥

आगंतुर्जायते दोषैर्यथास्वं तं विभावयेत् ॥

श्यावास्यता विपकृते तथातीसार एव च ॥ ८१ ॥

भक्तारुचिः पिपासा च तोदश्च सह मूर्छया ॥

औषधीगंधजे मूर्छा शिरोरुग्बमथुस्तथा ॥ ८२ ॥

कामजे वित्तविभ्रंशस्तंद्रालस्यमभोजनम् ॥

भयात्प्रलापः शोकाच्च भवेत्कोपाच्च वेपथुः ॥ ८३ ॥

अभिचाराभिशापाभ्यां मोहस्तृष्णा च जायते ॥

भूताभिपंगादुद्वेगो हास्यरोदनकंपनम् ॥ ८४ ॥

कामशोकभयाद्वायुः क्रोधान्नित्यं त्रयो मलाः ॥

भूताभिपंगात्कुप्यन्ति भूतसामान्यलक्षणाः ॥ ८५ ॥

दोषोल्पो हितसंभूतो ज्वरोत्सृष्टस्य वा पुनः ॥

धातुमन्यतमं प्राप्य करोति विषमज्वरम् ॥ ८६ ॥

यः स्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यां तथैव च ॥

वेगतश्चापि विषमः स ज्वरो विषमो मतः ॥ ८७ ॥

संततः सततोन्प्रेद्युस्तृतीयकचतुर्थकौ ॥

संततो रसरक्तस्यः सततो रक्तधातुगः ॥ ८८ ॥

अन्येद्युष्कं प्रकुरुते दोषं पिशितधातुगः ॥

मध्यप्रवृद्धहीनाश्च यत्र वातादयः क्रमात् ॥ ६७ ॥  
 स्वंस्वं लिङ्गं प्रकुर्वन्ति स्तब्धदृष्टिश्च मानवः ॥  
 अंतःपाकं यकृत्क्षीहृत्क्षोमां त्रौदरेषु च ॥ ६८ ॥  
 पूयस्त्रावं गुदास्याभ्यां शीर्णदंतगतिर्नृणाम् ॥  
 मर्मांतरहतस्येव शयनं च विशेषतः ॥ ६९ ॥  
 पाकलाव्यः सविज्ञेयो सन्निपातोतिदारुणः ॥  
 वृद्धा वातादयो यत्र स्वैस्वैर्लिङ्गैः समन्विताः ॥ ७० ॥  
 उच्छ्वासपरतां कुर्युर्मूकतां स्तब्धतां दृशः ॥  
 आस्यदंतश्रुतेर्नाशं स्तब्धांगत्वं विसंज्ञनाम् ॥ ७१ ॥  
 जीवनं च त्र्यहेतीति स ज्ञेयः कूटपालकः ॥  
 कूटपालकिनं दृष्ट्वा व्योहरन्त्यल्पबुद्धयः ॥  
 गृहभूतपिशाचाद्यैर्विषाद्यैर्वापि वीक्षितम् ॥ ७२ ॥

इति त्रयोदश सन्निपाताः ॥

दोषे प्रवृद्धे नष्टेऽग्नौ सर्वसंपूर्णलक्षणः ॥  
 सन्निपातज्वरोऽसाध्यः कृच्छ्रसाध्यस्ततोऽन्यथा ॥ ७३ ॥  
 सप्तमे दिवसे प्राप्ते दशमे द्वादशेऽपि वा ॥  
 पुनर्घोरतरो भूत्वा प्रशमं याति हन्ति वा ॥ ७४ ॥  
 पित्तकफानिलवृद्ध्या दशदिवसद्वादशाहसप्ताहात् ॥  
 हन्ति विमुञ्चति पुरुषं त्रिदोषजो धातुमलपाकात् ॥ ७५ ॥  
 सप्तमी द्विगुणा यावन्नवम्येकादशी तथा ॥  
 एषा त्रिदोषमर्यादा मोक्षाय च वधाय च ॥ ७६ ॥  
 ज्वरस्य पूर्वं ज्वरमध्यतो वा  
 ज्वरांततो वा श्रुतिमूलशोथः ॥



हिकाश्वासतृषायुक्तो मूढो विभ्रांतलोचनः ॥

सततोच्छ्वासहीनश्च म्रियंते ज्वरपीडितः ॥ १०२ ॥

वेहोलघुर्व्यपगतक्लममोहतापः

पाको मुखे करणसौष्टवमव्ययत्वम् ॥

स्वेदः क्षवः प्रकृतियोगिमनोन्नलिप्सा

कंपश्च मूर्ध्नि विगतज्वरलक्षणानि ॥ १०३ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां संक्षेपतो ज्वरनिदाननिरूपणं

नामैकोनविंशस्तरंगः ॥ १९ ॥

अथ क्रमप्राप्तस्य प्रथमं ज्वरस्य चिकित्सा ॥

ज्वरे लंघनमेवादाबुपदिष्टमृते ज्वरात् ॥

क्षयानिलभयक्रोधकामशोकश्रमोद्भवात् ॥ १ ॥

आमाशयस्थो हत्वाग्निं सामोमार्गान्पिधापयन् ॥

विदधाति ज्वरं दोषस्तस्माल्लंघनमाचरेत् ॥ २ ॥

अनवस्थितदोषाग्नेर्लंघनं दोषपाचनम् ॥

ज्वरघ्नं दीपनं कांक्षारुचिलाघवकारकम् ॥ ३ ॥

बलाविरोधिना चैनं लंघनेनोपपादयेत् ॥

बलाधिष्ठानमारोग्यं यदर्थोयं क्रियाक्रमः ॥ ४ ॥

चक्रदत्तात् ॥

न लंघयेत्मारुतजे ज्वरे च

क्षयोद्भवे च क्षुधिते च जंतौ ॥

न गुर्विणीदुर्वलवालवृद्धान्

भीतांस्तृपात्तानपि सोर्ध्ववातान् ॥ ५ ॥

आससरात्रं तरुणं ज्वरमाहुर्मनीषिणः ॥

मेदोगतस्तृतीयारव्यमस्थिमज्जागतः पुनः ॥ ८९ ॥  
 कुर्याच्चातुर्थिकं घोरमंतकं रोगसंकरम् ॥  
 सप्ताहं वा दशाहं वा द्वादशाहमथापि वा ॥ ९० ॥  
 संतत्या यो विसर्गी स्यात्संततः स निगद्यते ॥  
 अहोरात्रे सततको द्वौ कालावनुवर्तते ॥ ९१ ॥  
 अन्येद्युष्मस्त्वहोरात्रमेककालं प्रवर्तते ॥  
 तृतीयकस्तृतीयेह्नि चतुर्थेह्नि चतुर्थकः ॥ ९२ ॥  
 इत्यादयस्तु विज्ञेया ज्वरा नानाविधा बुधैः ॥  
 श्वासोमूर्छारुचिच्छर्दिस्तृष्णातीसारविड्ग्रहाः ॥ ९३ ॥  
 हिक्काकासांगभेदाश्च ज्वरस्योपद्रवा दश ॥  
 तंद्रा लाला प्रसेकश्च स्तब्धता क्षुत्प्रणाशता ॥ ९४ ॥  
 ढल्लासो मूत्रभूयस्त्वं सामजज्वरलक्षणम् ॥  
 सामे न भेषजं देयं निरामे तद्विचारतः ॥ ९५ ॥  
 दाहः स्वेदो भ्रमस्तृण्णा कंपविड्भेदसंज्ञता ॥  
 कूजनं चातिवैगंध्यमाकृतिर्ज्वरमोक्षणे ॥ ९६ ॥  
 स्वेदो लघुत्वं शिरसः कंडूः पाको मुखस्य च ॥  
 क्षवधुश्चान्नकांक्षा च ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥ ९७ ॥  
 विगतक्लमसंतापमव्यथं विमर्लेन्द्रियम् ॥  
 शुक्तं प्रकृतिसत्त्वाम्बां विद्यात्पुरुषमज्वरम् ॥ ९८ ॥  
 दोषप्रकृतिवैकृत्यं लघुता ज्वरदेहयोः ॥  
 इंद्रियाणां च वैमर्त्यं दोषपाकस्य लक्षणम् ॥ ९९ ॥  
 निद्रानाशो हृदि स्तंभो विष्टंभो गौरवारुचिः ॥  
 अरतिर्वलहानिश्च घातूनां पाकलक्षणम् ॥ १०० ॥  
 हतप्रभेन्द्रियं क्षाममरोचकनिपीडितम् ॥  
 गंभीरं तीक्ष्णवेगार्तं ज्वरितं परिवर्जयेत् ॥ १०१ ॥

धोरापातेन विष्टंभि दुर्जरं पवनापहम् ॥ १६ ॥

गृतशीतं त्रिदोषघ्नं बाष्पांतर्भाविशीतलम् ॥

दिवागृतं तु यत्तोयं रात्रौ तद्गुरुतां व्रजेत् ॥ १७ ॥

रात्रौ गृतं तु दिवसे गुरुत्वमधिगच्छति ॥

मूर्छापित्तोष्मदाहेषु विपोत्ये च मदात्यये ॥ १८ ॥

श्रमकृमपरीते च मार्गोत्ये वमयौ तथा ॥

ऊर्ध्वगे रक्तपित्ते च शीतमंभः प्रशस्यते ॥ १९ ॥

अरोचके प्रतिश्याये प्रतेके श्वययौ क्षये ॥

मंदाग्नाबुदरे कुष्ठे ज्वरे नेत्रामये तथा ॥

व्रणे च मधुमेहे च पानीयं मंदमाचरेत् ॥ २० ॥

मदनपालात् ॥

पानीयं पानीयं शरदि वसंते च पानीयं ॥

नादेयं नादेयं शरदि वसंते च नादेयम् ॥ २१ ॥

रुटम् ॥

उक्तमस्य पलं मात्रा त्रिभिरक्षैश्च मध्यमा ॥

जयन्यस्य पलादैन स्नेहकाथौपधेषु च ॥ २२ ॥

कर्पं चूर्णस्य कल्कस्य गुटिकानां च सर्वशः ॥

द्रवशुक्तेयावलेढव्यः पातव्यश्च चतुर्द्रवः ॥

मात्रामधुघृतादीनां कायस्नेहेषु चूर्णितात् ॥ २३ ॥

द्विचत्वारिंशता मापैरष्टादशकवंथकैः ॥

१ गलेलात् पीमे । २ जलको धूम नलिकसे । ३ लघु । ४ जल ।  
५ पानार्द्रं भवति निर्मलत्वात् त्रिदोषघ्नत्वात् विश्लेषतः पित्तघ्नत्वात् । ६ रक्ष-  
णीय अल्प पेयम् । ७ नद्या भव । ८ अपि तु देय उक्तं हि तत्रांतरे । पर्यावस-  
तसमये कोप वारि प्रशस्यते । अमः शरदि वाढाग नादेय ऋतुपुत्रिपु । नद्युद्भव  
ऋतुपु त्रिप्यपि हेमन्तशिशिरमीप्सेषु देय ॥ ९ न माद्यम् । १० पुस्त ।  
११ अर्द्धपल । १२ चूर्णिते इति चूर्णवदिति च पात्रौ ।

मध्यं द्वादशरात्रं तु पुराणमत उत्तरम् ॥ ६ ॥

ज्वरितं ज्वरमुक्तं वा दिनेनांते भोजयेत्तु ॥

श्लेष्मक्षये प्रवृद्धोष्मा बलवाननलस्तदा ॥ ७ ॥

वातजः सप्तरात्रेण दशरात्रेण पित्तजः ॥

श्लेष्मजो द्वादशाहेन ज्वरः पाकं प्रपद्यते ॥ ८ ॥

दोषाणामेव सा शक्तिर्लंघने या सहिष्णुता ॥

न हि दोषक्षये कश्चित्सहते लंघनं महत् ॥ ९ ॥

नवज्वरे दिवास्वापस्नानभोजनमैधुनम् ॥

क्रोधप्रवातव्यायामकपायांश्च विवर्जयेत् ॥ १० ॥

निर्वातभवनावातमुष्णवारिनिषेवणम् ॥

अभूरिजल्पं निःक्रोधकामशोकं च रोगिणम् ॥

कारयेत्सुखसंपत्तयै शीघ्रं वैद्यो विचक्षणः ॥ ११ ॥

इति चक्रदत्तात् ॥

कफमेदोनिलामघ्नं दीपनं वस्तिशोधनम् ॥

कासश्वातज्वरहरं पथ्यमुष्णोदकं सदा ॥ १२ ॥

यत्काथ्यमानं निर्वैगं निःफेनं निर्मलं भवेत् ॥

अर्द्धावशिष्टं भवति तदुष्णोदकमुच्यते ॥ १३ ॥

तत्पादहीनं पित्तघ्नमर्द्धहीनं च वातजित् ॥

रूफघ्नं पादशेषं च षाचनं लघु दीपनम् ॥ १४ ॥

शारदं चार्धपादोनं पादहीनं च हैमनम् ॥

शिशिरे च वसंते च ग्रीष्मे चार्द्धावशेषितम् ॥ १५ ॥

विपरीते ऋतौ तद्वत्प्रावृष्यष्टावशेषितम् ॥

भिनन्ति श्लेष्मसंघातं मारुतं चापकर्षति ॥ १६ ॥

अजीर्णं जरयत्याशु पीतमुष्णोदकं निशि ॥

पृथौ वातज्वरे सर्वाल्लिगे सप्तमवासेरे ॥ ३३ ॥

इति वातज्वरे गुडूच्यादिः ।

शालिपर्णी वला द्राक्षा गुडूची सारिवा तथा ॥

आसां काथं पिवेत्कोष्णं तीव्रवातज्वरच्छिदम् ॥ ३४ ॥

इति शालिपर्ण्यादिः ॥

किराताञ्जामृतोदीच्यवृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥

संस्थिराकंलसीविश्वैः काथो वातज्वरापहः ॥ ३५ ॥

इति किरातादिः ॥

‘रसं विपं गंधकतालटंकणं

कटुत्रजैपालफलत्रिकं समम् ॥

विमर्द्य भृंगस्य रसेन कल्पिता

वटी वरा सर्वगदान्निहन्ति ॥ ३६ ॥

रोगे यदिष्टं त्वनुपानमात्रा

देया वटी तेन समा भिषग्भिः ॥

पाश्चात्यदेशागतयोगिनेय-

मुक्तानुयुक्तानुभवेन पश्चात् ॥ ३७ ॥

अश्वकंचुकीरसैः ॥

काश्मरीसारिवाद्राक्षात्रायमाणामृताभवः ॥

कषायः सगुडः पीतो वातज्वरविनाशनः ॥ ३८ ॥

इति काश्मर्यादिः । इति वातज्वरचिकित्सा । अथ पित्ते ॥

कट्फलैर्द्रव्यवारिष्टतिका मुस्तैः शृतं जलम् ॥

पाचनं दशमेदि स्यात्तत्रे पित्तज्वरे नृणाम् ॥ ३९ ॥

इति कट्फलादिः ॥

दुरालभापर्पटकप्रियंगु-

भूर्निववासाकंदुरोहिणीनाम् ॥

क्वाथं पिबेच्छर्करयावगाढं

तृष्णास्रपित्तज्वरदाहयुक्तः ॥ ४० ॥

योगशतात् ॥

एकः पर्पटकः श्रेष्ठः पित्तज्वरविनाशनः ॥

किं पुनर्यादि पूज्येत चंदनोशीरधान्यकैः ॥ ४१ ॥

वृंदात् ॥ इति पित्तज्वरचिकित्सा ॥ अथ श्लेष्मजे ॥

बीजपूरशिंफापथ्यानागरग्रंथिकैः शृतम् ॥

सक्षारं पाचनं श्लेष्मज्वरे द्वादशवासरे ॥ ४२ ॥

इति बीजपूरादिः ॥

भूर्निवनिंबपिप्पल्यः सटी गुंठी शतावरी ॥

गुडूची बृहती चेति क्वाथो हन्यात्कफज्वरम् ॥ ४३ ॥

इति भूर्निवादिः ॥

आमलक्यभया कृष्णा चित्रकश्चेत्पयं गणः ॥

सर्वज्वरभयोतंकभेदी दीपनपाचनः ॥ ४४ ॥

इत्यामलक्यादिः ॥

कट्फलं पौष्करं कृष्णा गुंठी च मधुना सह ॥

श्यासकासहरः श्रेष्ठो प्रोक्तो लेहकफान्तरुत् ॥ ४५ ॥

इति चतुर्भद्रावलेहिका वृंदात् ॥

छिन्नोद्भवांबुधरधन्वयवासविश्वै-

र्दुःस्पर्शपर्पटकमेघकिराततिकैः ॥

मुस्ताट्ठरूपकमहौषधधन्वयासैः

क्वाथं पिवेदनिलपित्तकफज्वरेषु ॥ ४६ ॥

पृथक्पृथक् त्रिभिश्चरणैः कथितैः काथैर्वातादिषु योगाः ॥

अमृतारिष्टकचंदनपद्मकधानोद्भवः काथः ॥

ज्वरहृत्तासच्छर्दिस्तृष्णादाहारुचीर्हन्यात् ॥ ४७ ॥

सर्वस्वरे गुडच्यादिः योगज्ञतात् ॥ इति श्लेष्म-

ज्वरचिकित्सा ॥

अथ वातपित्तज्वरे ॥

पर्पटाब्दामृतोदीच्यकैरातैः साधितं जलम् ॥

पंचभद्रमिदं प्रोक्तं वातपित्तज्वरापहम् ॥ ४८ ॥

शार्ङ्गधरात् ॥

त्रिफलाशालमलीरास्नाराजवृक्षाटरूपकैः ॥

गृतमंबु हरेत्तूर्णं वातपित्तोद्भवं ज्वरम् ॥ ४९ ॥

वृंदात् ॥ अथ वातश्लेष्मज्वरे ॥

क्षुद्राशुंठीगुडूचीनां कपायः पौष्करस्य च ॥

कफवाताधिके पेयो ज्वरे वापि त्रिदोषजे ॥ ५० ॥

इति क्षुद्रादिः ॥

आरग्वधकणामूलमुस्तातिक्ताभयाकृतः ॥

क्वाथः शान्धति क्षिप्रं ज्वरं वातकफोद्भवम् ॥ ५१ ॥

इत्यारोग्यपंचकम् ॥

अथ पित्तश्लेष्मजे ॥

अमृतारिष्टकटुकामुस्तेन्द्रयवनागैः ॥

पटोलचंदनाभ्यां च गृतं पिप्पलिचूर्णयुक् ॥

अमृताष्टकमेतत्तु पित्तश्लेष्मज्वरापहम् ॥ ५२ ॥

इत्यमृताष्टकं शार्ङ्गधरात् ॥

दुरालभापर्पटकप्रियंगु-

भूर्निववासाकंदुरोहिणीनाम् ॥

क्वाथं पिबेच्छर्करयावगाढं

तृष्णास्त्रपित्तज्वरदाहयुक्तः ॥ ४० ॥

योगशतात् ॥

एकः पर्पटकः श्रेष्ठः पित्तज्वरविनाशनः ॥

किं पुनर्यदि पूज्येत चंदनोशीरधान्यकैः ॥ ४१ ॥

बृंदात् ॥ इति पित्तज्वरचिकित्सा ॥ अथ श्लेष्मजे ॥

वीजपूरशिंफापथ्यानागरग्रंथिकैः शृतम् ॥

सक्षारं पाचनं श्लेष्मज्वरे द्वादशवासरे ॥ ४२ ॥

इति वीजपूरादिः ॥

भूर्निवर्निवपिप्पल्यः सटी गुंठी शतावरी ॥

गुडूची बृहती चेति क्वाथो हन्यात्कफज्वरम् ॥ ४३ ॥

इति भूर्निवादिः ॥

आमलक्यभया कृष्णा चित्रकश्चेत्ययं गणः ॥

सर्वज्वरभयातंकभेदी दीपनपाचनः ॥ ४४ ॥

इत्यामलक्यादिः ॥



क्वाथं पिवेदनिलपित्तकफज्वरेषु ॥ ४६ ॥

पृथक्पृथक् त्रिभिश्चरणैः कथितैः क्वाथैर्वातादिषु योगाः ॥

अमृतारिष्टकचंदनपद्मकथानोद्भवः क्वाथः ॥

ज्वरहृत्तासच्छर्दिस्तृष्णादाहारुचीर्हन्यात् ॥ ४७ ॥

सर्वस्वरे गुडच्यादिः योगशतात् ॥ इति श्लेष्म-

ज्वरचिकित्सा ॥

अथ वातपित्तज्वरे ॥

पर्पटाब्जामृतोदीच्यकैरातैः साधितं जलम् ॥

पंचभद्रमिदं प्रोक्तं वातपित्तज्वरापहम् ॥ ४८ ॥

शाङ्गधरात् ॥

त्रिफलाशालमलीरास्त्राराजवृक्षाटरूपकैः ॥

शूतमंबु हरेत्तूष्णीं वातपित्तोद्भवं ज्वरम् ॥ ४९ ॥

वृंदात् ॥ अथ वातश्लेष्मज्वरे ॥

क्षुद्राशुंटीगुडूचीनां कपायः पौष्करस्य च ॥

कफवाताधिके पेयो ज्वरे वापि त्रिदोषजे ॥ ५० ॥

इति क्षुद्रादिः ॥

दाव्यबुदात्तिकफलात्रिकेच क्षुद्रापटालाः ॥

क्वाथं विदध्याज्वरसान्निपाते निश्चेतनेपुंसि विबोधनार्थम्

योगशतात् ॥

कट्फलं पौष्करं गुंजी व्योषं यांसश्च कौरवी ॥

श्लक्ष्णं चूर्णीकृतं चैतन्मधुना सह लेहयेत् ॥ ६६ ॥

एपावलेहिका हन्ति सन्निपातं सुदारुणम् ॥

हिक्कां श्वासं च कासं च कंठरोगं च घुर्धरम् ॥

एतद्योज्यं कफोद्रेके चूर्णमाद्र्रुजै रसैः ॥ ६७ ॥

दुरालभापर्पटकप्रियंगु-

भूर्निववासाकंदुरोहिणीनाम् ॥

काथं पिबेच्छर्करयावगाढं

तृष्णास्रपित्तज्वरदाहयुक्तः ॥ ४० ॥

योगज्ञातात् ॥

एकः पर्पटकः श्रेष्ठः पित्तज्वरविनाशनः ॥

किं पुनर्यादि पूज्येत चंदनोशीरधान्यकैः ॥ ४१ ॥

बृंदात् ॥ इति पित्तज्वरचिकित्सा ॥ अथ श्लेष्मजे ॥

बीजपूरशिंफापथ्यानागरग्रंथिकैः शृतम् ॥

सक्षारं पाचनं श्लेष्मज्वरे द्वादशवासरे ॥ ४२ ॥

इति बीजपूरादिः ॥

भूर्निवनिवपिप्पल्यः सटी गुंठी शतावरी ॥

गुडूची बृहती चेति काथो हन्यात्कफज्वरम् ॥ ४३ ॥

इति भूर्निवादिः ॥

आमलक्यभया कृष्णा चित्रकश्चेत्ययं गणः ॥

सर्वज्वरभयातंकभेदी दीपनपाचनः ॥ ४४ ॥

इत्याम्बुदूक्तत्रिवृदातौवपयापुष्करत्रायमाणः

पाठाव्याघ्रीर्कोलैस्त्रिफलसटियुतैः कल्पितैस्तुल्यभागैः

काथो द्वात्रिंशनामात्रिकेंदशकमितान्सन्निपातान्निहन्ति

श्वासं शूलं च हिकां कसनगुदरुजाध्मानमन्यारुजश्च ॥

ऊरुस्तभात्रवृद्धिं गलगदमेरुतं सर्वसंधिग्रहार्तिं

हन्यादेकोपि सिंहो गजनिवहमिव प्रस्फुरद्दानधारम् ॥ ६० ॥

इत्यारोग्यदर्पणतो द्वात्रिंशको भाङ्गुर्यादिः ॥

१ नीम । २ मुलहेदी । ३ अरलू । ४ मोया । ५ कुटकी । ६  
इंद्रायण । ७ जवासा । ८ अरलू । ९ विजोते । १० त्रयोदशमितान् ।  
११ वातम् । १२ प्रच्युतमदधारम् ।

एतैरुद्धूलनं शस्तं त्रिरोषोत्थे ज्वरे नृणाम्  
अतस्यास्तरणं शस्तं सन्निपातभवे नृणाम् ॥ ७५ ॥

इति सारसंग्रहात् ॥

लघनं बालुकास्वेदो नस्यं निष्ठीवनं तथा ॥

भवलेहोजनं चैव प्राक् प्रयोज्यं त्रिदोषजे ॥ ७६ ॥

खर्परभ्रष्टपटस्थितकांजिकसंसिक्तबालुकास्वेदः ॥

शमयति वातकफामयमस्तकशूलांगभंगादीन् ॥ ७७ ॥

सैधवं श्वेतमरिचं सर्पपाः कुष्ठमेव च ॥

वस्तमूत्रेण पिष्टानि नस्यात्संज्ञाकराणि च ॥ ७८ ॥

आर्द्रकस्य रसोपेतं सैधवं सकटुत्रयम् ॥

आकंठं धारयेदास्ये निष्ठीवेच्च पुनःपुनः ॥ ७९ ॥

लीनोऽस्याकृष्यते श्लेष्मा लाघवं चास्य जायते ॥

शिरीषबीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैधवैः ॥ ८० ॥

अंजनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥

रसस्थे रससंगुद्धी रक्तस्थे रक्तमोक्षणम् ॥ ८१ ॥

मांसस्थे रेचनं शस्तं मेदस्थे चासहिष्णुता ॥

रेचनं वमनं स्वेदश्चास्थिस्थे स्वेदमर्दने ॥

मज्जाशुक्राश्रयं दृष्ट्वा तमसाध्यं ज्वरं वदेत् ॥ ८२ ॥

इति योगरत्नावल्याम् ॥

सिद्धार्थको वचा हिंशु करंजः सुरदारु च ॥

मांजिष्ठा त्रिफला श्वेता कंठभी त्वक्कटुत्रयम् ॥ ८३ ॥

प्रियंगुश्च शिरीषं च निशा दावीं समांशतः ॥

अजामूत्रेण संपिष्टो गोमूत्रैर्वाय चूर्णितः ॥

इत्यष्टांगावलेहिका ॥

दशमूली सटी गूंगी पौष्करं सदुरालभा ॥

शुंठी कटुजबीजं च पटोलं कटुरोहिणी ॥ ६८ ॥

अष्टादशांग इत्येष सन्निपातज्वरापहः ॥

काशहृद्ग्रहपाश्वर्त्तिश्वासहिक्कावमीहरः ॥ ६९ ॥

इति दशमूलेष्वष्टादशांगः ॥

चिरज्वरे वातकफोत्प्लवणे वा

त्रिदोषजे वा दशमूलमिश्रः ॥

किराततित्तादिगणः प्रयोज्यः

गुड्यार्थिने वा त्रिवृताविमिश्रः ॥ ७० ॥

इति चतुर्दशांगः ॥

किरातं नागरं मुस्तं गुडूची चेत्ययं गणः ॥

वृंदात् ॥

भूर्निवकारवीतित्तावचाकटुकलजं रजः ॥

उद्धूलनं त्रिदोषोत्थे स्वेदाभिप्यंदिनि ज्वरे ॥ ७१ ॥

मरिचं पिप्पली शुंठी पथ्या लोध्रं सपौष्करम् ॥

भूर्निवकटुकार्कुष्ठं कारवीद्रव्या सटी ॥ ७२ ॥

एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥

प्रस्वेदे कंठरोधे च संधिमर्दनमिष्यते ॥

एतदुद्धूलनं श्रेष्ठं सन्निपातहरं परम् ॥ ७३ ॥

स्वेदोद्गमे भ्रष्टकुलत्थचूर्णैरुद्धूलनं शस्तमिति ब्रुवंति ॥

चूर्णं शठद्वोर्लवणस्य भांडं स्वेदापहं गुंठनमुत्तमं हि ७४

वृंदात् ॥

यवानिका वचा शुंठी पिप्पली कारवी तथा ॥

इति सारसंग्रहात् ॥

कुलत्थं कट्फलं गुंठी कारवी च समांशकैः ॥

सुखोष्णं लेपनं कार्यं कर्णमूले मुहुर्मुहुः १३ ॥

बीजपूरकमूलत्वग्वाह्निर्मथस्तथैव च ॥

नागरं देवदारुश्च रास्ना वह्निश्च योजितः ॥

एभिः प्रलेपनं श्रेष्ठं गलशोथविनाशनम् ॥ १४ ॥

इति बृन्दात् ॥

शरपुंखाशिफातुंवीसरुग्णा विषंमुष्टिभिः ॥

प्रलेपो वा हिडंवीभिः श्वयथौ कर्णमूलजे ॥ १५ ॥

इति शार्ङ्गधरात् ॥

गुष्कां च स्फुटितां जिह्वां द्राक्षया मधुपिष्टया ॥

प्रलेपयेत्सघृतया सन्निपातज्वरे गदे ॥ १६ ॥

यवकोलकुलत्थानां मुद्गमूलकगुंगयोः ॥

एकैकं मुष्टिमादाय पचेदष्टगुणे जले ॥ १७ ॥

पंचमुष्टिक इत्येष वात्तपित्तकफापहः ॥

शस्यते गुल्मगूलेषु श्वासे कासे क्षये ज्वरे ॥ १८ ॥

इति पंचमुष्टिकः ॥

सन्निपाते प्रकंपतं विलपंतं च यो घृतम् ॥

भोजयेत्पाययेद्वापि स वैद्याख्यां कथं व्रजेत् ॥ १९ ॥

सन्निपातेषु दाहार्तं यः सिंचेच्छीतवारिणा ॥

आतुरः स कथं जीवेद्भिषग्वा स कथं भवेत् ॥ २० ॥

मृत्युना सह योद्धव्यं सन्निपातं चिकित्सता ॥

यस्तु तत्र भवेज्जेता स जेता यमसंगरे ॥ २१ ॥

सर्वज्वरं निहंत्याशु सिद्धार्थादिः प्रलेपनः ॥ ८४ ॥

इति सिद्धार्थकादिः ॥

रसविषमरिचमहेशप्रियफलभस्मैकभूचतुर्वसुभिः ॥

भागैर्मितमुद्गूलनमिदमामितस्वेदशैत्यहरम् ॥ ८५ ॥

सारसंग्रहात् ॥

तसायोलोछनं पश्चात्तालुपूक्तं त्रिदोषजे ॥

रुद्राभिषेकभूदेवभोजनग्रहजाप्यतः ॥

मंत्ररक्षादिभिः कार्या सन्निपातप्रतिक्रिया ॥ ८६ ॥

अथ संधिगादीनां चिकित्सा ॥

सन्निपातज्वरस्यांते कर्णमूले सुदारुणः ॥

शोथः संजायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥ ८७ ॥

न रक्तेन विना वृद्धिर्ज्वरे वा सन्निपातके ॥

दोषः प्रशममायाति काथपाचनकादिभिः ॥ ८८ ॥

दोषे प्रशमितेऽप्यत्र रक्तं नैव विलीयते ॥

तेन संजायते शोथः कर्णमूले सुदारुणः ॥ ८९ ॥

तस्मात्तत्र प्रतीकारं कुर्याद्रक्तावसेचनैः ॥

जलौकालांघुशृंगैश्च ततः स्याद्येपनं हितम् ॥ ९० ॥

यदा पाको भवेत्तत्र व्रणवद्भेषजं तदा ॥

कर्कटस्य च मांसेन स्वेदनं बंधनं तथा ॥

कर्णमूलभवे शोथे हितादपि हितं मतम् ॥ ९१ ॥

सिद्धार्थसैधववचागृहधूमविश्वैः

पिष्टैर्जलेन निशया सहितं च सूक्ष्मम् ॥

लेपो हितो रुधिरनाशकरः प्रतीतः ॥

शोफव्रणस्य शमनः सरुजस्य कर्णे ॥ ९२ ॥

रक्तचंदनभूर्निचपटोलवृषपौष्करैः ॥

कटुकेंद्रयवारिष्ठभांगीपर्पटकैः समैः ॥

काथं प्रातर्निषेवेत सर्वशीतज्वरच्छिदम् ॥ ११२ ॥

शार्ङ्गधरात् ॥

दावीदांरुकांलग्लोहितलताशम्याकपाठासटी-

शौंडीवीरकिरातवारणैकणात्रायंतिकापद्मकैः ॥

उर्ग्राधान्यकनागराब्दसरलैः शिग्र्वुसिहीशिवा-

व्याघ्रीपर्पटदर्भमूलकटुकानंतामृतापौष्करैः ॥ ११३ ॥

धातुस्थं विषमं त्रिदोषजनितं चैकाहिकं द्वयाहिकं

काथो हन्ति तृतीयकं ज्वरमयं चातुर्यकं भूतजम् ॥ ११४ ॥

इत्यारोग्यदर्पणतो दाव्यादिः ॥

निर्दग्धिकानागरिकामृतानां

काथं पिवेन्मिश्रितपिप्पलीकम् ॥

जीर्णज्वरारोचककासगूल-

श्वासाग्निमांद्यादितपीनसेषु ॥ ११५ ॥

इति योगशतात् ॥

न शाम्यति ज्वरो यस्तु पक्षादूर्ध्वं शरीरिणाम् ॥

मंदवेगानुबंधश्च स ज्ञेयो जीर्णतां गतः ॥ ११६ ॥

कासजीर्णज्वरश्वासहृत्पांडुकुमिरोगहृत् ॥

जीर्णज्वरोग्निसादे च शस्यते गुडपिप्पली ॥ ११७ ॥

त्रिभिरथ परिवृद्धं पंचभिः सप्तभिर्वा

दशभिरथ विवृद्धं पिप्पलीवर्द्धमानः ॥

इति पिवाति पुमान्यस्तस्य न श्वासकास-

सन्निपातार्णवे मग्नं योभ्युद्धरति मानवम् ॥

कस्तेन न कृतो धर्मः कां च पूजां न सोर्हति ॥ १०२ ॥

अथ विषमज्वरे ॥

अभिचाराभिशापोत्थौ ज्वरौ होमादिभिर्जयेत् ॥

दानस्वस्त्ययनातिथ्यैरुत्थानग्रहपीडजौ ॥ १०३ ॥

औषधीगंधविषजौ विषपित्तग्रंसाधनैः ॥

जयेत्कपायैर्मतिमान्सर्वगंधकृतं ज्वरम् ॥ १०४ ॥

क्रोधंजे पित्तजित्कार्या आर्यसद्वाक्यमेव च ॥

आश्वासेनेष्टलाभेन वायोः प्रशमनेन च ॥ १०५ ॥

हर्षणैश्च शमं यांति कामशोकभयज्वराः ॥

भूतविद्यासमुद्दिष्टैर्बधावेशनताडनैः ॥

जयेद्भूताभिपंगोत्थं मनःशांत्यैव मानसम् ॥ १०६ ॥

इति वृंदात् ॥

पटोलत्रिफलानिवद्राक्षाशैम्याकवालकैः ॥

क्वाथः सितामधुयुतो जयेदेकाहिकं ज्वरम् ॥ १०७ ॥

गुडूचीधान्यमुस्ताभिश्चंदनोशीरनागरैः ॥

सितामधुयुतः क्वाथस्तृतीयज्वरनाशनः ॥ १०८ ॥

देवदारुशिवावासाशालिपर्णीमहौषधैः ॥

धात्रीयुतैः शृतं शीतं दद्यान्मधुसितायुतम् ॥ १०९ ॥

चातुर्थिके ज्वरे श्वासे कासे मंदानले तथा ॥

मुस्ताक्षुद्रामृताशुंठीधात्रीक्वाथः समाक्षिकः ॥ ११० ॥

पिप्पलीचूर्णयुक्तसर्वविषमज्वरनाशनः ॥

क्षुद्राधान्यकशुंठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः ॥ १११ ॥



जीर्णज्वरे तथाजीर्णं समे वा विषमेऽपि वा ॥  
सर्वज्वरं निहन्त्याशु दावो वनमिवानलः ॥ १२६ ॥  
इति सर्वज्वरारिः ॥

त्र्यूपणं पंचलवणं शतपुष्पा द्विजीरकम् ॥  
क्षारत्रयं समांशेन चूर्णमेषां पलत्रयम् ॥ १२७ ॥  
शुद्धं सूतं पलं चाभ्रं गंधकं च पलंपलम् ॥  
आर्द्रकस्य रसैः खल्वे दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ १२८ ॥  
वीरभद्रो रसः ख्यातो मापैकः सन्निपातजित् ॥  
चित्रकार्द्रकर्त्तिधूतमनुपानं जलैः सह ॥  
पथ्यं क्षीरोदनं देयं द्विवारं च रसो हितः ॥ १२९ ॥  
इति सन्निपातहरो वीरभद्राख्यो रसः ॥

ब्रह्मास्त्रमथ वक्ष्यामि सद्यः प्रत्ययकारकम् ॥  
भस्म सूतं त्रिगंधं च तत्समं गरलं त्वहेः ॥ १३० ॥  
त्रिभिः समं विषं योज्यं मरिचं सर्वतुल्यकम् ॥  
वैराहकोकिमहिपपित्तैः सप्तविभावितम् ॥ १३१ ॥  
लांगल्या देवदाल्या च ज्वालामुख्यार्द्रकद्रवैः ॥  
एकविंशतिधा भाव्यं प्रत्येकं घर्मशोपितम् ॥ १३२ ॥  
द्विगुंजामात्रनस्येन मृतमुत्थापयेद्भुतम् ॥  
दध्यन्त्रं सत्तितं पथ्यमुपचाराश्च शीतलाः ॥ १३३ ॥  
सर्वोदरगदघ्नोयमसाध्यमपिसाधयेत् ॥  
अस्थिशूलानि सर्वाणि नाशयत्येव सर्वथा ॥ १३४ ॥  
इति ब्रह्मास्त्रो रसः ॥

ज्वरजठरगुदाशौवातरक्तक्षयाः स्युः ॥ ११८ ॥

इति वृंदात् ॥

उर्णनाभिस्थजालेन कज्जलं ग्राहयेत्ततः ॥

अंजयेन्नेत्रयुगलं व्याहिकं तु ज्वरं जयेत् ॥ ११९ ॥

उलूकदक्षिणः पक्षः सितसूत्रेण वेष्टितः ॥

बंधितो वामकर्णे तु हरत्येकाहिकं ज्वरम् ॥ १२० ॥

भृंगराजजटा बद्धा कर्णे रात्रिज्वरापहा ॥

सर्वज्वरहरी श्वेतमंदारस्य च मूलिका ॥ १२१ ॥

तुरंगरिपुमूलं वा श्वेतं शीतज्वरापहम् ॥

विवस्त्रेणोद्धृता देवीमूलिका कर्णबंधनात् ॥

चातुर्थिकं ज्वरं हंति द्रोणपुष्पीरसोज्जनात् ॥ १२२ ॥

ॐ नमो भगवते रुद्राय नमः ॥

क्रोधेश्वराय नमो ज्योतिःपतंगाय नमोनमः ॥

तिब्दिरुद्राज्ञापयति स्वाहा ॥

अनेन सप्तजप्तैस्तु सर्पपैः सप्त ताडयेत् ॥

चातुर्थिकज्वरान्मुक्तो नरो भवति सर्वथा ॥ १२३ ॥

इत्यारोग्यदर्पणतः ॥

अथ रसमार्गनो ज्वरचिकित्सा ॥

एकभागो रसो भागद्वयं शुद्धं च गंधकम् ॥

विषस्य च त्रयो भागाश्चतुर्भागा हिमावती ॥ १२४ ॥

जैपालजाः पंच भागा निबुद्रवविमर्दिताः ॥

लौमिघ्नप्रमिता वट्यः कार्या सर्वज्वराच्छिदः ॥ १२५ ॥

उंगवरेण दातव्या वटिकैका दिनानने

१ श्वेताकस्य । २ जटा । ३ कनेर । ४ सङ्गदेवी । ५ विडंगसमगुटिका । ६ आर्द्रकास्त्रेण । ६ प्रभातसमये ।

एकाहिकं द्वयाहिकं च त्रयाहिकं च चतुर्थकम् ॥

विषमं च त्रिदोषोत्थं हन्ति सद्यो न संशयः ॥ १४३ ॥

इति महाज्वरांकुशरसः ॥

सूतं गन्धकमध्रकं समेलवं सूतार्द्धभागं विषं

तत्तुल्यं जयपालमम्लमृदितं तद्गोलकं वेष्टितम् ॥

पत्रैर्मज्जुभुजंगवह्निजनितैर्निक्षिप्य खांते पुटं

दत्त्वा कुक्कुटसंज्ञकं सह दलैः सचूर्ण्य तत्र क्षिपेत् ॥ १४४ ॥

भांगार्धं जयपालवीजममृतं तत्तुल्यमेकीकृतं

गुर्जानागरसिंधुचित्रकयुतं सर्वज्वरान्नाशयेत् ॥

शूलं संग्रहणीगदं सजठरं दध्यन्नसंसेविनां

सर्वव्याधिवतां नृणां हिततमार्थितामणिर्नामतः ॥ १४५ ॥

इति चिन्तामणिरसः ॥

खंडं कृत्वा विषं कृष्णं सार्कदुग्धेल्लभांडके ॥

सकांजिके सगरले क्षिप्व चुल्लयां निधापयेत् ॥ १४६ ॥

सप्ताहतः समुद्रृत्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं च तत् ॥

सूचिकाभरणो नाम रसो गुप्ततमो भुवि ॥ १४७ ॥

संज्ञानाशो विचेष्टे च बह्वः कांजिकपेपितः ॥

ब्रह्मरंध्रे प्रयोक्तव्यो महामोहप्रणाशनः ॥ १४८ ॥

इति सूचिकाभरणो रसः ॥

रसदेरदादिनेत्रां फेनगंधेन युक्तं

मुनिदिनमिति खल्वे विश्वतोयेन घृष्टम् ॥

ज्वरहरमिह सूतं बह्वमात्रप्रमाणं

१ समस्तम् । २ त्रिपुल्यम् । ३ निंबुरसेन मृदितम् । ४ तावूजेत ।  
५ गते । ६ सूतार्द्ध । ७ विषम् । ८ प्रमाण । ९ सिगरक्त ।  
१० तान्नम् । ११ समुद्रफेनः । १२ सप्तदिनपर्यन्तम् ।

रसं गंधं विपं ताम्रं त्रिकटु त्रिफला तथा ॥  
 कटुका च त्रिवृदंती हेमाह्वा टैकणं विपम् ॥ १३५ ॥  
 एतानि समभागानि सर्वांशं दन्तिजं फलम् ॥  
 चूर्णयित्वा तु तत्सम्यङ् मर्दयेद्वज्रिकां वुना ॥ १३६ ॥  
 दन्तीकाथैस्ततः सम्यग्वटी टंकार्धमानतः ॥  
 विनोदविद्याधर इत्याख्यातस्तरुणज्वरम् ॥ १३७ ॥  
 गूलं गुल्मं तथा पांडुं ग्रहण्यशःकृमीजयेत् ॥  
 अजीर्णमामवातं च गुल्मोदरगदांस्तथा ॥ १३८ ॥

इति विद्याधरो रसः ॥

शंभोः कंठविभूषणं समरिचंदैत्येद्ररक्तं रसैः  
 पक्षौसागरलोचने हिमं रुचिर्भागैस्तथार्धो रविः ॥  
 खल्वांतः खलुमर्दयेद्रविजलैर्गुंजाप्रमाणोऽशितः  
 प्रोदंडज्वरदन्तिदर्पदलने पंचाननोऽसौ रसः ॥ १३९ ॥

पथ्यं च देयं दधिभक्ततक्रं

सिंधूत्थपथ्यासितया समेतम् ॥

गंधानुलेपो हिमतोयपानं

दुग्धं च देयं शुभदाडिमी च ॥ १४० ॥

इति रसमंजरीतः पंचाननो रसः ॥

शुद्धंसूतं विपं गंधं धूतवीजं त्रिभिः समम् ॥  
 चतुर्णां द्विगुणं त्र्योपं हेमक्षीरीविभावितम् ॥ १४१ ॥  
 चतुर्वारं घर्मशुष्कं चूर्णं गुंजाद्वयोन्मितम् ॥  
 जंवारकस्य मज्जाभिरार्द्रकस्य रसेन वा ॥ १४२ ॥  
 महाज्वरांकुशो नाम समस्तज्वरनाशनः ॥

चंद्रशेखरस्यान्यत्रामुदकमंजरीत्यपि पठन्ति ॥

समेभ्यो रसटंकेभ्यो द्विगुणाञ्जयपालकान् ॥

पिष्ट्वा नवज्वरे देयं वल्लं जंभांभसास्य च ॥ १५७ ॥

चिंचाक्षारेण खंडेन शीतज्वरविनाशकृत् ॥

आध्मानांमानिलहरः सितागुडयुतो रसः ॥

अयं रसोऽपि सहसा पुत्रस्यापि न कथ्यते ॥ १५८ ॥

इति शीतारिः सारसंग्रहात् ॥

तुत्थं टंकणसूतकं विपर्वलिं सत्खर्परं तालकं

चूर्णं खल्वतले विमर्द्य गुटिका सत्कारवेष्टद्रवैः ॥

गुंजाद्विप्रमिता च शुद्धसितया सा पर्णखंडेन वा

एकद्वित्रिचतुर्थकज्वरहरः शीतारिनामा रसः ॥ १५९ ॥

इति शीतारिनामरसः ॥

रसकयुगलभागं वल्लिजं भागमेकं

द्वितयमपि सुखल्वे मर्दयेन्म्रंक्षणेन ॥

भवति घृतविमुक्तो निबुनीरेण यावत्

ज्वरहरमुपकुल्यामालिनीप्राग्वसंतः ॥ १६० ॥

जीर्णज्वरे धातुगतेतिसारे रक्तान्विते रक्तजविष्टरोगे ॥

घोरव्यथेपित्तकृते च दोषे बलप्रदो दुग्धयुतं च पथ्यम् ॥

प्रदरं नाशयत्याशु तथा दुर्नामशोणितम् ॥

विपमं नेत्ररोगं च गर्जेद्रमिवकेसरी ॥ १६१ ॥

इति लघुमालिनीवसंतः ॥

स्वर्णं मुक्ता दरदमरिचं भागवृद्ध्या प्रयोज्यं

खर्पर्यष्टौ प्रथमनवनीतेन निबन्धुना च ॥

प्रथमजनितदाहं पाययेदार्द्रकेण ॥१४१॥

इति सर्वज्वरहरो रसः ॥

पलं चुक्रं कुष्ठं पिचुयुगमितं सैधवकणे  
तदर्धे प्रत्येकं करतलमितं जातिफलकम् ॥

कटोस्तैलं पक्वं कुडवमितमग्नावधिभृतं  
तदेतच्चुक्राद्यं शमयति विपूचि च सगदाम् ॥ १५० ॥

विपूचिकायां चुक्राद्यं तैलम् ॥

अष्टौ तालकमेतदूर्ध्वममलं शंखूकचूर्णं क्षिपेत्  
पश्चादत्र नवांशको वरंशिखी सर्वं पुनः पेपयेत् ॥  
तोयैस्तच्च कुमारिकादलभवैः पक्वं गजारव्ये पुटे-  
प्पेकदित्रिचतुर्थशीतहरणः शीतांकुशोऽयं रसः ॥१५१॥

ज्वरं धातुगतं चित्तभ्रमं पित्तास्त्रजान्गदान् ॥  
रक्तातिसारग्रहणीदुर्नामास्त्राणि नाशयेत् ॥१५२॥

गुंजाद्वयमितं दद्यात्सितया सहवारिणा ॥  
सजीरकेण दध्यन्नं पथ्यं शीतज्वरांकुशे ॥ १५३॥

इति महाशीतज्वरांकुशो रसः ॥

शुद्धसूतसमं गंधं मरिचं टंकणं तथा ॥  
चतुस्तुल्यसिता योज्या मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥१५४॥

त्रिदिनं मर्दयेत्तेन रसोयं चंद्रशेखरः ॥  
द्विगुंजमार्द्रकद्रविर्देयः शीतोदकं पुनः ॥ १५५ ॥

तक्रभक्तं च वृंताकं पथ्यं तत्र निधापयेत् ॥  
त्रिदिनाच्छ्लेष्मपित्तोत्थमत्युष्णं नाशयेज्ज्वरम् ॥१५६॥

इति लाक्षादितैलम् ॥

लाक्षाहरिद्रामंजिष्ठाकल्कैस्तैलं विपाचयेत् ॥  
पङ्गुणेनारनालेन दाहशीतज्वरापहम् ॥ १७१ ॥

इति लघुलाक्षादितैलम् ॥

तैलं लाक्षारसं क्षीरं पृथक्प्रस्थं समं पचेत् ॥  
चतुर्गुणेरिते काथे द्रव्यैरेतैः पलोन्मितैः ॥ १७२ ॥  
लोध्रकद्वलमंजिष्ठामुस्तकेसरपद्मकैः ॥  
चंदनोत्पलंयष्ट्याह्वैस्तैलं गंडूपधारणात् ॥ १७३ ॥  
दंतरोगाः प्रणश्यन्ति लेपात्सर्वज्वराञ्जयेत् ॥  
एतल्लाक्षादिकं तैलं बलपुष्टिप्रदीप्तिदम् ॥ १७४ ॥

इति लाक्षाद्यं तैलम् ॥

लाक्षामधुकमंजिष्ठामूर्वाचंदनशारिवा ॥  
तैलं पट्चरणं नाम चाभ्यंगाज्वरनाशनम् ॥ १७५ ॥

इति पट्चरणं तैलम् ॥

द्राक्षा मूर्वा हरिद्रे द्वे मंजिष्ठा चेंद्रवारुणी ॥  
बृहती सैंधवं कुष्ठं रास्ना मांसी शतावरी ॥ १७६ ॥  
आरनालाढकेनात्र तैलं प्रस्थं विपाचयेत् ॥  
तैलमंगारकं नाम सर्वज्वरविमोक्षणम् ॥ १७७ ॥

इत्यंगारकतैलं कृदात् ॥

अथ ज्वरहराणि चूर्णानि ॥

धात्रीशिवासैंधवचित्रकाणांकणायुतानां समभागचूर्णं ॥  
जीर्णज्वरारोचकबद्धिमांद्ये सविद्र्यहेशस्तमितिप्रतिज्ञा  
इत्यामलाक्यादिचूर्णम् ॥

तालीशोपेणविश्वपिप्पलितुगाः कर्पाभिवृद्धास्त्रुटिः

यावत्स्नेहो व्रजति निचयं मर्दयेत्तावदेव  
 गुंजामात्रा मधुचपलया सर्वरोगे वसंतः ॥ १६३ ॥  
 जीर्णज्वरे धातुगतेतिसारे रक्तान्विते रक्तजविष्ठरोगे ॥  
 घोरव्यथे पित्तभवे विकारे वल्लद्वयं दुग्धयुतं च पथ्यम् ॥  
 वसंतो मालतीपूर्वः सर्वरोगहरः शिशोः ॥  
 गर्भिण्यै देयमेतच्च जेयंतीपुष्पकैर्युतं ॥  
 सर्वज्वरहरं श्रेष्ठं गर्भपालनमुत्तमम् ॥ १६५ ॥

इतिबृहन्मालतीवसंतः ॥

अथ जीर्णज्वरे तैलानि ॥

सुवर्चिकानागरकुष्ठमूर्वालाक्षानिशालोहितंयष्टिकाभिः ॥  
 तैलंज्वरेपङ्गुणतक्रसिद्धमभ्यंजनाच्छीतविदाहनुत्स्यात्  
 दध्नः ससौरकस्य स्यात्पद् तक्ने तक्रमुत्तमम् ॥ १६६ ॥

इति पद्तक्रतैलम् ॥

अथानुभूतं लाक्षादितैलमुच्यते ॥

लाक्षाप्रस्थं काथयित्वा चतुःप्रस्थमिते जले ॥  
 पादशोषं जलं नीत्वा तैलप्रस्थे विनिक्षिपेत् ॥ १६७ ॥  
 तैलाचतुर्गुणं मस्तु गोदध्नश्चात्र निःक्षिपेत् ॥  
 शतपुष्पामश्वगंधां हरिद्रां देवदारु च ॥ १६८ ॥  
 रेणुकां कटुकां मूर्वां कुष्ठं च मधुयष्टिकाम् ॥  
 मुस्तं च चंदनं रास्नां प्रत्येकं कर्पसंमितम् ॥ १६९ ॥  
 कल्कीकृत्य क्षिपेत्तैले ततो मृद्वग्निना पचेत् ॥  
 तस्याभ्यंगात्प्रणश्यंति सर्वेऽपि विषमज्वराः ॥  
 कंडूगूलांगदौर्गन्ध्यमंगस्फोटादिकाञ्जयेत् ॥ १७० ॥



त्रिकपृष्ठकटीवातपार्श्वगूलनिवारणम् ॥

शीतांबुना पिवेद्दीमान्सर्वज्वरनिवारणम् ॥ १८९ ॥

सुदर्शनं यथा चक्रं दानवानां विनाशनम् ॥

तथा सर्वज्वराणां च चूर्णमेतद्विनाशनम् ॥ १९० ॥

इति सुदर्शनं चूर्णम् ॥

चूर्णं पोडशकुंजराब्धिनयनक्षमामानभाजः सिता

वांशी मागधिकात्रुटित्वंच इह क्षौद्राज्ययुक्तं प्रगे ॥

लीढं हन्ति सितोपलादिकमिदं सर्वांगदाहं क्षयम् ॥

पार्श्वान्ति ज्वरवातपित्तकसनश्वासाग्निमांद्यारुचीः १९१

इति सितोपलाद्यं चूर्णम् ॥

कट्फलं मुस्तकं तिक्ता सटी गृंगी च पौष्करम् ॥

मधुना चूर्णमेतेषां गृंग्वेररस्तेन वा ॥ १९२ ॥

लिहेज्ज्वरहरं कंठ्यं कासश्वासारुचिच्छिदम् ॥

वायुं छर्दि तथा गूलं क्षयं चैव व्यपोहति ॥ १९३ ॥

इति कट्फलादिचूर्णं शार्ङ्गधरात् ॥

इति दिङ्मात्रमाख्यातमं ज्वराणां हि चिकित्सितम् ॥

संप्रत्ययं सानुभवं संप्रदायाहुरोरिह ॥ १९४ ॥

इतिश्रीयोगतरंगिण्यां ज्वरचिकित्सानाम्

विंशतितमस्तरंगः ॥ २० ॥

अथैकविंशस्तरंगः

अथार्तिसारचिकित्सा॥

संशम्यायांधांतुरग्निप्रवृद्धोवर्चोमिश्रोवायुनाधःप्रणुन्नः ॥

१ वशलोचन । २ दातचीनी । ३ प्रभातसमये । ४ संक्षेपमात्रम् ।

५ विधास्युक्तम् । ६ अपांशानुरित्यादिना समासकरणेन जलमूत्रस्वेदभेदक

फणित्तरक्तादयो भाषाः ।

कर्पाद्वा त्वगापि प्रकाशमधवला द्वार्त्रिशकर्पासिता ॥  
तालीसाद्यमिदं सुचूर्णमरुचावाध्मानमंदानल-  
श्वासच्छर्द्यतिसारशोपकसनप्लीहज्वरे शस्यते ॥ १७९ ॥

इति तालीसाद्यं चूर्णं ॥

त्रिफला रजनीयुग्मं कंटकारीयुगं सटी ॥  
त्रिकटु ग्रंथिकं मूर्वा गुडूची धन्वयासकः ॥ १८० ॥  
कटुका पर्पटं मुस्तं त्रायमाणं च बालकम् ॥  
निंबं पुष्करमूलं च मधुयष्टी च वत्सेकः ॥ १८१ ॥  
यवार्तद्रियवा भार्गी शिशुबीजं सुराष्ट्रजा ॥  
वचा त्वक्पद्मकोशीरचंदनातिविपावलाः ॥ १८२ ॥  
शालिपर्णी पृष्ठिपर्णी विडंगं तगरं तथा ॥  
चित्रको देवकाष्ठं च चव्यं पत्रं पटोलजम् ॥ १८३ ॥  
जीवकर्पभकौ चैव लवंगं वंशलोचनम् ॥  
पुंडरीकं च काकोल्यौ पत्रकं जांतिपत्रकम् ॥ १८४ ॥  
तालीशयत्रं च तथा समभागानि चूर्णयेत् ॥  
सर्वचूर्णस्य चार्धांशं कैरांतं प्रक्षिपेत्सुधीः ॥ १८५ ॥  
एतत्सुदर्शनं नाम चूर्णं दोषत्रयापहम् ॥  
ज्वरांश्च निखिलान्हन्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥ १८६ ॥  
पृथग्द्वद्वागंतुजांश्च धातुस्थान्विषमज्वरान् ॥  
सन्निपातोद्भवांश्चापि मानसानापि नाशयेत् ॥ १८७ ॥  
इतिज्वरं त्रिदोषादीन्मोहं तंद्रां तृषां तथा ॥  
श्वासं कासं च पांडुं च रुद्रोगं हन्ति कामलाम् ॥ १८८ ॥

१ अतिशेता । २ नेत्रवाला । ३ कुडकी फल । ४ फिटकरी । ५ दाल-  
चीनी । ६ देवदारु । ७ श्वेतकमलम् । ८ पत्रज । ९ जायत्री ।  
१० चिपयो ।

पुरीषं भृशदुर्गन्धि पिच्छिलं चामसंज्ञितम् ॥ ८ ॥  
 एतान्येव तु लिंगानि विपरीतानि यस्य वै ॥  
 लाघवं च विशेषेण तस्य पक्वं विनिर्दिशेत् ॥ ९ ॥  
 शोथं शूलं ज्वरं तृष्णां श्वासं कासमरोचकम् ॥  
 छादिं मूर्छां च हिक्कां च दृष्ट्वाऽतीसारिणं त्यजेत् ॥ १० ॥

सासृक्सृग्द्व्यगुदवंक्षणवस्तिशूल  
 मामातिसारमानिलप्रतिवद्धविट्कम् ॥  
 दोषानुरूपविहतैरिह लघनाद्यैः  
 पेयादिभिस्तमवलोक्य भिषक्चिकित्सेत् ॥ ११ ॥

प्राक्पंचकोलकजलप्लुततंडुलाभिः  
 पेयाभिरप्यथ पृथग्लघुलाजमंडैः ॥  
 मृदोदनैर्मधुरदाडिमयूपयुक्तै-  
 रामातिसारशमनैरुपदिष्टपथ्यैः ॥ १२ ॥  
 मुस्तमोचरसलोध्रधातकीपुष्पविल्वंगिरिकौटजैः समैः ॥  
 चूर्णितैः सगुडतक्रसेवितैर्भिन्नगाजलरयोपि रुध्यते १३

॥ इति गंगाधरचूर्णम्

विश्वाभयाधनवचातिविषामराह्वा ॥  
 क्वाथो यः विश्वजलैदातिविषाशूतो वा ॥  
 आमातिसारशमनः कथितः कपायः  
 गुंठीधनप्रतिविषाऽमृतवल्लिजो वा ॥ १४ ॥  
 सहरीतकिप्रतिविषारुचकं सवचं सार्द्धिगुसर्कालंगयवम् ॥  
 इति यत्कर्कालंगयवपट्कमिदं रुधिरातिसारगुदशूलहरम् ॥

॥ इति चिकित्साकालिकातः ॥

सरंत्यतीवातिसारं तमाहुर्व्याधिं घोरं पङ्क्तिं तं वदन्ति ॥१॥  
 एकैकशः सर्वशश्चापि दोषैः-  
 शोकेनान्यः पष्ठ आमेन चोक्तः ॥  
 हृन्नाभिषायूदरकुक्षितोदगात्रावसादानिलसन्निरोधाः ॥  
 विसंगमाध्मानमथाविपाको भविष्यतस्तस्य पुरःसराणि  
 अरुणं फेनिलं रूक्षमल्पमल्पं मुहुर्मुहुः ॥  
 शकृदामं सरुक्छब्दं मारुतेनातिसार्यते ॥३॥  
 पित्तात्पीतं नीलमालोहित वा  
 तूष्णामूर्छादाहपाकोपपन्नम् ॥  
 शुक्लं सांद्रं सकफं श्लेष्मदुष्टं  
 विस्त्रं शीतं हृष्टरोमा मनुष्यः ॥ ४॥  
 तैस्तैर्भावैः शोचतोल्पाशनस्य  
 वाष्पोष्मा वै वह्निमाविश्य जंतोः ॥  
 कोष्ठं गत्वा क्षोभयेत्तस्य रक्तं  
 तच्चाधस्तात्काकणंतीप्रकाशम् ॥ ५ ॥  
 निर्गच्छेद्द्वै विद्धिमिश्रं त्वविद्धा  
 निर्गंधं वा गंधवद्वातिसारः ॥  
 शोकोत्पन्नो दुश्चिकित्स्यो ऽतिमात्रं  
 रोगो वेगैः कष्ट एष प्रदिष्टः ॥ ६ ॥  
 तंद्रायुक्तो मोहमासाद्य शोपी  
 यच्चः कुर्यान्नैकरूपं तृपार्तः ॥  
 सर्वोद्भूते सर्वलिङ्गोपपत्तिः  
 कृच्छ्रोपायः प्रोक्त एषोऽत्र नूनम् ॥ ७ ॥  
 संसृष्टमेभिर्दोषैस्तु न्यस्तमप्स्ववसदिति ॥

मृद्वेष्टितादग्निविपाचिताद्रसं  
पिवेदतीसारहरं समाक्षिकम् ॥ २३ ॥

इत्युक्तया कल्पनया वटादिना  
कल्कीकृतेनोदरगेण तित्तिरेः ॥  
प्रकल्पितः स्यात्पुटपाकजो रसः  
सशर्करः क्षौद्रयुतोतिसारजित् ॥ २५ ॥

॥ इति चिकित्सातः ॥

कांसमर्दकजं मूलं घृष्ट्वा तंदुलवारिणा ॥  
दीयते पलकामात्रा व्याघ्रवालातिसारिणी ॥ २६ ॥  
प्रपचेत्तर्पिषा पथ्या लोहपात्रेतियत्नतः ॥  
शिशिरा सा प्रदातव्या चातिसारिणि दुर्बले ॥ २७ ॥  
शीतं कुटजमूलस्य क्षुण्णं तोयार्मणे पचेत् ॥  
काथे पादावशेषेस्मिन्पूते लेहं पुनः पचेत् ॥ २८ ॥  
सौवर्चलयवक्षारविडसैधवपिप्पली ॥  
धातर्काद्रियवाजाजीचूर्णं दत्त्वा पलद्वयम् ॥ २९ ॥  
लिह्याद्वंदरमात्रं च शीतं क्षौद्रेण संयुतम् ॥  
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ॥  
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयेच्चैव प्रवाहिकाम् ॥ ३० ॥

॥ इति कुटजावलेहः ॥

कुटजस्य पलं ग्राह्यमष्टभागजले शृतम् ॥  
तथैव विपचेद्भूयो दाडिमोदकसंयुतम् ॥ ३१ ॥  
कुटजकाथतुल्योत्र दाडिमस्य रसो मतः ॥

१ घृष्टेण । २ कशोरी । ३ पुरातन नवीन ४ पल । ५ सेर ६४ गो-  
णीनाम् । ६ जीरे । ७ कर्प्यप्रमाणम् । ८ भागावशेषितम् इति पाठः ।  
९ अनारसयुक्तः ।

गुडूच्यतिविषाधान्यशुंठीविल्वाब्दवालकैः ॥

पाठाभूनिवकुटजैश्चंदनोशीरपद्मकैः ॥ १६ ॥

कषायः शीतलः पेयो ज्वरातीसारशान्तये ॥

हृह्लासारोचकच्छादिपिपासादाहनाशनम् ॥ १७ ॥

उत्पलं दाडिमत्वक्च पद्मकेसरमेव च ॥

पिबेत्तंदुलतोयेन ज्वरातीसारशान्तये ॥ १८ ॥

उशीरं वालकं मुस्तं विल्वं धान्यकमेव च ॥

समंगाधातकीलोध्रं विश्वंपाचनदीपनम् ॥ १९ ॥

हंत्यरोचकपिच्छामविवंधं सातिवेदनम् ॥

सशोणितमतीसारं सज्वरं वाथ विज्वरम् ॥ २० ॥

अवेदनं सुसंपक्वं दीप्ताग्नेः सुचिरोत्थितम् ॥

नानावर्णमतीसारं पुटपाकैरुपाचरेत् ॥ २१ ॥

स्निग्धं घनं कुटजकल्कमजंतुजग्ध-

मादाय तत्क्षणमतीव च पेयपित्वा ॥

जंबूपेलासपुटतंदुलतोयसिक्तं

वद्धं कुशेन च वहिर्घनपंकलिसम् ॥ २२ ॥

सुस्विन्नमेतदुपपीड्य रसं गृहीत्वा

क्षौद्रेण युक्तमतिसारवने प्रदद्यात् ॥

कृष्णात्रिपुत्रमतपूजित एष योगः

सर्वातिसारशमने स्वयमेव संज्ञा ॥ २३ ॥

॥ इति वृंदात् ॥

श्रीपैर्णिपणीवृतदीर्घवृंतर्ज-

त्वक्पीडकातंदुलनारिकल्कितात् ॥

ज्येष्ठं द्रव्यपणतश्च पंचलवणं सार्द्धं त्रिकर्षं पृथक् ॥  
तच्छूक्रासनचूर्णतुल्यनिहतं तत्सर्वमेकीकृतं  
खादेच्छाणमितं सकांजिकपलं मंदाग्न्यतीसारजित् ॥  
इति लाइचूर्णम् ॥

दीप्यौ क्षारत्रयाग्नित्रिकदुग्जकणावेलभछातकोद्ग्रा  
हे जीरे हिङ्गुकुष्ठाखिलपेदुरसगंधाभ्रधूमोत्तमाश्च ॥  
एतेषां तुल्यभागं रज उदितमतीसारगूलग्रहण्या-  
नाहलीहप्रमेहानलहतियु बृहल्लाइचूर्णं प्रशस्तम् ॥ ४२ ॥  
इति बृहल्लाइचूर्णं योगरत्नावलीतः ॥

स्नानावगाहमभ्यंगं गुरुस्निग्धान्नभोजनम् ॥  
व्यायाममग्निसंतापमतीसारी विवर्जयेत् ॥ ४३ ॥  
इति वृंदात् ॥

इति योगतरंगिण्यां अतीसारचिकित्सा-  
नामैकविंशस्तरंगः ॥ २१ ॥

द्वाविंशस्तरंगः ।

अथ संग्रहणी ॥

अतीसारे निवृत्तेऽपि मंदाग्नेरहिताग्निः ॥  
भूयः संद्रूपितो वह्निर्ग्रहणीमपि दूषयेत् ॥ १ ॥  
एकैकशः सर्वशश्च दोषैरत्यर्थमूर्छितैः ॥  
सा दुष्टा बहुशो भुक्तमाममेव विमुंचति ॥ २ ॥  
पक्वं वा सुरुजं पूति मुहुर्वदं मुहुर्द्रवम् ॥  
ग्रहणीरोगमाहुस्तमायुर्वेदविदो जनाः ॥ ३ ॥  
पृष्ठी पित्तधरा नाम या कला परिकीर्तिता ॥

यावल्लपसिकाभासं गृतं तमुपकल्पयेत् ॥ ३२ ॥

तस्यार्धकर्पं तत्रेण पिवेद्रक्तातिसारवान् ॥

अवश्यमरणीयोपि मृत्योर्याति न गोचरम् ॥ ३३ ॥

॥ इति लघुकुटजावलेहः ॥

यवानीपिप्पलीमूलचातुर्जातकनागरैः ॥

मरिचाग्निजलांजाजीधान्यसौवर्चलैः समैः ॥ ३४ ॥

वृक्षाम्लधातुकीरुण्णादित्वदाडिमदीप्यकैः ॥

त्रिगुणैः पङ्गुणातितैः कपित्थाष्टगुणीकृतैः ॥ ३५ ॥

चूर्णातिसारग्रहणीक्षयगुल्मगलामघान् ॥

कासश्वासारुचीर्हिक्कां कपित्थाष्टमिदं जयेत् ॥ ३६ ॥

इति कपित्थाष्टकम् ॥

यथा गृतं भवेद्धारि तथातीसारनाशनम् ॥

अतीसारं निहंत्येव शतभागगृतं जलम् ॥ ३७ ॥

यथा गृतं तथा क्षीरमतीसारेषु पूजितम् ॥

चिरोत्थितेषु तत्पेयं त्रिभागजलसाधितम् ॥ ३८ ॥

अमृतं तन्निरामेस्यात्सामे तीसारकेविषम् ॥

सूतं गंधं त्रिकटुकं दीप्यकं जीरकद्वयम् ॥ ३९ ॥

सौवर्चलं सौधवं तु रामठं विडमेव च ॥

शक्रासनस्य चूर्णं तु चूर्णतुल्यं प्रदापयेत् ॥

संग्रहं गूलमानाहं हन्यान्नानातिसारजित् ॥ ४० ॥

इति लाईचूर्णम् ॥

कर्पं गंधकमर्द्धपारदमुभौ कुर्याच्छुभां कज्जलीं



पचैर्द्व्यस्थीः साद्धं घृततिलजगुंठ्यत्रिकुडैवैः ॥  
संमावाप्याजाजीमरिचर्चपलादीप्यकपलं  
लिहन्नेतां हन्ति ग्रहणिमनलं दीपयति च ॥ ११ ॥

इति तक्रहरीतकी वृंदात् ॥

भूनिवकौटजकटुत्रिकमुस्ततिकाः  
कर्षाशकाः सशिखिमूलपिचुद्वयाः स्युः ॥  
त्वक्कौटजीपलचतुष्कमिता गुडांभः  
पीतं नृणामिह हरेद्ब्रह्णीविकारान् ॥ १२ ॥

इति चिकित्सातः ॥

जातीफललवंगैलापत्रत्वङ्नागकेसरैः ॥  
कर्पूरचंदनतिलत्वक्षीरीतगरामलैः ॥  
तालीसपिप्पलीपथ्यास्थूलजीरकचित्रकैः ॥ १३ ॥  
गुंठीविडंगमरिचैः समभागैर्विचूर्णितैः ॥  
यावत्प्रेतानि सर्वाणि दद्याद्भृंगं च तावतीम् ॥ १४ ॥  
सर्वचूर्णसमा देया शर्करा च भिषग्वरैः ॥  
कर्पमात्रं ततः स्वादेन्मधुना श्लाघितं सुधीः ॥ १५ ॥  
अस्य प्रभावाद्ब्रह्णीकासश्वासारुचिक्षयाः ॥  
वातश्लेष्मप्रतिश्यायाः प्रशमं यांति वेगतः ॥ १६ ॥

॥ इति जातीफलादिचूर्णम् ॥

तालीसोयर्तुगापडूपणनिशाविल्वाजमोदासटी-  
चातुर्जातिलवंगधातुकिविषाजातीफलं दीप्यकम् ।  
पाठामोचरसालपंचलवणाजाजीद्वयं वेल्लकं

१ अस्थिरहिताः । २ वेतः । ३ त्रिभिः कुडैव । ४ एकीकृत्य ।  
५ मोशिखाकी जड । ६ गलचीनी । ७ इन्द्रजो । ८ धंसलोचन । ९ प-  
नियो । १० वेतगिरी ।

पक्वामाशयमध्यस्था ग्रहणीं तां विदुर्बुधाः ॥ ४ ॥

॥ उक्तं च ॥

अथामसंचयादेव जायते ग्रहणीगदः ॥

क्वचिदामं क्वचित्पक्वं सार्यते विदुसरुद्रवम् ॥ ५ ॥

पक्षाद्वा द्वादशाहाद्वा विंशतेर्वा दिनात्परम् ॥

मासाद्वापि भवेत्कोपो ग्रहणीरुजि मानवे ॥ ६ ॥

ग्रहणीमाश्रितं दोषमजीर्णवदुपाचरेत् ॥

अतीसारोक्तविधिना तस्यामं च विरेचयेत् ॥ ७ ॥

इति वृंदात् ॥

विश्वादिभिः सरुजि पाचनमत्र शस्तं

मुस्तादिभिर्भवति संग्रहणं ततश्च ॥

स्यादीपनं तदनु च ग्रहणीविकारे

कल्याणकारिभिरिति ग्रहणी चिकित्स्या ॥ ८ ॥

पाठाधान्ययवान्वजाजिह्वुपाचव्याग्निसिंधूद्भवैः

सश्रेयस्यजमोदकीटैरिषुभिः कृष्णाजटातंपुतैः ॥

सव्योषैः सफलत्रिकैः संत्रुटिभिस्त्वक्पर्पत्रकैरौषधै-

रित्यक्षप्रमितैः सतैलकुडवैः साण्डत्रिवृन्मुष्टिभिः ॥ ९ ॥

एतैरामलकीरसस्य तुलया सार्द्धं तुलार्द्धं गुडा-

त्यक्तव्यं भिषजावलेहवदयं प्राग्भोजनान्द्रक्षितः ॥

ये केचिद्ग्रहणीगदाः सगुदजाः कास्ताः सशोषामयाः

सश्वासश्चयथुस्वरोदररुजः कल्याणकस्ताजयेत् ॥ १० ॥

॥ इति कल्याणकावलेहः ॥

त्रिकांशो तक्रस्य द्विकुडवपटौ पॅष्टिरभयाः

१ वा विपाचयेत् इति पाठः । २ सहरीतकी ३ धायविडंग । ४ पीपसमूल ।  
५ एलाभिः सह । ६ दालचीनी पत्रज । ७ निमोत । ८ पत्रप्रमाणे ।  
९ सेर१२ । १० साठअदर६० ।

अंभोधिपांक्तिकरशैलधराष्टविंश-

त्यंशैर्विचूर्णिततमैर्ग्रहणीकपाटः ॥ २५ ॥

बहोस्य हन्ति मधुना सह जीरकेण

भुक्तोतिसारमपि संग्रहणीमुदग्राम् ॥

आमं विपाच्य सहसा जनयत्यवश्यं

वैश्वानरं जठरवर्तिनमर्तिभाजः ॥ २६ ॥

इति ग्रहणीकपाटः ॥

रसेद्रगंधातिविषाभयाघ्नं क्षारत्रयं मोचरसो वचा च ॥

जंयाच जंवीररसेन पिष्टः पिंडीकृतः स्याद्ग्रहणीकपाटः ॥

तस्यार्द्धमापं मधुना प्रभाते शंवूकभस्माभियुतं निहन्ति ॥

उग्रं ग्रहण्यामयमग्निमांद्यं क्षैण्यामयंश्वासमुरःक्षतंच २७

॥ इति अपरो ग्रहणीकपाटः योगरत्नावलीतः ॥

पिच्छिलानि कठोराणि गुरुण्यन्नानि यानि च ॥

आमकुंति न सेव्यानि ग्रहणीरोगिभिः क्वचित् ॥ २८ ॥

इति योगतरंगः ग्रहणीचिकित्सानामद्वाविंशस्तरंगः ॥ २२

त्रयो विंशस्तरंगः ।

॥ अथाशः ॥

पृथग्दोषैः समस्तैश्च शोणितात्सहजानि च ॥

अशांसि पट्प्रकाराणि विद्याद्दुदबलित्रये ॥ १ ॥

दोषास्त्वद्मांसमेदांसि संदूष्य विविधाकृतीन् ॥

मांसांकुरान्नपानादौ कुर्वत्यशांसि ताजगुः ॥ २ ॥

विष्टंभोन्नस्य दौर्वल्यं कुक्षेराटोप एव च ॥

काश्यमुद्गारबाहुल्यं सक्थिसादोलपविट्कृता ॥ ३ ॥

ग्रहणीदोषपांडुर्तेराशंका चोदरस्य च ॥

वृक्षाम्लाम्लवरापलाशनेरुजं मांस्यंबुदं वालकम् ॥ १७ ॥  
 ऐंद्रीव्रंक्षसुवर्चला दृढपदी कुष्ठं समस्तं समं  
 वल्या सर्वसमा रजयाखिलसमा मत्स्यांडिका वासिता ॥  
 चूर्णोयं ग्रहणीक्षयादिकसनश्वासारुचिष्ठीहरु-  
 ग्दुर्नामातिसृतिज्वरार्तिपवनस्थौल्यप्रमेहप्रणुत् ॥ १८ ॥  
 तीव्रापस्मृतिपांडुगुल्मजठरश्लेष्मोत्पित्तोद्भवो-  
 न्मादध्वंसविधायको विजयते सर्वामयध्वंसकः ॥  
 चालानां च विशेषतो हितकरः सुस्पष्टवाणीप्रदः  
 पुष्ट्यायुर्वलकांतिधीस्मृतिमहामेधाविलासप्रदः ॥ १९ ॥

इति तालीसाद्यं चूर्णम् ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलं द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥  
 व्योषहिंश्वजमोदा च चव्यं चैकत्र कारयेत् ॥ २१ ॥  
 गुटिका मातुलुंगस्य दाडिमस्य रसेन वा ॥  
 कृता विपाचयत्यामं दीपयत्यागु चानलम् ॥ २२ ॥

इति चित्रकादिगुटिका ॥

ग्रहणीरोगिणस्तक्रं संग्राहि लघुदीपनम् ॥  
 पथ्यं मधुरपाकित्वाञ्च च पित्तप्रकोपनम् ॥ २३ ॥  
 श्रीफलशलादुकल्को नागरचूर्णेन मिश्रितः सगुडः ॥  
 ग्रहणीगदमत्युग्रं तक्रभुजा शीलितो जयति ॥ २४ ॥  
 इति वृंदात् ॥

शुद्धाहिफेनवलिसूतकपर्दभस्म-

हालाहैलोपणविशुद्धसुवर्णबीजैः ॥

१. त्रिफला । २. पलाशपुष्पम् । ३. मोया । ४. इत्रादणी । ५. इ-  
 रहर इतइत । ६. बडफरी । ७. शतावर्या । ८. भगा । ९. स्वेतखंड ।  
 १०. अपक्वविल्वम् आम फल शलातुः स्यादिति हैमः । ११. पीपर । १२. शु-  
 द्धसुरबीजैः ।

अंभोधिपंक्तिकरशैलधराष्टर्विंश-  
 त्यंशैर्विचूर्णिततमैर्ग्रहणीकपाटः ॥ २५ ॥  
 बहोस्य हन्ति मधुना सह जीरकेण  
 भुक्तोतिसारमपि संग्रहणीमुदग्राम् ॥  
 आमं विपाच्य सहसा जनयत्यवश्यं  
 वैश्वानरं जठरवर्तिनमर्तिभाजः ॥ २६ ॥

इति ग्रहणीकपाटः ॥

रसेन्द्रगंधातिविपाभयाभ्रं क्षारत्रयं मोचरसो वचा च ॥  
 जंयाच जंवीररसेन पिष्टः पिंडीकृतः स्याद्ग्रहणीकपाटः ॥  
 तस्यार्द्धमापं मधुना प्रभाते शंवूकभस्माभियुतं निहन्ति ॥  
 उग्रं ग्रहण्यामयमग्निमांदं क्षैण्यौमयंश्वासमुरःक्षतंच २७  
 ॥ इति अपरो ग्रहणीकपाटः योगरत्नावलीतः ॥  
 पिच्छिलानि कठोराणि गुरुण्यन्त्रानि यानि च ॥  
 आमकुंति न सेव्यानि ग्रहणीरोगिभिः क्वचित् ॥ २८ ॥  
 इति योगतरंगं ग्रहणीचिकित्सानामद्वाविंशस्तरंगः ॥ २२

त्रयो विंशस्तरंगः ।

॥ अथांशः ॥

पृथग्दोषैः समस्तैश्च शोणितास्तहजानि च ॥  
 अंशांसि षट्प्रकाराणि विद्याद्बुद्धबलित्रये ॥ १ ॥  
 दोषास्त्वद्मांसमेदांसि संदूष्य विविधाकृतीन् ॥  
 मांसांकुरान्नपानादौ कुर्वत्यंशांसि ताज्जगुः ॥ २ ॥  
 विष्टंभोन्नस्य दौर्वल्यं कुक्षेराटोप एव च ॥  
 काश्यंमुद्गारबाहुल्यं सक्थिसादोल्पविट्कृता ॥ ३ ॥  
 ग्रहणीदोषपांड्वर्तेरांका चोदरस्य च ॥

पूर्वरूपाणि निर्दिष्टान्यर्शसामभिवृद्धये ॥ ४ ॥  
 गुदांकुरा वह्ननिलाः शुष्काश्चिभिचिमान्विताः ॥  
 म्लानाः श्यावारुणाःस्तब्धा विपमाः परुषाः खराः ॥ ५ ॥  
 मिथो विसदृशा वक्रास्तीक्ष्णा विस्फुटिताननाः ॥  
 विंवीकैर्कंधुखर्जूरकार्पासीफलसन्निभाः ॥ ६ ॥  
 केचित्कदंबपुष्पाभाः केचित्सिद्धार्थकोपमाः ॥  
 शिरःपार्श्वांसकटचूरुवंक्षणाभ्यधिकव्यथाः ॥ ७ ॥  
 क्षवधून्नारविष्टंभट्टद्वहारोचकप्रदाः ॥  
 तैरातो ग्रथितं स्लोकं सशब्दं सप्रवाहिकम् ॥ ८ ॥  
 रुक्फेनपिच्छानुगतं विड्वद्धमुपवेश्यते ॥  
 कृष्णत्वग्नष्टविष्णुमूत्रनेत्रवक्रः प्रजायते ॥ ९ ॥  
 गुल्मप्लीहोदराध्नीलासंभवस्तत एव च ॥  
 पित्तोत्तरा नीलमुखा रक्तपीतासितप्रभाः ॥ १० ॥  
 तन्वस्त्राविणो रक्तास्तनवो मृदवस्तथा ॥  
 गुकजिह्वा यकृत्पिंडजलौकावक्रसंनिभाः ॥ ११ ॥  
 दाहपाकज्वरस्वेदतृष्णमूर्छारतिमोहदाः ॥  
 सोष्माणो द्रवनीलोष्मपीतरक्तामवर्चसः ॥ १२ ॥  
 पवमध्या हरित्पीता हारिद्रत्वङ्नखादयः ॥  
 श्लेष्मोल्बणा महामूला घना मंदरुजः सिताः ॥ १३ ॥  
 उत्सन्नोपचिताः स्निग्धाः स्तब्धवृत्तगुरुस्थिराः ॥  
 पिच्छिलाः स्तिमिताः श्लक्ष्णाः कंडूढ्याः स्पर्शनप्रियाः ॥  
 करीरपनसास्थ्याभास्तथा गोस्तनसन्निभाः ॥  
 यक्षणानाहिनः पायुवस्तिनाभिविकर्षिणः ॥ १५ ॥  
 सकासश्वासदृष्टासप्रसैकारुचिपीनसाः ॥

महकच्छाशेरोजाड्यशिशिरज्वरकारिणः ॥ १६ ॥  
 क्लेश्याग्निमार्दवच्छर्दिरामप्राया विकारदाः ॥  
 वसाभाः सकफप्रायाः पुरीषाः सप्रवाहिकाः ॥ १७ ॥  
 न स्रवंति न भिद्यन्ते पांडुस्निग्धत्वगादयः ॥  
 सर्वैः सर्वात्मकान्याहुर्लक्षणैः सहजानि च ॥ १८ ॥  
 रक्तोल्बणा गुदे कोलाः पित्ताकृतिसमन्विताः ॥  
 बटप्ररोहसदृशा गुंजाविद्रुमसन्निभाः ॥ १९ ॥  
 तेत्यर्थं दुष्टमुष्णं च गाढविद्रुप्रपीडिताः ॥  
 स्रवंति सहसा रक्तं तस्य चातिप्रवृत्तितः ॥ २० ॥  
 भेकाभः पीडयते दुःखैः शोणितक्षयसंभवैः ॥  
 हीनवर्णबलोत्साहो हनौजाः कलुषेन्द्रियः ॥ २१ ॥  
 विद्विष्यावं कठिनं रूक्षमधोवायुर्न गच्छति ॥  
 तनु चारुणवर्णं च फेनिलं चासृगर्शसाम् ॥ २२ ॥  
 बाह्यायां तु बलौ जातान्येकदोषोल्बणानि च ॥  
 अर्शांसि सुखसाध्यानि न चिरोत्पतितानि च ॥ २३ ॥  
 द्वंद्वजानि द्वितीयायां बलौ यान्याश्रितानि च ॥  
 कृच्छ्रसाध्यानि तान्याहुः परिसंवत्सराणि च ॥ २४ ॥  
 सहजानि त्रिदोषाणि यानि चाभ्यन्तरां बलिम् ॥  
 जायन्तेऽर्शांसि संसृत्य तान्यसाध्यानि निर्दिशेत् ॥ २५ ॥  
 हस्तादिशोफैर्हृत्पार्श्वगूलैश्छर्दिज्वरादिभिः ॥  
 तूष्णया गुदपाकेन निहन्युर्गुदजा नरम् ॥ ॥  
 मेढ्रादिष्वपि जायन्ते दुर्नामानि नृणामिह ॥ २६ ॥  
 तत्रार्शसामुपदिशन्ति चतुःप्रकार-  
 मारोग्यमेकमंगदैरपरं च शस्त्रैः ॥

क्षारेण चान्यदनलेन चतुर्थमित्य-  
 मित्यागमैकंकृतिनः किल शुश्रुताद्याः ॥ २७ ॥  
 स्यादौषधैरचिरजेषु चिरोद्भतेषु  
 क्षारेण च क्षतजपित्तसमुद्भवेषु ॥  
 स्थूलेषु वातकफजेष्वनलेन शब्दैः  
 संत्वाधिकस्य बलिनश्च सतश्चिकित्सा ॥ २८ ॥

इति चिकित्सातः ॥

अशोऽतिसारग्रहणीविकाराः  
 प्रायेण चान्योन्यानिदानभूताः ॥  
 सन्नेऽनले संति न संति दीप्ते  
 रक्षेदतस्तेषु विशेषतोऽग्निम् ॥ २९ ॥  
 यद्वायोरानुलोम्याय यदग्निबलवृद्धये ॥  
 अन्नपानौषधं सर्वं तत्सेव्यं नित्यमर्शसैः ॥ ३० ॥  
 पित्तातिसारवद्भिन्नवर्चास्यर्शास्युपाचरेत् ॥  
 उदावर्तविधानेन गाढविट्कानि चासकृत् ॥ ३१ ॥  
 प्रवृत्तबहुलास्त्राणि पित्तशोणितनाशनैः ॥  
 विड्विवंधे हितं तक्रं यवानीविश्वसंयुतम् ॥ ३२ ॥  
 न प्ररोहंति गुदजाः प्रायस्तक्रसंमाहताः ॥  
 तिलं भृष्टातकं पथ्या गुडश्चेति समांशकम् ॥ ३३ ॥  
 दुर्न्नामश्वासकासघ्नं घृहपांडुज्वरापहम् ॥  
 मरिचमहौषधचित्रकशूरणभागा यथोत्तरं द्विगुणाः ॥  
 सर्षपसमो गुडभागः सेव्योऽयं मोदकः प्रासिद्धफलः ॥ ३४ ॥  
 पर्वलनं ज्वलयति जाठरमुन्मूलयति प्रगूलगुल्मगदान् ॥



निःशेषयति श्लीपदमर्शांसि नाशयत्याशु ॥ ३५ ॥  
 मृह्लितं सौरणं कंदं पक्काग्रौ पुटपाकवत् ॥  
 अद्यात्सतैललवणं दुर्नामविनिवृत्तये ॥ ३६ ॥  
 नवनीततिलाभ्यासात्केसरनवनीतशर्कराभ्यासात् ॥  
 वंधिरसमथिताभ्यासाद्बुद्धजाः शाम्यन्ति रक्तवहाः ॥ ३७ ॥  
 शिरीषबीजं द्वौ क्षारौ लांगली सैधवं वचा ॥  
 स्नुहीक्षीरेण पिष्टानि गवां पित्तेन भावयेत् ॥ ३८ ॥  
 अर्शांसि लेपयेत्तेन सप्तरात्रं पुनःपुनः ॥  
 लिप्तान्येतानि सर्वाणि विनश्यन्ति न संशयः ॥ ३९ ॥  
 यथा सर्वाणि कुष्ठानि हतः खदिरबीजकौ ॥  
 तथा ह्यर्शांसि सर्वाणि वृक्षकौरुष्करौ हतः ॥ ४० ॥  
 हरिद्रायाः प्रयोगेण प्रमेहा इव पोडश ॥  
 क्षाराग्निभ्यां निवर्तते तथा दृश्या गुदोद्भवाः ॥ ४१ ॥  
 इति वृंदात् ॥  
 भागाः पोडश बृद्धदारुसाहितात्कंदात्कृतात्कर्कशा-  
 दृष्टौ चित्रकमूलतश्च तुलिताः स्युस्तालमूलीयुतात् ॥  
 तालीसत्रिफलाविडंगमगधाविश्वोषकुल्याजटा-  
 भल्लतैश्च चतुष्पलैर्द्विपलकैरेलालवंगोपणैः ॥ ४२ ॥  
 इत्येभिः सकलैर्गुडद्विगुणितैः कुर्याद्भिषङ्मोदका-  
 न्यैर्भुक्तैर्न नृणां भवन्ति गुदजा न घ्नीहपांड्वामयाः ॥  
 नो गुल्मग्रहणीगदोदररुजः कोष्ठे न शूलानि च  
 श्वासश्लीपदशोफविद्रधियरुद्धंध्यवुंदादीनि च ॥ ४३ ॥  
 इति गूरुणपिडिका ॥

पथ्यादलस्य गुरुणः पलपंचकं स्या-  
 देकं पलं च मरिचादपि जरिकाच्च ॥  
 कृष्णातदुद्भवजटाचविकाग्निशुंठ्यः  
 कृष्णादिपंचकमिदं पलतः प्रवृद्धम् ॥ ४४ ॥

एतैरैरुष्करपलाष्टकसंयुतैः स्या-  
 त्कंदैस्त्वरुष्करफलाद्द्विगुणः प्रकल्प्यः ॥  
 स्याद्यावशूककुडवार्द्धमतः समस्ता-  
 द्योष्यो गुडो द्विगुणितो वटकीकृतश्च ॥  
 कांकायनेन मुनिना गदितः किलायं  
 श्रेयस्करेण वटकोऽत्र गुदामयेषु ॥  
 क्षाराग्निशस्त्रयतनैरपि ये न सिद्धाः  
 सिध्यंत्यनेन वटकेन गुदामयास्ते ॥ ४६ ॥

इति कांकायनवटकः चिकित्सातः ॥  
 सिंधूत्थं देवदाल्याश्च बीजं कांजिकपेपितम् ॥  
 गुदांकुरान्प्रलेपेन पातयत्युल्बणानि च ॥ ४७ ॥  
 शुंठीकणामरिचनागदलत्वगेलं  
 चूर्णीकृतं क्रमविवर्धितमूर्द्धमंत्यात् ॥  
 खादेदिदं समसितं गुदजाग्निमांद्य-  
 गुल्मारुचिश्चसनकंठहृदामयेषु ॥ ४८ ॥

इति समशर्करं चूर्णम् ॥  
 सनागरारुष्करवृद्धदारुकं गुडेन यो मोदकमत्युदारकम् ॥  
 अशेषदुर्न्नामकरोगदारकं करोति वृद्धिं सहस्रैव दारकं ४९  
 इति चतुःसमो मोदकः योगरत्नावलीतः ॥

देवदालीकषायेण शौचमाचरतां नृणाम् ॥

किं वा तद्गमसेवाभिः कुतः स्युर्गुदजांकुराः ॥ ५० ॥

तसायोलांछनं केचिदुर्नामघ्नं बुधा जगुः ॥

तत्रं सकृष्णं पिवतां दुर्नामश्रवणं कुतः ॥ ५१ ॥

अथ रसः ॥

भागः शुद्धरसस्य भागयुगुलं गंधस्य लोहाभ्रयोः

षड्बिल्वाग्निदेलोपणात्रयरजो दंती च भागैः पृथक् ॥

पंच स्युः स्फुटटकणस्य च यवक्षारस्य सिधूद्भवा

भागाः पंच गवां जलं सुविमलं द्वात्रिंशदेतत्पचेत् ॥ ५२ ॥

स्तुग्दुग्धं च गवां जलावधि शनैः पिडीकृतं तद्भजे-

द्वौ माषौ गुदकीलकाननजटाच्छेदे कुठारो गन्धः ॥ ५३ ॥

इत्यर्शःकुठारो रसः रसरत्नप्रदीपात् ॥

शुद्धं वारि रससमं सुदृढं विमर्द्यः

सर्पिःक्षुतं द्विगुणबोलरजोविमिश्रम् ॥

तावत्पचेद्भवति लोहमये च याव-

त्पात्रे क्षिपेच्च कदलीदलयुग्ममध्ये ॥ ५४ ॥

जातो रसः पर्पटिकाभिधानः समस्तदुर्नामकरो गह्वरी ॥

संसेवितो बलचतुष्कमात्रमार्तस्य पुंसस्तनुपुष्टिकारी ५५

इति बोलवद्धरसः ॥

मृतं सूताभ्रलोहार्कविधं गंधं समंसमम् ॥

सर्वतुल्यांशभलातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ५६ ॥

द्रवैः सूरणकंदोत्थैः खल्वे मर्द्यं दिनत्रयम् ॥

माषमात्रं लिहेदाज्यैरसाध्यार्शांसि नाशयेत् ॥

रसो नित्योदितो नाम्ना स्रशो रोगकुलांतकः ॥ ५७ ॥

इति नित्योदितरसः ॥

वेगावरोधं स्वीयानं कटुकं चोत्कटाशनम् ॥

यथास्वं दोषलं चान्नमर्शसः परिवर्जयेत् ॥ ५८ ॥

पित्तकृन्ति न सेव्यानि द्रव्याण्यशोयुतैर्नरैः ॥

विना तक्रं समगधं विनाञ्जं लघुपाकि च ॥ ५९ ॥

इति श्रीयोगत० मर्शश्चिकित्सा नाम त्रयोविंशस्तरंग

चतुर्विंशस्तरंगः

॥ अथाजीर्णम् ॥

प्रकृत्पा रसशोषाद्वा त्रिभिर्दोषैरपाकतः ॥

भवंति षडजीर्णानि वैषम्यादशनस्य च ॥ १ ॥

विवंधोतिप्रवृत्तिर्वा ग्लानिर्मास्तमूढता ॥

अजीर्णलिंगं सामान्यं विष्टंभो गौरवध्रमः ॥ २ ॥

समेस्य रक्षणं कार्यं विषमे वातानिग्रहः ॥

तीक्ष्णे पित्तप्रतीकारो मंदे श्लेष्मविशोधनम् ॥ ३ ॥

वचालवणतोयेन वांतिरामे प्रशस्यते ॥

धान्यनागरसिद्ध वा तोषं दद्याद्विचक्षणः ॥ ४ ॥

आमाजीर्णप्रशमनं गूलघ्नं वस्तिशोधनम् ॥

विष्टंभे स्वेदनं कार्यं पेयं वा लवणोदकम् ॥

रसशोषे दिवास्वापो लघनं वमनं तथा ॥ ५ ॥

व्यायामप्रमदाध्ववाहनं रतक्लिन्नानतीसारिणः

गूलश्वातवतस्तृषामदमहाहिकामरुत्पीडितान् ॥

क्षीणान्क्षीणकफाच्छिगून्मदहतान्बृद्धाग्रसाजीर्णिनो

रात्रौ जागरिताञ्जराञ्जिरशानान्कामं दिवा स्वापयेत् ॥ ६ ॥

१ अमेः । २ भयोवाक्छो अभारलोच । ३ सम्रायेः पुंल । ४ स्त्रासंगमा । ५ अघटितार

पथ्यापिप्पलिसंयुक्तं चूर्णं सौवर्चलं पिवेत् ॥  
 मधुनोष्णोदकेनाथ मत्वां दोषगर्तं भिषक् ॥ ७ ॥  
 चतुर्विधमजीर्णं तु मंदानलमथारुचिम् ॥  
 आध्मानं वातगुल्मं च गूलं चाशु विनाशयेत् ॥ ८ ॥  
 विडंगं नागरं कृष्णापथ्यावह्निविभीतकाः ॥  
 वचा गुडूची भल्लातं विषं चात्र प्रयोजयेत् ॥ ९ ॥  
 एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेययेत् ॥  
 गुंजाभा गुटिका कार्या दद्याद्द्राक्षकजै रसैः ॥ १० ॥  
 एकामजीर्णयुक्तस्य द्वे विषूच्यां च दापयेत् ॥  
 तिस्रो भुजंगवष्टस्य चतस्रः सन्निपातिनः ॥  
 गुटिका जीवनीनाम्ना संजीवयति मानवम् ॥ ११ ॥  
 इति संजीवनी गुटिका ॥  
 मातुर्लिङ्गं जटा व्योषं निशावीजं करंजकम् ॥  
 कांजिकेनांजनं हन्याद्विषूचीमतिदारुणाम् ॥ १२ ॥  
 इति विषूचिकांजनम् ॥  
 हिंगुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा मत्ता ॥  
 पिप्पली त्रिगुणा देया शृंगवेरं चतुर्गुणम् ॥ १३ ॥  
 यवानी स्यात्पंचगुणा षड्गुणा च हरीतकी ॥  
 चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं मतम् ॥ १४ ॥  
 एतद्वातहरं चूर्णं पीतमामप्रशान्तये ॥  
 पिवेद्भ्रा मस्तुना वा सुरया कोष्णवारिणा ॥ १५ ॥  
 सोदावर्तमजीर्णं च श्लीहानमुदरं तथा ॥  
 अंगानि यस्य दीर्यते विषं वा येन भक्षितम् ॥ १६ ॥  
 चूर्णमग्निमुखं नाम्ना सर्वोपद्रवमाहरेत् ॥ १७ ॥  
 इत्यग्निमुखं चूर्णं वीरसिंहावलोकतः ॥

त्रिकटुकमजमोदा सैधवं जीरके द्वे  
 समधरणधृतानामष्टमो हिङ्गुभागः ॥  
 प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषा चूर्णमेत-  
 जनयति जठराग्निं वातरोगान्निहन्ति ॥ १८ ॥  
 इति हिङ्गवष्टकम् ॥

माणिमंथस्य भागौ द्वौ यवान्यास्तद्वदेव तु ॥  
 भागास्त्रयोऽजमोदाया नागरं भागपंचकम् ॥ १९ ॥  
 दश द्वौ च हरीतक्याः सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥  
 मस्त्वारनालतक्रेण सर्पिपोष्णोदकेन वा ॥ २० ॥  
 पीतं जयत्यामवातं गुल्मद्वद्वस्तिजान्नादान् ॥  
 प्लीहानं ग्रंथिगूलादिमानाहं गुदजानि च ॥ २१ ॥  
 विबंधजठरारोगान्केचिद्वातसमुद्भवान् ॥  
 घातानुलोपनामिदं चूर्णं वैश्वानरं स्मृतम् ॥ २२ ॥  
 इति वृद्धवैश्वानरचूर्णं वृंदात् ॥

सिंधूत्थपथ्यमगंधोद्भववाह्निचूर्ण-  
 सुष्णांबुना पिवति यः खलु नष्टवाहिः ॥  
 तस्यामिषेण सघृतेन वरं नवाञ्च  
 भस्मीभवत्यक्षितमात्रमपि क्षणेन ॥ २३ ॥  
 इति लघुवैश्वानरचूर्णं योगरत्नावलीतः ॥  
 पिप्पली पिप्पलीमूलं धान्यकं कृष्णजीरकम्  
 सैधवं च विडं चैव पत्रतालीसकेसरान् ॥ २४ ॥  
 एषां द्विपलिकान्भागान्यंच सौवर्चलस्य च ॥  
 मरिचाजाजिशुंठीनामेकैकस्य पलंपलम् ॥ २५ ॥

त्वगेलाचार्द्धभागः स्यात्सामुद्रात्कुडवद्वयम् ॥  
 दाडिमात्कुडवं चेव द्विपलं चाम्लवेतसम् ॥ २६ ॥  
 एतच्छूर्णीकृतं श्लक्ष्णं सुगंधममृतोपमम् ॥  
 लवणं भास्करं नाम भास्करेण विनिर्मितम् ॥ २७ ॥  
 श्लेष्मवातं वातगुल्मं गुल्ममंदाग्रोचकान् ॥  
 अन्यानपि निहंत्याशु रोगाल्लवणभास्करः ॥ २८ ॥  
 इति लवणभास्करचूर्णम् ॥

अर्कस्तुहीतिलाश्वत्थचिंचापामार्गवह्विजम् ॥  
 गृहीत्वा भस्म तस्मात्तु वस्त्रपूतं जलं हरेत् ॥ २९ ॥  
 मृद्वग्निना पचेत्तं तु यावल्लवणतां व्रजेत् ॥  
 तत्तुल्यावेव संग्राह्यौ द्वौ क्षारौ टंकणं तथा ॥ ३० ॥  
 सामुद्रं वापि गोदन्तं कासीसं चापि सोरंकम् ॥  
 द्विगुणं पंचलवणं शंखेद्रावरसेन तु ॥ ३१ ॥  
 काचकूप्यां विनिक्षिप्य सप्ताहं त्वम्लयोगतः ॥  
 संधितं सकलं चूर्णं वारुणीयंत्रमुद्धरेत् ॥ ३२ ॥  
 द्रुतं तेजोजलप्रस्थं स्वच्छं स्रवति तत्तदा ॥  
 सर्वान्धातून्द्रावयति वराटानपि शंखकान् ॥ ३३ ॥  
 अजीर्णस्याथ मंदाग्रेः का वार्ता द्रावणे पुनः ॥  
 गुल्मझीहोदरं गुल्ममृध्यापि विनाशयेत् ॥  
 वैद्यजीवनहेतुश्च शंखद्रावरसो ह्ययम् ॥ ३४ ॥  
 इति शंखद्रावरसः ॥

अथ रसः ॥

१ समुद्रलवणम् । २ गोदन्त क्षारविशेषः । ३ श्वेतकासीसः । ४ सो-  
 ५ कासीससाराफिटकरीतुल्यकाना अर्कजम् । ६ वसितम् । ७  
 यत्रेण । ८ निर्मलम् ।

शुद्धोरसः पलमितौ द्विपलं गंधकं मतम् ॥  
 पलाई लोहभस्म स्यात्ताम्रमर्द्धपलं मतम् ॥ ३५ ॥  
 सर्वं कज्जलिकीकृत्य लोहपात्रे विनिःक्षिपेत् ॥  
 चुल्यांमार्गं मूढं दद्याद्यथा गंधो न दह्यते ॥ ३६ ॥  
 गोमेषस्यालंवाले तु पत्रं वातारिजं क्षिपेत् ॥  
 स्थापयेच्च रसं तत्र पत्रं चोपरि निक्षिपेत् ॥ ३७ ॥  
 वस्त्रगुहं ततः कृत्वा लोहपात्रे पुनः क्षिपेत् ॥  
 पुनस्तत्तापयेच्चुह्यां मातुलुंगरसं ततः ॥ ३८ ॥  
 मानाच्छतपलं दद्यात्पंचकोलं तथैव च ॥  
 चुक्रस्य च तुलां दत्वा सिद्धं तच्च समुद्धरेत् ॥ ३९ ॥  
 एकं तद्गोलकं कृत्वा तत्तमं टंकणं मतम् ॥  
 टंकणार्थं विषं दद्यान्मरिचं विपसम्मितम् ॥ ४० ॥  
 भावनाश्वणकक्षारैः सप्त दद्याद्विचक्षणः ॥  
 सिध्यत्येवं रसस्तं तु रसं मापद्वयात्मकम् ॥ ४१ ॥  
 सैधवं मापमात्रं तु तत्रेण सह पाययेत् ॥  
 रसं कव्यादनामानं दद्यात्तं भोजनोपरि ॥ ४२ ॥  
 शीघ्रं तज्जारयेद्भुक्तं पुनर्भोजनमाचरेत् ॥  
 अनेन क्रमयोगेन सर्वव्याधिहरो रसः ॥ ४३ ॥  
 इतिकव्यादरसः एते रसार्णवतः ॥  
 द्विपलं गंधकं शुद्धं द्रावयित्वा विनिःक्षिपेत् ॥  
 पारदं पलमानं तु मृतगुल्वायैसी पुनः ॥ ४४ ॥  
 तोलमानेन संमिश्राः पंचागुलदले क्षिपेत् ॥  
 ततो विचूर्ण्य यत्नेन लोहपात्रे विनिःक्षिपेत् ॥ ४५ ॥  
 मृद्वग्निना पचेत्तं तु दर्व्या संचालयन्मुहुः ॥



पलमात्ररसं सम्यग्दद्याज्जंवीरकस्य तु ॥  
 संचूर्ण्य पंचकोलोत्थैः कंषायैः साम्लवेतसैः ॥ ४६ ॥  
 भावना किल दानव्याः पंचाशत्प्रमिताः पृथक् ॥  
 भ्रष्टकणचूर्णेन तुल्येन सह मेलयेत् ॥ ४७ ॥  
 तदर्थं कृष्णलवणं मरिचं सर्वतुल्यकम् ॥  
 सप्तधा भावयेत्पश्चाच्चणकक्षारवारिणा ॥ ४८ ॥  
 ततः संशोष्य संपेष्य कूप्याश्च जठरे क्षिपेत् ॥  
 अत्यर्थं गुरुमांसानि गुरुभोज्यान्यनेकशः ॥ ४९ ॥  
 भुक्तानि कंठपर्यंतं चतुर्वह्नमितो रसः  
 कट्वम्लतक्रताहितः पीतमात्रो हि पाचयेत् ॥ ५० ॥  
 पुनर्भोजयति क्षिप्रं का पुनर्मदवह्निता ॥  
 रसः क्रव्यादनामायं प्रोक्तो मंथानभैरवात् ॥ ५१ ॥  
 सिंहलक्षोणिपालस्य भूरिमांसप्रियस्य च ॥  
 दिष्टो ग्रामं समासाद्य भैरवानंदयोगिना ॥ ५२ ॥  
 कुर्याद्दीपनमूर्ध्वजत्रुगदद्वहुष्टामसंशोधनं  
 तुंदर्यौल्यनिवर्हणो गदहरः शूलार्तिशूलापहः ॥  
 गुल्मप्लीहविनाशको बहुरुजां विध्वंसनो वातहा  
 वातग्रंथिमहोदरापहरणः क्रव्यादनामा रसः ॥ ५३ ॥  
 इति बृहत्क्रव्यादरसः मंथानभैरवात् ॥  
 चिंचाऽश्वत्थस्नुहीक्षारादपामार्गार्कतस्तथा ॥  
 लवणं पंच संगृह्य ततो लवणपंचकम् ॥ ५४ ॥  
 सैंधवाढ्यं समादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ॥  
 कर्पकर्म विषं गंधं रसं टंकणकं तथा ॥ ५५ ॥  
 हिंगुपिप्पलिशुंठीनां तथा मरिचजीरयोः ॥

द्वौ द्वौ कर्पौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शंखचूर्णतः ॥ ५६ ॥

पलत्रयाच्च कर्पकं द्विकर्पं तु लवंगतः ॥

एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥ ५७ ॥

भावयेदम्लयोगेन सप्तधा तु प्रयत्नतः ॥

रसः शंखवटी नाम्ना सेवितः सर्वरोगजित् ॥ ५८ ॥

गुंजामात्रमिदं खादेद्भवेद्दीपनपाचनम् ॥

अजीर्णं वातसंभूतं पित्तश्लेष्मभवं तथा ॥

विपूर्वां गूलमानाहं हन्यादत्र न संशयः ॥ ५९ ॥

इति शंखवटी रसार्णवतः ॥

अथ भस्मकरोगनिदानचिकित्सा ॥

कफे क्षीणे यदा पित्तं स्वस्थाने मारुतानुगम् ॥

तीव्रं प्रवर्धयेदग्निं तदा तं भस्मकं वदेत् ॥ १ ॥

तृड्दाहश्वासमूर्छादीन्कृत्वैवात्यग्निसंभवान् ॥

पक्कान्नमाशु धात्वादीन्स क्षिप्रं नाशयेत्तनुम् ॥ २ ॥

तं भस्मकं गुरुस्निग्धसांद्रमंडहिमसिंधैः ॥

अन्नपानैर्नयेच्छान्तिं पित्तघ्नैश्च विरेचनैः ॥ ३ ॥

माहिषं दधि दुग्धं च माहिषं भस्मकापहम् ॥

असरुत्पित्तहरणं पोयसाज्यस्य भोजनम् ॥ ४ ॥

कोलास्थिमज्जाकल्कस्तु पीतो वाप्युदकेन वै ॥

अचिराद्विनिहंत्येष प्रयोगो भस्मकं नृणाम् ॥ ५ ॥

नारीक्षीरेण संपिष्टां पिवेदौदुर्बलत्वचम् ॥

ताभ्यां वा पायसं सिद्धं पिवेदत्यग्निसांतये ॥ ६ ॥

सिततंडुलसितैकरभीक्षीरेण पायसं सिद्धम् ॥

भुक्त्वा घृतेन पुरुषो द्वादशदिवसः नृभुक्षितो न भवेत् ॥ ७ ॥

विदारीस्वरसक्षीरे पचेदष्टगुणं घृतम् ॥

माहिषं जीवनीयेन कल्केनात्यग्निनाशनम् ॥ ८ ॥

इति भस्मकरोगचिकित्सा ॥

अथ अजीर्णम् ॥

पारदं च विषं गंधं टंकणं समभागतः ॥

मरिचस्याष्टभागाः स्युर्द्वौद्वौ शंखवराटयोः ॥ १ ॥

पक्वजंबीरजैर्गाढं रसैः सप्त विभावयेत् ॥

गुंजाद्वयमितो देयो रसो ह्यग्निकुमारकः ॥ २ ॥

समीरणसमुद्भूतमजीर्णं च विपूचिकाम् ॥

क्षणेन क्षपयत्येष कफरोगनिकृंतनः ॥ ३ ॥

इत्यग्निकुमारो रसः रसेन्द्रचिंतामणेः ॥

हंसाग्निटंकणमरीचकणामृतं चे-

ज्जंबीरनीरपीरमर्दितमर्कयामे ॥

सानंदभैरवगुटी त्रियवप्रमाणा

सर्वामयप्रशमनी विविधानुपानां ॥ ४ ॥

कर्पं सूतं द्विधा गंधं त्रिभागं भस्म तीक्ष्णंजम् ॥

त्रिभिः समं विषं योज्यं चित्रकद्रवभावितम् ॥ ५ ॥

द्विधात्रिकटुकं योज्यं लवंगैले तु सप्तमे ॥

जातीफलं जातिपत्रं चार्द्धभागमितं मतम् ॥ ६ ॥

तदर्द्धं पंचलवणं स्नुह्यकौ चापि तित्तिणी ॥

अपामार्गोश्वत्थ एषां लवणं च पलार्द्धकम् ॥ ७ ॥

टंकणं च यवक्षारं सर्जिका हिंगु जीरकम् ॥

हरीतकी सूततुल्या मर्दयेदम्लयोगतः ॥ ८ ॥

धूर्तवीजस्य भस्मानि सर्वसप्तमभागतः ॥

रसः पाशुपतो नाम प्रोक्तः प्रत्ययकारकः ॥ ९ ॥  
 गुंजामात्रा वटी कार्या सर्वाजीर्णविनाशिनी ॥  
 तालमूलीतक्रयोगादुदरामयनाशिनी ॥ १० ॥  
 मोक्षारसेनानिसारं ग्रहणीं तक्रसैधवैः ॥  
 शूले नागरकं शस्तं हिंगुसौवर्चलान्वितम् ॥ ११ ॥  
 अर्शःसु तक्रेण युता पिप्पली राजयक्ष्मणि ॥  
 वातरोगं निहंत्याशु गुंठी सौवर्चलान्विता ॥ १२ ॥  
 गुडूची शर्करायोगात्पित्तरोगविनाशिनी ॥  
 पिप्पली क्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगं निरुंतति ॥  
 अतः परतरं नास्ति धन्वंतरिमते स्थितम् ॥ १३ ॥  
 इति पाशुपताख्यो रसः धन्वंतरिमतात् ॥  
 द्रव्यं च विषं गंधं त्रिकटु त्रिफला समम् ॥  
 जातीफलं लवंगं च लवणानि च पंच वै ॥ १४ ॥  
 सर्वमेतत्कृतं चूर्णमम्लयोगेन सप्तधा ॥  
 भावयित्वा वटी कार्या गुंजार्धप्रमिता बुधैः ॥ १५ ॥  
 रसो ह्यादित्यसंज्ञोयमजीर्णक्षयकारकः ॥  
 भुक्तमात्रं पाचयति जठरानलदीपनः ॥ १६ ॥  
 इत्यादित्परसः रससिधोः ॥  
 सूतं गंधं विषं तुल्यं मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥  
 अश्वत्थार्चिचापामार्गक्षाराः क्षारौ च टंकणम् ॥ १७ ॥  
 जातीफलं लवंगं च त्रिकटु त्रिफलासमम् ॥  
 शंखक्षारं त्रिलवणं हिंमुजीरं द्विभागकम् ॥ १८ ॥  
 मर्दयेदम्लयोगेन गुंजामात्रा वटी शुभा ॥  
 पाचनी दीपनी सद्यो जीर्णशूलविसूचिकाः ॥ १९ ॥

हिकां गुल्मं च मोहं च नाशयेन्नात्र संशयः ॥

रसेन्द्रसंहितायाश्च नाम्ना ह्यग्निमुखो रसः ॥ २० ॥

इत्यग्निमुखो रसः ॥

शुद्धं सूतं गंधकं च पलमानं पृथक्पृथक् ॥

हरीतकी च द्विपला नागरस्त्रिपलः स्मृतः ॥ २१ ॥

कृष्णा च मरिचं तद्वर्तिसधूतं त्रिपलं मतम् ॥

चतुःपला च विजया मर्दयेन्निबुकद्रवैः ॥ २२ ॥

पुटानि सप्त देयानि घर्ममध्ये पुनःपुनः ॥

अजीर्णारिरयं प्रोक्तः सद्योदीपनपाचनः ॥ २३ ॥

भक्षयेद्विगुणं भक्ष्यं पाचयेद्रेचयत्यापि ॥

इत्यजीर्णारी रसेन्द्रचित्तमणेः ॥

शुंठीपारदगंधकामृतपटुश्रीपुष्पसट्टकणं

द्विद्विः शंखकपर्दकौ वसुगुणं कृष्णोषणं सद्रसात् ॥ २४ ॥

जंवीरस्य परिस्रुतं दृढतरं संमर्द्यमुन्याल्लवैः

सिद्धे बलमितोऽग्निदीप्तिकृदयं चंडाग्निनामा रसः ॥ २५ ॥

इति चंडाग्निरसः ॥

उद्गारशुद्धिरुत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः ॥

लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्य लक्षणम् ॥ २६ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यामजीर्णचिकित्सासमाप्ता ॥

अथ कृमिः ॥

ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगः श्वसेनं भ्रमः ॥

भक्तद्वेषोतिसारश्च संजातकृमिलक्षणम् ॥ १ ॥

रुग्विनिश्चयात् ॥

निखिला नयति विनाशं लिक्षासहिता दिनैर्यूकाः ॥ ११

इति विडंगादितैलम् ॥

रसेन्द्रेण समायुक्तो रसो धनूरपत्रजः ॥

तांबूलपत्रजो वापि लेपनं थौकनाशनम् ॥ १२ ॥

इति रसादिलेपः वृंदात् ॥ अथ रसः ॥

क्रमेण वृद्धं रसगंधकाजमोदाविडंगं विपमुंष्टिका च ॥

गलाशवीजं च विचूर्ण्यमस्य निष्कप्रमाणं मधुनावलीढं ॥

पिवेत्कपायं घनजं तदूर्ध्वं रसोयमुक्तः कृमिमुद्गराख्यः ॥

कृमीन्निहंति कृमिजांश्च रोगान्संदीपयत्यग्निमयं त्रिरात्रात्

रसरत्नप्रदीपात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां कृमिचिकित्सा नाम

चतुर्विंशस्तरंगः ॥ २३ ॥

पंचविंशस्तरंगः ॥

अथ पांडुः ॥

पांडुरः श्वातकासार्तः पीतत्वङ्मनखलोचनः ॥

बन्ध्याग्निसादश्वयधुसहितः पांडुरोगवान् ॥ १ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

फलत्रिकामृतावासातिकाभूर्निर्वानिवजः ॥

काशः क्षौद्रयुतो हन्यात्पांडुरोगं सकामलम् ॥ २ ॥

लोहपात्रे गृतं क्षीरं सप्ताहं पथ्यभोजिनः ॥

पिवेत्पांड्वामयी शोथी ग्रहणीदोषपीडितः ॥ ३ ॥

वृंदात् ॥

लोहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफलाकदुरोहिणी ॥

प्रलिखान्मधुसर्पिर्भ्यां कृमिनां भवेत् ॥ ४ ॥

इति सर्वसंग्रहात् ॥

रेचनं कामलार्तानां पृथग्वा कारयेद्भिषक् ॥

ततः प्रशमनोपायः कर्तव्यो बुद्धिपूर्वकम् ॥ ५ ॥

दन्तीकल्कं समगुडं शीतवारिपरिप्लुतम् ॥

बिरेचनं मुख्यतमं कामलाया विनाशकम् ॥ ६ ॥

अयोरजोव्योपविडंगचूर्णं

लिहेद्भरिद्रां त्रिफलान्वितां वा ॥

सशर्करां कामलिनां त्रिभंडी

हिता गंधाक्षी सगुडा च गुंठी ॥ ७ ॥

सदावीं त्रिफलाव्योपविडंगमयसो रजः ॥

मधुसर्पिर्युतं लिह्यात्पांडुरोगं सकामलाम् ॥ ८ ॥

त्रिफलाया गुडूच्या वा दाव्या निवस्य वा रसः ॥

प्रातःप्रातर्मधुयुतं कामलार्तः पिवेन्नरः ॥ ९ ॥

इति बृंदात् ॥

रसमामलकानां तु संशुद्धं यंत्रपीडितम् ॥

द्रोणं पचेत्तन्मृद्वग्नौ तत्र चेमानि दापयेत् ॥ १० ॥

चूर्णितं पिप्पलीप्रस्थं मधुकं द्विपलं तथा ॥

प्रस्थं गोस्तनिकायाश्च द्राक्षायाः कल्कपेपितम् ॥ ११ ॥

गृंगेरपलं पंच तुगा क्षीर्याः पलद्वयम् ॥

तुलार्द्धं शर्करायाश्च घनीभूतं समुद्धरेत् ॥ १२ ॥

मधुप्रस्थसमायुक्तं लेहयेत्पलमात्रकम् ॥

हलीमकं कामलां च पांडुत्वं चापकर्षति ॥

जलदोषमतीसारं नियच्छति न संशयः ॥ १३ ॥

इति आमलक्यावलेहः सारसंग्रहात् ॥

अथ रसः ॥

ऽयूपणत्रिफलामुस्तविडंगदंढनाः समाः ॥  
नवायोरजसो भागास्तचूर्णं मधुसर्पिषा ॥  
भक्षयेत्पांडुहृद्रोगकुष्ठार्शःकामलापहम् ॥ १४ ॥

इति नवायसं चूर्णं योगसारात् ॥

ऽयूपणं त्रिफला मुस्तं विडंगं चव्यचित्रकौ ॥  
दार्वी त्वङ् माक्षिको धातुर्यथिकं देवदारु च ॥ १५ ॥  
एषां द्विपलभागानां चूर्णं कृत्वा पृथग्पृथक् ॥  
मंडूरं द्विगुणं चूर्णाजीर्णमंजनसन्निभम् ॥ १६ ॥  
गोमूत्रेष्टगुणे पक्त्वा तस्मिंस्तत्प्रक्षिपेत्ततः ॥  
उदुंबरसमान्कुर्याद्वटकांस्तान्यथोचितान् ॥ १७ ॥  
उपभुंजीत तत्रेण सात्म्यं जीर्णं च भोजनम् ॥  
मंडूरवटका ह्येते प्राणदा पांडुरोगिणाम् ॥ १८ ॥

मंडूरवटकः योगसारात् ॥

धात्री लोहरजो व्योषं निशा क्षौद्राज्यशर्करा ॥  
लेहो निवारयत्याशु कामलामुद्धतामपि ॥ १९ ॥  
अंजनं कामलार्तानां द्रोणपुष्पीरसस्य तु ॥  
निशागैरिकधात्रीणां चूर्णं चोपरिमेलयेत् ॥ २० ॥  
दग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसं च गोमूत्रनिर्वापितसप्तवारम् ॥  
विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण कुंभाह्वयं पांडुगदं निहन्यात् ॥

इति वीरसिंहावलोकतः ॥

अतिशुद्धमयोभस्म मधुक्षौद्रयुतं लिहेत् ॥  
पांडुरोग<sup>१</sup> नाशाय कामलानां च सर्वशः ॥ २२ ॥

११५२



चंपकं चंदनं वारि पर्पटोश्चिरपद्मकम् ॥

मंजिष्ठातिविषा मोचा वासैर्द्रव्यवपिप्पली ॥ २३ ॥

केसरं धातकी पाठा मुस्ता गुंठी च विल्वजम् ॥

उत्पलं दाडिमीवीजं जंबूवीजं त्वंचामयम् ॥ २४ ॥

एला च चंदनं रक्तं मापचूर्णं रसांजनम् ॥

तालीसं च समांशानि शर्करा च चतुर्गुणा ॥ २५ ॥

हारिद्रिके पांडुरोगे प्रमेहे रक्तपित्तके ॥

कासे श्वासे च हिक्कायां मूत्ररुच्छे च दारुणे ॥ २६ ॥

इति चंपकादिचूर्णम् ॥

पांडुरोगे कामलायां यान्युक्तान्यौषधानि च ॥

तानि सर्वाणि योज्यानि रोगे चापि हलीमके ॥ २७ ॥

इति वृंदात् योगरत्नावल्याः ॥

यवगोधूमशालीनां मृदुजांगलजै रसैः ॥

मुद्गाढकीमसूराद्यैः प्रायो भोजनमिष्यते ॥ २८ ॥

अथ रसः ॥

पलानि चत्वारि रसस्य पंच

गंधस्य सत्त्वस्य गुडूचिकायाः ॥

व्योषस्य चूर्णस्य च तालमूल्याः

तशाल्मलस्येह पलत्रयं स्यात् ॥ २९ ॥

पृथक्पृथक्पद्मगनस्य चाष्टौ

लोहस्य सर्वं त्रिफलाजलेन ॥

घृष्टं चतुःपष्टिमितं तदर्धाः

स्युर्भावनार्थं मार्कवज्रद्रवस्य ॥ ३० ॥

शियूत्थनरिण च प्लोस्त्रयै

तथानलोत्था गृहकन्यकायाः ॥

आर्द्रद्रवस्येति रसोयमुक्तः

पांडुक्षयश्वासगदादिहंता ॥

क्षौद्रेण वा शर्करया घृतेन

कर्पार्यमेतस्य भजेत्प्रयत्नात् ॥ ३१ ॥

इति त्रैलोक्यनाथो रसः रसरत्नप्रदीपात्

इति श्रीयोगतरंगिण्यां पांडुकामलाकुंभकामलाचि-

कित्ता नाम पंचविंशस्तरंगः ॥ २५ ॥

षाड्विंशस्तरंगः ।

अथ रक्तपित्तम् ॥

क्षारकद्वलतीक्ष्णादेर्दग्धं पित्तं दहत्यसृक् ॥

तदूर्ध्वाधोविलैर्याति रक्तपित्तं तदुच्यते ॥ १ ॥

अधः प्रवृत्तं वमनैरूर्ध्वं च विरेचनैः ॥

जयेदंन्यतराद्यापि क्षीणस्य शमनैः पृथक् ॥ २ ॥

अतिप्रवृद्धदोषस्य पूर्वं लोहितपित्तिनः ॥

अक्षीणबलमांसाग्नेः कर्त्तव्यमपतर्पणम् ॥ ३ ॥

लंघितस्य ततो युक्त्या लघ्वन्नमवचारयेत् ॥

पाचनं तर्पणं लेहसर्पिषि विविधानि च ॥ ४ ॥

द्राक्षामधूककाश्मर्यसितायुक्तं विरेचनम् ॥

यष्टीमधूकसंयुक्तं सक्षौद्रं वमनं हितम् ॥ ५ ॥

पयांसि शीतानि रसाश्च जांगलाः

चान्यान्यपि स्युः किलपित्तहानि ॥ ६ ॥

इति वृंदात् ॥

पक्वोदुंबरकाश्मर्यः पथ्या खर्जूरगोस्तनी ॥

मधुना हन्ति संलीढा रक्तपित्तं न संशयः ॥ ७ ॥

दुर्वासोत्पलार्कजल्कमंजिष्ठा सैलवालुका ॥

मूर्वा लोध्रमुशीरं च मुस्ता चंदनपद्मकौ ॥ ८ ॥

द्राक्षामधुकपथ्या च काश्मीरं चंदनं सितम् ॥

एतैः पिष्टैः कर्पमात्रैर्वृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ ९ ॥

अजाक्षीरं तंदुलांबु पृथग्दत्वा चतुर्गुणम् ॥

तत्पानं वमतां रक्तं नावनं नासिकागते ॥ १० ॥

कर्णाभ्यां यस्य गच्छेत्तु तस्य कर्णौ प्रपूरयेत् ॥

चक्षुर्गते च रक्ते च पूरयेत्तेन चक्षुषी ॥ ११ ॥

मेढ्रे पायुगते वापि सर्वत्रैव प्रयोजयेत् ॥

प्रवृत्तं रोमकूपेभ्यो अभ्यंगेन जयेद्भुवम् ॥ १२ ॥

इति दूर्वाद्यं घृतं वृंदात् ॥

तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले ॥

तेन पादावशेषेण पाचयेदाढकं भिषक् ॥ १३ ॥

चूर्णानामभयानां च खंडाच्छतपलं तथा ॥

शीतीभूते निदिध्यात्तु क्षौद्रस्याष्टौ पलानि च ॥ १४ ॥

वंशोद्भवायाश्चत्वारि पिप्पल्या द्विपलं तथा ॥

चातुर्जातपलं त्वेकं चूर्णितं तत्र दापयेत् ॥ १५ ॥

रक्तपित्तं निहंत्याशु कासं श्वासं तथा क्षयम् ॥

विद्रधि जठरं गुल्मं तृष्णाहृद्गोर्षीनसान् ॥

पलादं भोजनं चास्य यथेष्टं तत्र भोजनम् ॥ १६ ॥

इति वासाहरीतकी योगरत्नावलीतः ॥

चंदनं नलदं लोध्रमुशीरं पद्मकेसरम् ॥

नागपुष्पं च विल्वं च भद्रमुस्तं सशर्करम् ॥ १७ ॥

ह्रीवेरं चैव पाठा च कुटजोत्पलमेव च ॥

शृंगवेरं सातिविषा धातकी सरसांजना ॥ १८ ॥

आम्रास्थि जंबूसारास्थि तथा मोचरसोपि च ॥

नीलोत्पलं समंगा च सूक्ष्मैलादाडिमत्वचः ॥ १९ ॥

चतुर्विंशतिरेतानि समभागानि कारयेत् ॥

तंडुलोदकसंयुक्तं मधुना सह योजयेत् ॥ २० ॥

योगं लोहितपित्तानामर्शासां ज्वरिणां तथा ॥

मूच्छार्मदोपसृष्टानां तृष्णात्तानां प्रदापयेत् ॥ २१ ॥

अतीसारं तथा छर्दिं स्त्रीणां चापि रजोग्रहम् ॥

प्रच्युतानां च गर्भाणां स्थापनं परमिष्यते ॥ २२ ॥

अश्विनोः संमतो योगो रक्तपित्तनिवर्हणः ॥ २३ ॥

इति चंदनाद्यं चूर्णम् ॥

कूष्मांडकात्पलशतं सुस्विन्नं निष्कुलीकृतम् ॥

पचेत्तप्ते घृते प्रस्ये पात्रे ताम्रमये दृढे ॥ २४ ॥

यदा मधुनिभानि स्युस्तदा खंडशतं न्यसेत् ॥

पिप्पलीशृंगवेराभ्यां द्वे पले जीरकस्य च ॥ २५ ॥

त्वगेलापत्रमरिचधान्यकानां पलाईकम् ॥

न्यसेच्चूर्णीकृतं तत्र दार्व्यां संधट्टयेत्ततः ॥ २६ ॥

तत्पक्वं स्थापयेद्भांडे दत्त्वा क्षौद्रं घृतार्धकम् ॥

तद्यथाग्निबलं खादेद्रक्तपित्तक्षतक्षयी ॥ २७ ॥

कासश्वासतमश्छर्दिंतृष्णाज्वरनिपीडितः ॥

वृष्यं पुनर्नवकरं बलवर्णप्रसाधनम् ॥ २८ ॥

उरःसंधानकरणं वृहणं स्वरबोधनम् ॥

अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं कूष्मांडकरसाधनम् ॥ २९ ॥

इति कूष्मांडकम् ॥

मध्वाटरूपकरसौ यदि तुल्यभागौ

कृत्वा नरः पिवति पुण्यतरः प्रभाते ॥

तद्रक्तपित्तमपि दारुणमप्यवश्य-

माशु प्रशाम्यति जलैरिव वह्निपुंजः ॥ ३० ॥

इति राजमार्तंडात् ॥

तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले ॥

तेन पादावशेषेण पाचयेदाढकं भिषक् ॥ ३१ ॥

चूर्णानामभयानां तु खंडाच्छतपलं तथा ॥

द्वे पले पिप्पलीचूर्णात्सिद्धे शीते च माक्षिकात् ॥ ३२ ॥

कुडवं पलमानं तु चातुर्जातं सुचूर्णितम् ॥

क्षिप्त्वावलोड्य तं खादेद्रक्तपित्ती क्षयक्षयी ॥

कासश्वासगृहीतश्च यक्ष्मवांश्च विशेषतः ॥ ३३ ॥

इति वासाखंडः ।

शतावरीमुंडितिकावलामृता-

फलत्वचः पुष्करमूलभांगी ॥

वृषो वृहत्यौ खदिरं च मूसली

पृथक्पृथक् पंचपलानिमानि ॥ ३४ ॥

पक्वं जले द्रोणमितेष्टमांशं

यावद्भवेच्छेषमथैव पूतम् ॥

विमूर्छितस्यात्र निधाय धीमान्  
 पलानि ज द्वादश माक्षिकस्य ॥ ३५ ॥  
 तथा सुचूर्णस्य च लोहजस्य  
 विद्यद्वितं खंडधृतं च तुल्यम् ॥  
 देयं पलं षोडशकं विधिज्ञै-  
 र्विपाचयेल्लोहमये च पात्रे ॥ ३६ ॥  
 गुडेन तुल्यं च यदा भवेत्तदा  
 तुगा विडंगं मगधा च शुंठी ॥  
 द्वे जीरके कर्कटकं फलानां  
 त्रिकं च धान्यं मरिचं सकेसरम् ॥ ३७ ॥  
 पलेन मात्रां विदधीत तत्पृथक्  
 सुघट्टितं चूर्णमिव धृते च ॥  
 स्निग्धे कटाहे प्रणिधाय युञ्ज्या-  
 त्कर्पप्रमाणं विदधीत लोहम् ॥ ३८ ॥  
 प्रभातकाले च सदुग्धपानं  
 गुरुणि चान्नानि च भोजनानि ॥  
 रक्तं सपित्तं सहसा निहन्ति  
 रक्तप्रवाहं च सरक्तशूलम् ॥ ३९ ॥  
 रक्तातिसारं रुधिरप्रमेहं  
 तथैव वस्तौ विहितं नराणाम् ॥  
 भगंदरार्शःश्वयथून्निहन्ति  
 तथाम्लपित्तं किल राजरोगम् ॥ ४० ॥  
 विशेषतः कुष्ठरुजश्च गुल्मान्  
 बलप्रदं वृष्यतमं प्रदिष्टम् ॥ ४१ ॥

इति खंडस्वाद्यं लोहम् ॥

शुद्धपारदवल्लिप्रवालकं

हेममाक्षिकभुजंगरंगकम् ॥

मारितं सकलमेतदुत्तमं

भावयेत्पृथगतोद्वैस्त्रिंशः ॥ ४२ ॥

चंदनस्य कमलस्य मालती कोरकस्य वृषपक्षैवस्य च ॥

धान्यवारणबुसंशतावरी शाल्मलीवटजटामृतस्य च ॥

रक्तपित्तकुलकंडनाभिधो

जायते रसवरोस्त्रपित्तिनाम् ॥

प्राणदो मधुवृषद्रवैरयं

सेवितस्तु वसुंरुण्णलामितः ॥ ४४ ॥

नास्त्यनेन सममत्र भूतले

भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥ ४५ ॥

रक्तपित्तकुलकंडनाभिधो रसः रसेंद्रचिंतामणेः ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां रक्तपित्तचिकित्सा नाम

पट्विंशस्तरंगः ॥

सप्तविंशस्तरंगः ।

अथ क्षयः ॥

श्लेष्माधिक्याद्ववायाद्यैः पीडितो यः प्रशुण्यति ॥

कासश्वासादिदतो रक्तं वमेच्छुक्लेक्षणो ज्वरी ॥ १ ॥

अग्निमांद्यतृपायुक्तो रिरंसुर्मासलोलुपः ॥

विस्वरश्छर्दिमान्दीनः स ज्ञेयः क्षयपीडितः ॥ २ ॥

शालिपष्टिकगोधूमयवमुद्गादयः शुभाः ॥

मद्यानि जांगलाः पक्षिमृगाः शस्ता विंशुष्यतः ॥ ३ ॥

सपिप्पलीकं सयवं सकुलंत्यं सनागरम् ॥

दाडिमामलकोपेतं स्निग्धमाजं रसं पिवेत् ॥ ४ ॥

तेन पट् विनिवर्तते विकाराः पीनसादयः ॥

द्रव्यतो द्विगुणं मांसं सर्वतोष्टगुणं जलम् ॥

पादस्थं संस्कृतं चाज्ये पडंगो यूष उच्यते ॥ ५ ॥

इति सुश्रुतात् ॥

राम्नाकर्पूरतालीसभेकपर्णी शिलाजतु ॥

त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगदहनाः समाः ॥ ६ ॥

चतुर्दशायसो भागास्तचूर्णं मधुसर्पिषा ॥

लीढं कासं ज्वरं श्वासं राजयक्ष्माणमेव च ॥

वलवर्णाग्निपुष्टीनां वर्धनं दोषनाशनम् ॥ ७ ॥

इति चतुर्दशांगलोहम् ॥

द्विपंचमूलीजलसिद्धमाज्यं वासाघृतं वाप्यथ पट्पैलं वा

हितं पयश्छागलमव्यवाये प्रयुज्यते नागं वलाभिधानम्

गुंजी चामलकी फलत्रिकवलाछिन्नाविदारी सटी

जीवंती दशमूलचंदनधनैर्नीलोत्पलैलावृषैः ॥

मृदीकाष्टकवर्गपौष्करयुतैः सार्द्धं पृथक्पालिकै-

रब्द्रोणेन शतानि पंच विपचेद्वात्रीफलानामतः ॥ ९

उद्धृत्यामलकानि तैलघृतयोः पङ्क्तिश्च पङ्क्तिः पलै-

र्भृष्टान्यर्द्धतुलां निधाय विधिवन्मीनांडिकायाः पचेत्

शति पणमधुनः पलानि कुडयो वांश्याश्चतुर्जाततो

मुंष्टिर्मागधिकापलद्वयमयं प्राशः स्मृतश्चावनः ॥ १०



न शोषः साफल्यं व्रजति वपुषि क्षीयमाणेपि जंतो-  
 र्न मूर्छा न छर्दिस्तृडपि च न श्वासकासादायश्च ॥  
 न चालक्ष्मीर्विघ्नं क्वचिदपि च न व्यापदः संभवन्ति  
 प्रयोगादेतस्मान्मनसि च धियो विश्रति भ्रान्तिमंतः  
 इति च्यवनप्राशः चिकित्सातः ॥

वातकस्य रसप्रस्थो माक्षिकं सितशर्करा ॥

पिप्पलीद्विपलं चैव दत्त्वा मृद्वग्निना पचेत् ॥ १२ ॥

लेहीभूते ततः पश्चादद्यात् क्षौद्रं पलायकम् ॥

दत्त्वावतारयेद्वैद्यो मात्रया लेहमुत्तमम् ॥ १३ ॥

निहन्ति राजयक्ष्माणं दुर्न्नामानि बहून्यपि ॥

पार्श्वगूलं च ङ्छूलं ज्वरं चाशु व्यपोहति ॥ १४ ॥

इति वासालेहः योगशतनात् ॥

फलत्रिककाथविशुद्धमादौ

शुद्धं गुडूच्या दशमूलशुद्धम् ॥

स्थिरादिकाकोलियुगादिसिद्धं

शिलाजतु स्यात्क्षयिषु प्रसिद्धम् ॥ १५ ॥

इति चरकात् ॥

हेमाद्याः सूर्यसंतापाद्भवन्ति गिरिधातवः ॥

जलाभं मृदु रुष्णाभं तद्वदन्ति शिलाजतुम् ॥ १६ ॥

तार्क्षिपत्रं मरिचं नागरं पिप्पली शुभाः ॥

यथोत्तरं भागवृद्ध्या त्वगेले चार्द्धभागिके ॥ १७ ॥

पिप्पल्यष्टगुणा चात्र प्रदेयासितशर्करा ॥

कासश्वासारुचिहरं तच्चूर्णं दीपनं परम् ॥

हृत्पाण्डुरहणीदोषहृद्दोषज्वरापहम् ॥ १८ ॥

इति तालीसाद्यं चूर्णम् ॥

मृदीकायास्तुलार्धं तु द्विद्रोणेऽपां विपाचयेत् ॥

चतुर्थशोषे तस्मिंस्तु पूने शीते प्रदापयेत् ॥ १९ ॥

गुडस्य द्वितुलां दत्त्वा तत्सर्वं घृतभाजने ॥

विडंगं फलिनी कृष्णा त्वगेला पत्रकेसरम् ॥ २० ॥

मरिचं च भिषक्चूर्णं सम्यक्कृत्वा विचक्षणः ॥

क्षिपेच्च पलिकैर्भागैः स्थापयेच्च कियद्दिनम् ॥ २१ ॥

ततो यथावलं पीत्वा कासश्वासगलामयान् ॥

हन्ति यक्षमाणमत्युग्रमुरःसंधानकारकम् ॥ २२ ॥

चतुर्थभागं द्राक्षाया धातुकीमत्र केचन ॥

प्रयच्छन्ति ततो वीर्यमेतस्योच्चैः प्रजायते ॥ २३ ॥

इति मृदीकासवः ॥

त्रिकटुत्रिफलाभिश्च जातीफललवंगकैः ॥

नवभागोन्मितैरैतैः समं तीक्ष्णं मृतं भवेत् ॥ २४ ॥

संचूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्नित्यमग्निं च मानवः ॥

कासं श्वासं क्षयं मेहं पांडुरोगं भगंदरम् ॥

ज्वरं मंदानलं शोथं संमोहं ग्रहणीं जयेत् ॥ २५ ॥

इति बृहन्नवायसचूर्णम् ॥

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वंशलोचनः ॥

पिप्पली स्याच्चतुःकर्पा स्यादेला च द्विकार्पिकी ॥ २६ ॥

एककर्पा च त्वक्कार्या चूर्णयेत्सर्वमेकतः ॥

सितोपलादिकं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् ॥ २७ ॥

कासश्वासक्षयहरं हस्तपादांगदाहजित् ॥

मंदाग्निसुप्तजिह्वत्वं पार्श्वगूलमरोचकम् ॥

ज्वरमूर्ध्वगतं रक्तपित्तमाशु व्यपोहति ॥ २८ ॥

इति सितोपलाद्यं चूर्णम् ॥

पिप्पलीलोध्रमरिचपाठाघात्र्येलवालुकैः ॥

चव्यचित्रकजंतुघ्नक्रमुकोशीरचंदनैः ॥ २९ ॥

मुस्ताप्रियंगुलंबलीहरिद्रामिसिप्लवैः ॥

पत्रत्वक्कुष्ठतगरनागकेतरसंयुतैः ॥ ३० ॥

भागैः स्यादूर्ध्वपलिकैर्द्राक्षां पष्टिपलं क्षिपेत् ॥

पलानि शीत धातुकष्या गुडस्य च शतत्रयम् ॥ ३१ ॥

तौषाणमणद्वये सिद्धं भवत्येतत्सुखावहम् ॥

ग्रहणीपांडुरोगार्शःकार्श्यगुल्मोदरापहः ॥

पिप्पल्यादिररिष्टोऽयं क्षयक्षयकरः परः ॥ ३२ ॥

इति पिप्पल्याद्यरिष्टः ॥

छागमांसतुलः सम्यक्पाचयेदर्मणोऽभस्ति ॥

पादशोषेण तेनैव सर्पिःप्रस्थं विपाचयेत् ॥ ३३ ॥

ऋद्धिर्बुद्धिश्च मेदे द्वे तथा जीवककर्पभौ ॥

काकोलीक्षीरकाकोलीकल्कैरेभिः पलोन्मितैः ॥ ३४ ॥

सम्पक्सिद्धेऽवतार्याथ शीते तस्मिन्प्रदापयेत् ॥

शर्करायाः पलान्यष्टौ मधुनः कुड्यं क्षिपेत् ॥ ३५ ॥

पलंपलं पिबेत्प्रातर्यक्ष्माणं हन्ति दुस्तरम् ॥

वल्पं स्थौल्यकरं वृष्यं दीपनं मंदबद्धिजित् ॥ ३६ ॥

इति छागलाद्यं गृतं हारीतान् ॥

चंदनांशु नखं चाप्यं यष्टीशैलेयपद्मम् ॥

मंजिष्ठा संरलं दारु सट्थेला पद्मकेसरम् ॥ ३७ ॥

पत्रं बिल्वमुशीरं च कंकोलं च नन्तांबुदम् ॥

हरिद्रे सारिवे तिका लवंगागुरुकुंकुमम् ॥ ३८ ॥

त्वग्ग्रेणुनलिका चैभिस्तैलं मस्तु चतुर्गुणम् ॥

लाक्षारससमं सिद्धं ग्रहघ्नं वलवर्णकृत् ॥ ३९ ॥

अपस्मारज्वरोन्मादकृत्यालक्ष्मीविनाशनम् ॥

आयुःपुष्टिकरं चैव वशीकरणमुत्तमम् ॥

विशेषात्क्षयरोगघ्नं रक्तपित्तहरं परम् ॥ ४० ॥

इति चंदनाद्यं तैलम् ॥

मलपतं बलं पुंसां शुक्रायत्तं तु जीवनम् ॥

तस्माद्यत्नेन संरक्षेद्यक्षिणो मलरेतसी ॥ ४१ ॥

हरीतकीशतं युंज्याद्यवानामाढकं तथा ॥

पलानि दशमूलस्य विंशतिश्च नियोजयेत् ॥ ४२ ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलमपामार्गः सटी तथा ॥

कपिकच्छुः शंखपुष्पी भांगी च गजपिप्पली ॥ ४३ ॥

वला पुष्करमूलं च पृथग्द्विपलमात्रया ॥

पचेत्पंचाढके तोये यवैः स्विन्नैः शृतं नयेत् ॥ ४४ ॥

तद्याभयाशतं दद्यात्काथे तत्र विचक्षणः ॥

सर्पिस्तैलाष्टपलकं क्षिपेद्दुडतुलां तथा ॥ ४५ ॥

पक्का लेहत्वमानीय सिद्धे दत्त्वा पृथक्पृथक् ॥

तत्क्षौद्रं पिप्पलीचूर्णं दद्यात्कुडवमात्रया ॥ ४६ ॥

हरीतकीद्वयं स्वादेत्तेन लेहेन नित्यशः ॥

क्षयं कासं ज्वरं श्वासं हिकाशोरुचिपीनसान् ॥ ४७ ॥

ग्रहणीं नाशयत्येष वलीपलितनाशनः ॥

वलवर्णकरः पुंसामवलेहो रसायनः ॥

विहितोगस्त्यमुनिना सर्वरोगप्रणाशनः ॥ ४८ ॥

इत्यगस्त्यहरीतक्यवलेहः शार्ङ्गधरात् ॥ अथ रसः ॥

पारदं शोधितं गंधमध्रकं च समं मतम् ॥

तदर्थं दरदं दद्यात्तदधा च मनःशिला ॥ ४९ ॥

सर्वाङ्गं मृतलोहं च खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥

द्विःसप्त भावना देयाः शतावर्या रसेन च ॥ ५० ॥

ततः शुष्को भवत्येष कुमुदेश्वरसंज्ञकः ॥

सितया मरिचेनाथ गुंजादित्रिप्रमाणतः ॥ ५१ ॥

भक्षयेत्प्रानरुत्थाय पूजयित्वेष्टदेवताम् ॥

षड्माणमुग्रं हृत्येव वातपित्तकफामयान् ॥ ५२ ॥

ज्वरादीनखिलान्नोगान्यथा दैत्या अनार्दनः ॥

सतताभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनः ॥ ५३ ॥

इति कुमुदेश्वररसः रसार्णवात् ॥

भस्मीभूतसुवर्णतारविनेरुत्सूताधसत्त्वैः क्रमा-

त्संपृद्धैस्त्रितयत्रयकिमिहरोन्भोदैर्युतः कट्फलैः ॥

निर्गुडीवशमूलवह्निरजनीव्योपार्द्रकैर्भाषितो

गोलीकृत्यविशोषितो निगदितः पंचामृताख्यो रसः ॥ ५४ ॥

नानेन सदृशः कोपि रसोस्ति भुवनत्रये ॥

निहन्ति सकलान्नोगान्भवरोगानिवाच्युतः ॥ ५५ ॥

सर्वरोगहरः सूतस्तत्तद्रोगानुपानतः ॥

अयं पंचामृतो नृणां त्रिदशानामिषामृतम् ॥ ५६ ॥

क्षयरोगं निहंत्याशु पंचकासांश्च दारुणान् ॥  
विद्राधि जाठरं गुल्मं हृद्रोगं च विनाशयेत् ॥ ५७ ॥

इति पंचामृतो रसः सारसंग्रहात् ॥

पृथग्द्वौ हाटकं चंद्रस्त्रयो वंगाहिकांतयोः ॥  
चत्वारि सूतमभ्रंच प्रवालं मौक्तिकं पौषिः ॥ ५८ ॥  
भावना गव्यदुग्धेक्षुर्वासाश्रीकदली निशा ॥  
शतपत्रं श्वेतकंजं मालत्याः कुसुमैस्तथा ॥ ५९ ॥  
पश्चान्मृगमदाभाव्यं सुसिद्धो रसराड् भवेत् ॥  
कुसुमाकरविरव्यातो वसंतपदपूर्वकः ॥ ६० ॥  
बलद्वयमिदं चास्य सिताज्यमधुना सह ॥  
बलीपलितहन्मेध्यं कामदं सुखवर्धनम् ॥ ६१ ॥  
मेहघ्नं पुष्टिदं कांतं परं सौख्यं रसायनम् ॥  
सिताचंदनसंयुक्तमम्लपित्तादिरोगनुत् ॥ ६२ ॥

इति वसंतकुसुमाकरो रसः ॥

स्वर्णं मुक्तादरदमरिचं भागवृद्ध्याप्रयोज्यम्  
खर्पर्यष्टौ प्रथमनवनीतेन निब्वंशुना च ॥  
यावत्स्नेहो व्रजति विलयं मर्दयेत्तावदेव  
गुंजामात्रं मधुचपलया सर्वरोगे वसंतः ॥ ६३ ॥

इति मालतीवसंतः ॥

रसं वज्रं हेम तारं नागं लोहं च ताम्रकम् ॥  
तुल्यांशं मारितं योज्यं मुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥ ६४ ॥  
राजावर्त्तं च वैक्रांतं गोमेदं पुष्परगकम् ॥

१ भागौ । २ सुवर्णं ३ चांदि । ४ सीसो । ५ सममित्यपिपाटः ६ मु-  
गा । ७ हीरा । ८ बेलगिरी । ९ चमेलीपुष्पैः । १० स्वर्णमाक्षिक ।  
१० राजावर्त्तं ।

शंखं च तुल्यतुल्यांशं समाहं चित्रकद्रवैः ॥ ६५ ॥  
 मर्दयित्वा विचूर्णयथ तेनापूर्य वराटकान् ॥  
 टंकणं रविदुग्धेन पिष्ट्वा तन्मुद्रणं चरेत् ॥ ६६ ॥  
 मृन्नाण्डे तान्मुसंयंत्र्य सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥  
 आदाय चूर्णयेत्सम्यक्निर्गुण्ड्या सप्त भावनाः ॥ ६७ ॥  
 आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः ॥  
 द्रवैर्भाष्यं ततः शुष्कं देयं गुंजाचतुष्टयम् ॥ ६८ ॥  
 क्षयरोगं निहंत्याशु सत्यं शिव इवांधकम् ॥  
 योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सधृतैर्मरिचैश्च वा ॥  
 पोटलीरत्नगर्भोयं सर्वरोगहरो मतः ॥ ६९ ॥

इति रत्नगर्भपोटलीरसः ॥

कृष्णाप्रस्थं पचेदाढकपयसि घृतस्यांजलीखंडपात्रं ॥  
 दत्वालेहोपमेस्मिन्सुरकुंतुमचतुर्जातविश्वोपणेंदून् ॥  
 ग्रंथश्रीखंडपष्टीमधुघुसृणयुतं जातिका पंचकर्प ॥  
 प्रत्येकं चूर्णयित्वा मधुकुडवयुतः स्याच्च कृष्णावलेहः ॥  
 आदौ मंदाग्रिकाश्च हरति स च शिशुस्त्रीजरन्मानुषेषु  
 प्रायोवृष्योक्षिपथ्योविपुलवलकरो दीपनः पाचनश्च ॥  
 कासश्वासप्रमेहक्षयरुगतितृपाकामलापांडुकंडु-  
 शिंहाज्जीर्णं ज्वरं चानिलकफविकृतीरम्लपित्तं च हन्यात्  
 इति खंडपिप्पल्यवलेहः ॥

रसभस्म त्रयो भागाः स्वर्णभस्मैकभागिकम् ॥  
 मृतताम्रस्यैकभागः शिलागंधकतालकम् ॥ ७२ ॥  
 तथा भागद्वयं शुद्धं मेलयित्वा विचूर्णयेत् ॥

वराटी पूरयेत्तेन अजाक्षीरेण टंकणम् ॥ ७३ ॥  
 पिष्ट्वा च तन्मुखं रुद्ध्वा मृद्भाण्डे तान्निधरोयेत् ॥  
 शुष्कं गजपुटे त्यक्त्वा चूर्णयेत्स्वांगशीतलम् ॥ ७४ ॥  
 रसो राजमृगांकोयं पंचगुंजः क्षयापहः ॥  
 दशापिप्पलिकाक्षौद्रैर्मरिचैकोनविंशतिः ॥  
 सघृतं दापयेत्पथ्यं राजरोगप्रज्ञांतये ॥ ७५ ॥

इति राजमृगांकः सारसंग्रहात् ॥  
 रसेनतुल्यं केनकंतयोस्तुसाम्येन युंज्यान्नवमौक्तिकानि  
 रसप्रमाणो वलिरंग्रिभागः क्षीरस्य सर्वतुपवारिणा तु ॥  
 संमर्द्य घस्रं सुविधाय गोलं दिनं पचेत्तं लवणेन पूर्णं ॥  
 भाण्डे मृगांकोयमतिप्रगल्भक्षयाग्निमांद्यग्रहणीगदेपु ॥ ७७  
 साज्योपणाभिर्मधुपिप्पलीभि-  
 र्वल्लोस्य देयो न ततोधिकस्तु ॥  
 पथ्यं हितं शीतलमेव योज्यं  
 त्याज्यं सदा पित्तकरं विदाहि ॥ ७८ ॥  
 इति मृगांकः रसरत्नप्रदीपात् ॥

रसः कनकभागिकः कनकमाक्षिकस्तालकः ॥  
 शिलारसकगंधका रससमाः सतुत्था इमे ॥  
 वेमर्द्य पयसा रवेः सकलमेतदस्योपरि ॥  
 द्वैः प्रतिदिनं पृथक्तदिति भावयेदुद्धिमान् ॥ ७९ ॥  
 जंघामुनिकंलिप्रियादहनभृंगवासोद्भवै-  
 र्विभाव्य च रसैस्ततः सुदृढगोलकं स्वेदयेत् ॥  
 मृगांकवदथार्द्रकद्रवभरेण तं सप्तधा ॥



विमर्द्य च कटुत्रयांबुभिरयं क्षयस्यांतरुत् ॥ ८० ॥  
 रसः कनकसुंदरो भवति सन्निपातेऽप्ययं  
 सहार्द्रकरसैस्तथा पवनगुल्मशूलादिहृत् ॥  
 सविश्वघृतयोजितः सकलमत्र पथ्यं हितं  
 मृगांकवदथापरं किमपि नैव योज्यं क्वचित् ॥ ८१ ॥

इति कनकसुंदरो रसः

शोकः स्त्रियः क्रोधमसूयनं च ॥  
 त्यजेदुदारान्विषयान्भजेच्च ॥  
 गुरुं द्विजातित्रिदशांश्च पूजये-  
 त्कथाश्च पुण्याः शृणुयाद्विजेभ्यः ॥ ८२ ॥  
 इति श्रीयोगतरंगिण्या क्षयचिकित्सानाम्

सप्तविंशस्तरंगः ॥

अष्टाविंशस्तरंगः

अथोरक्षतचिकित्सा ॥

कर्माभिर्वहुभिः क्रूरैर्भृशमभ्याहतस्य च ॥  
 विक्षते वक्षसि व्याधिर्वलवान्समुदीर्यते ॥ १ ॥  
 उरोमंथी क्षती लाजान्नयस्ता मधुसंयुतान् ॥  
 सद्य एष पिवेज्जीर्णे पयसाद्यात्सर्करम् ॥ २ ॥  
 एलापत्रत्वचो द्राक्षाः पिप्पल्यद्वैपलं तथा ॥  
 सितामधुकखजूरमृद्धीकाश्च पलोन्मिताः ॥ ३ ॥  
 संचूर्ण्य मधुना युक्तां गुटिकां संप्रकल्पयेत् ॥  
 अक्षमात्रांततश्चैकां भक्षयेच्च दिनेदिने ॥ ४ ॥  
 कासं श्वासं ज्वरं ह्रिक्कां छर्दिं मूर्छां मदं भ्रमम् ॥  
 रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां पार्श्वशूलमरोचकम् ॥ ५ ॥  
 शोषह्नीहामवातांश्च स्वरभेदं क्षयक्षयम् ॥

गुटिका तर्पणी वृष्या रक्तपित्तं च नाशयेत् ॥ ६ ॥

इत्येलाद्या गुटिका ॥

द्राक्षायाः संमितं प्रस्थं मधुकस्य पलायकम् ॥

पचेत्तोयाढके सिद्धे पादशेषेण तेन तु ॥ ७ ॥

पलिके मधुकद्राक्षे पिष्टे कृष्णापलद्वयम् ॥

प्रदाय सर्पिषः प्रस्थं पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ॥ ८ ॥

सिद्धशीते पलान्यष्टौ शर्करायाः प्रदापयेत् ॥

एतद्राक्षाघृतं सिद्धं क्षीणक्षतहितं परम् ॥ ९ ॥

इति द्राक्षाद्यं घृतं ॥

अथ कासः ॥

प्राणो ह्युदानमन्वेत्य यदोर्ध्वमुपसर्पति ॥

तदा संजायते कासः कंठहन्नाभिकर्षणः ॥ १० ॥

पंचमूलारुतः काथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ॥

रसान्नमश्नतो नित्यं वातकासमुदस्यति ॥ ११ ॥

भांगी द्राक्षा सटी गूंगी पिप्पली विश्वभेषजम् ॥

गुडतैलयुतो लेहो हितो मारुतकासिनाम् ॥ १२ ॥

वलाद्विवृहतीवासाद्राक्षाभिः कथितं जलम् ॥

पित्तकासापहं योज्यं शर्करामधुसंयुतम् ॥ १३ ॥

पुष्करं कट्फलं भांगीविश्वपिप्पलिसाधितम् ॥

पिवेत्काथं कफोद्रेके श्वासे कासे च रुद्धगृहे ॥ १४ ॥

प्रस्थं विभीतिकानामस्थिन् विहाय साधयेद्देजामूत्रे ॥

लेहवद्वलेहोर्य मधुना सहितोतिकासहरः ॥ १५ ॥

इति वृंदात् ॥

मरिचं कर्पमात्रं स्यात्पिप्पली कर्पसंमिता ॥

अर्द्धकपो यवक्षारः कर्पयुग्मं च दाडिमम् ॥ १६ ॥

एतच्चूर्णीकृतं युञ्ज्यादष्टकर्पयुंतेन हि ॥

शाणप्रमाणां गुटिकां कृत्वा वक्त्रे विधारयेत् ॥

अस्याः प्रभावात्सर्वेपि कासा यांत्येव संक्षयम् ॥ १७ ॥

इति मरिचादिगुटिका शार्ङ्गधरात् ॥

रसगंधकणापथ्याकलिद्रुफलवासकाः ॥

भांर्गी चेति क्रमाद्द्वमेतद्वबुलजैर्द्रवैः ॥ १८ ॥

पिष्टं विंशतिवारं तत्कुर्यात्क्षौद्रेण गोलकान् ॥

कर्पप्रमाणेन तस्य तमेकं प्रातरुत्थितः ॥ १९ ॥

अद्यान्मातत्रयं क्षुद्राकाथं दशकणायुतम् ॥

पिवेत्तदनुकासाच्च श्वासाच्च परिमुच्यते ॥ २० ॥

इति भागोत्तरो वटकः ॥

भागो रसस्य गंधस्य द्वावेको लोहभस्मनः ॥

एतद्घृष्टं द्रवीभूतं मूढग्रौ कदलीदले ॥ २१ ॥

पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत् ॥

ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिर्मर्दयेत्ततश्चा पृथक् ॥ २२ ॥

भांर्गीमुंडीमुनिवंराजयांनिर्गुडिकाद्रवैः ॥

व्योपवासककन्यार्द्रद्रवैः शुष्कं पुटेर्लघु ॥ २३ ॥

आगंधं स्वर्परे नाम्ना पर्पटीति रसो भवेत् ॥

सर्वरोगहरः स्वैः स्वैरनुपानैर्द्विमापिकः ॥ २४ ॥

तांबूलीपत्रसहितः कासश्वासहरः परः ॥

सकणः स्वरंसाकाथोऽनुपानं वा सगोजर्लम् ॥ २५ ॥

इति पर्पटरिसः रसरत्नप्रदीपात्

पारदं गंधकं शुद्धं मृतं लोहं च टंकणम् ॥  
 रास्त्राविडंगं त्रिफला देवदारु कटुत्रयम् ॥ २६ ॥  
 अमृता पद्मकं क्षौद्रं विपं तुल्यानि चूर्णयेत् ॥  
 त्रिगुंजः सर्वकासघ्नो ज्वरारोचकमेहनुत् ॥ २७ ॥  
 इति पारदादिचूर्णं योगरत्नावलीतः ॥

तुल्या लवंगमरिचाक्षफलत्वचः स्युः ॥  
 सर्वैः समश्च गदितः खदिरस्य सारः ॥  
 वच्चूलवृक्षजकपाययुजां चतुर्णां ॥  
 कासं निहंति गुटिका घटिकाष्टकांतेः ॥ २८ ॥  
 इति कासघ्नी गुटिका लोहिलवराजात् ॥  
 कर्पूरमर्द्धकर्पं मृगमदमपि देवकुसुमयुगम् ॥  
 मरिचकणाक्षकुल्लिजनमेकैकं शुक्तिपरिमाणम् ॥ २९ ॥  
 दाडिमफलवल्कलपलमखिलसमं खदिरसारमवचूर्ण्य ॥  
 वटिका मुद्गसमाना विधृताऽस्ये कफघ्नी स्यात् ॥ ३० ॥  
 इति कफघ्नी गुटिका ग्रंथांतरे

रात्रिद्वयशिलाधूमपानात्कासश्रुतिः कुतः ॥  
 जलपानादपि तथा क्रमेण क्षणदाक्षये ॥ ३१ ॥  
 वासायां विद्यमानायामाशयां जीवितस्य च ॥  
 रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमवसीदति ॥ ३२ ॥  
 इति सारसंग्रहात् ॥

मैथुनस्निग्धमधुरदिवास्वापपयोदधि ॥  
 मिष्टान्नपायसादीनि कासी धूमं च वेर्जयेत् ॥ ३३ ॥  
 रंगं कृष्णाभया क्षारं रूपभांगी क्रमोत्तरा ॥

तत्समं खदिरंसारं वंकूतकाथभावितम् ॥ ३४ ॥

एकविंशतिवारांश्च मधुना क्रमिता गुटी ॥

श्वासं कासं च हिक्कां च हन्ति तं कासकर्तरी ॥ ३५ ॥

इति कासकर्तरी ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां कासचिकित्सानाम्

अष्टाविंशस्तरंगः ॥

एकोनविंशस्तरंगः ।

अथ हिक्का ॥

अपानादूर्ध्वगात्कुडाद्धिक्का पंचकफान्वितात् ॥

अन्नजा यमला क्षुद्रा गंभीरा महतीति च ॥ १ ॥

नारीपयःपिष्टमशुक्लचंदनं

घृतं सुखोष्णं च ससैधवं च ॥

पिष्टं तथा सैधवमंबुना च ॥

निहन्ति हिक्कां ननु नावनेन ॥ २ ॥

इति नारायणीयात् ॥

यष्ट्याहं वा माक्षिकेनावलीढं

कृष्णाचूर्णं शर्कराद्यं च किंवा ॥

सर्पिः कोष्णं क्षीरमुष्णं रसो वा

हन्यादिक्षोः पानतः पंच हिक्काः ॥ ३ ॥

इति सुश्रुतात् ॥

शिखिपिच्छभस्मकृष्णाचूर्णं मधुमिश्रितं सुदुर्लीढम् ॥

हिक्कां हन्ति प्रवलां श्वासं चैवातिदुस्तरां छर्दिम् ॥ ४ ॥

चिकित्सादीपात् ॥

कोलमज्जांजनं लाजास्तिकाकांचनैरैरिकम् ॥

कृष्णा धात्री सिता गुंठी कासीसं दधिनाम च ॥ ५ ॥  
 पाटल्याः सफलं पुष्पं कृष्णाखर्जूरमुस्तकम् ॥  
 पडेते पादिका लेहा हिकाघ्ना मधुसंयुताः ॥ ६ ॥  
 मधुकं मधुसंयुक्तं पिप्पलीशर्करान्वितम् ॥  
 नागरं गुडसंयुक्तं हिकाघ्नं नावनत्रयम् ॥ ७ ॥  
 स्तन्येन मक्षिकाविष्टा नस्ये बालककांबुना ॥  
 योज्या हिकाभिभूतेभ्यः स्तन्यं वा चंदनान्वितम् ॥ ८ ॥  
 सिंधुसौवर्चलोपेतं मातुलुंगरसं पिवेत् ॥  
 हिकातो मधुना लिप्ताच्छुंठी धात्रीकणान्विताम् ॥ ९ ॥  
 कृष्णामलकगुंठीनां चूर्णं मधुसितायुतम् ॥  
 मुहुर्मुहुः प्रयोक्तव्यं हिकाश्वासनिवारणम् ॥ १० ॥  
 हिकी श्वासी पिवेद्भांगीं सविश्वामुष्णवारिणा ॥  
 नागरं वा सिताभांगींसौवर्चलसमन्वितम् ॥ ११ ॥

इति वृंदात् ॥

दशमूलीजलयुतं सूतं हिक्किणु योजयेत्  
 श्वासकासहरः सर्वो विधिरत्रापि योज्यते ॥ १३ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

पाटलाफलतोयेन क्षौद्रेण च समन्वितम् ॥  
 हेमभस्म निहंत्येव हिकाः पंच सुदारुणाः ॥ १४ ॥  
 कटुकागैरिकाभ्यां च मुक्ताभस्म तथैव च ॥  
 बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम् ॥ १५ ॥  
 हेममुक्तार्ककांतानां भस्म बल्लसमन्वितम् ॥  
 बीजपूररसः क्षौद्रसौवर्चलसमन्वितः ॥ १६ ॥  
 हन्ति हिकाशतशतमेकमात्रप्रयोगतः ॥

का कथा पंचहिङ्गनां हरणे पुनरुच्यते ॥ १३ ॥  
वौद्धतवस्वात् ॥

इशमूलीकपायेण मधुना च तनन्वितम् ॥

कांतायोभस्म हिङ्गानां पंचानां पंचतां नयेत् ॥ १८ ॥

इति वतंतराजात् ॥

इति त्रयीयोगतरगिण्यां हिङ्गाचिकित्सा नामै-

कोनत्रिशस्तरंगः ॥

त्रिंशत्तरङ्गः ।

अथ श्वातः ॥

यैर्निमित्तैर्भवेद्विका श्वातस्तैरेव जायते ॥

कुलत्पनागरव्याघ्रावासाभिः कपितं जलम् ॥

पीतं पौष्करसंयुक्तं श्वातकासनिवारणम् ॥ १ ॥

इति वृंदात् ॥

गुडशुण्ठीशिवामुस्तैर्धारयेद्दुटिकां मुखे ॥

श्वातकासेषु सर्वेषु विभीतं वापि केवलम् ॥ २ ॥

शार्ङ्गधरात् ॥

भाङ्गीजटापलशतं सलिलार्मणाभ्यां

युक्पञ्चमूलतुलया सहितं विषाच्यम् ॥

पादस्थिते तु शतमत्र हरीतकीनां

पक्तव्यमुज्ज्वलगुडस्य शतेन साकम् ॥ ३ ॥

उत्तार्य तत्र शिशिरे मधुनः पलानि

चत्वारि च द्विगुणितानि पलत्रयं च ॥

व्योपत्रुटित्वगिभकेसरपत्रकाणा-

मेपां पलं खलु

श्वासं च कारः ।

मैकाहिकं ज्वरमथोत्कटपीनसं च ॥

हन्याद्रसायनमिदं हि पुरंदरस्य

प्रोक्तं सहस्रकरपुत्रभिषग्वराभ्याम् ॥ ५ ॥

इति भांगीहरितक्यवलेहः । अथ रसः ॥

रसगंधं विषं चैव टंकणं च मनःशिला ॥

एतानि टंकमात्राणि मरिचं चाष्टटंककम् ॥ ६ ॥

एकैकं मरिचं दत्त्वा खल्वे चूर्णं विमर्दयेत् ॥

त्रिकटुं टंकपटुं च दत्त्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥ ७ ॥

सर्वमेकत्र संयोज्य काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥

श्वासे कासे च मंदाग्नौ तथा श्लेष्मामयेषु च ॥ ८ ॥

गुंजामात्रं प्रदातव्यं पर्णखंडेन धीमता ॥

सन्निपाते च मूर्छायामपस्मारे तथा पुनः ॥ ९ ॥

अतिमोहत्वमापन्ने नस्यं दद्याद्विचक्षणः ॥

रसः श्वासकुठारोऽयं सर्वश्वासविकारजित् ॥ १० ॥

इति श्वासकुठारो रसः सारसंग्रहात् ॥

अर्केशानंसमं वालं भवसमं तालं तदर्द्धां शिलां

श्लक्ष्णां कज्जलिकां विधाय सुदृढे मंत्रेण ऊर्ध्वं क्षिपेत् ॥

ताम्रस्याथ मुखं निरुध्य विधिवत्तद्गर्भयंत्रे पचेत्

क्षौदैर्भांडनभः प्रपूर्य पटुनो युक्त्यैकघस्रं सुधीः ॥ ११ ॥

सोमनाथीयताम्रस्य बल्लयुक्त्यानुपानतः ॥

शीलयन्सकलान् रोगानुन्मूलयति पथ्यभुक् ॥

इति सोमनाथताम्रम् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां श्वासाचिकित्सानाम्

त्रिंशस्तरङ्गः ॥



एकत्रिंशस्तरंगः ।

अथ स्वरभेदः ॥

अम्लादेः कुपितैर्दोषैः स्वरनाडीगतैर्नृणाम् ॥

स्वरभेदः पृथक्सर्वैर्मदसा च क्षयेण च ॥ १ ॥

चव्याम्लवेतसकदुत्रयार्तितीडिक-

कासीसजीरकतुर्गादहनैः समांशैः ॥

चूर्णं गुडप्रमृदितं त्रिसुगन्धियुक्तं

वैस्वर्ग्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम् ॥ २ ॥

इति चव्याद्यो मोदकः ॥

वदरीपत्रवल्कं वा घृतभ्रष्टं ससैंधवम् ॥

स्वरोपघाते कासे च लेहमेनं प्रयोजयेत् ॥ ३ ॥

व्याघ्रीस्वरसविपक्वं रास्त्रावाट्याल्लगोक्षुरव्योपैः ॥

सर्पिः स्वरोपघातं हन्यात्कासं च पंचविधम् ॥ ४ ॥

इति वृंदात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां स्वरभेदचिकित्सानाम्

एकत्रिंशस्तरंगः ॥

द्वात्रिंशस्तरंगः ।

वर्स्ति समीरणे पित्ते विरेकं वमनं कफे ॥

कुर्यादरोचके बुद्ध्या हर्षणं मनसस्तथा ॥ १ ॥

अम्लिका गुडतोयं च त्वगेलाभरिचान्वितम् ॥

अभक्तं छंदरोगेषु शस्तं कवलधारणम् ॥ २ ॥

जिह्वाकंठविशोधनं तदनु च स्याच्छृंगवेरान्वितं

सिधूत्थं हितमत्र वायु मधुना शस्तो रसो दाडिमः ॥

अद्र्युद्धोधकराण्यजीर्णशमनान्याहुस्तथा भेषजा-

न्यत्रारोचकरोगवत्यथ मुहुस्तत्तत्प्रदानानि च ॥ ३ ॥

सूतगंधाभ्रमगधाम्लकामंरिचसैंधवैः ॥

गुटिका रोचकहरी जिह्वावदनशुद्धिहृत् ॥ ४ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यामरोचकचिकित्सानाम्

द्वात्रिंशस्तरंगः ॥

त्रयस्त्रिंशस्तरंगः ।

अथ छर्दिः

दुष्टैर्दोषैः पृथक्सर्वैर्वीभत्सालोकनादिभिः ॥

छर्दयः पंच विज्ञेयास्ताः पृथग्लक्षणैर्मताः ॥ १ ॥

दधिद्विधरससंयुक्तं पिप्पलीमाक्षिकान्वितम् ॥

मुहुर्मुहुर्नरो लीढ्वा छर्दिभ्यः प्रतिमुच्यते ॥ २ ॥

इति सुश्रुतात् ॥

कोमलकरंजपत्रं सलवणमम्लेन संयुक्तम् ॥

यः स्वादति दिनवन्दने छर्दिकथा तस्य कुत्रेह ॥ ३ ॥

इति सारसंग्रहात् ॥

एलालवंगजकेसरकोलमज्जा-

लाजप्रियंगुघनचंदनपिप्पलीनाम् ॥

चूर्णानि माक्षिकसितासहितानि लीढ्वा

छर्दिं निहन्ति कफमारुतपित्तजाताम् ॥ ४ ॥

इति योगरत्नात् ॥

कषायो भ्रष्टमुद्गस्य सलाजमधुशर्करः ॥

रंभाकंदरसो वापि मधुना छर्दिनाशकृत् ॥ ५ ॥

अश्वत्थवल्कलं शुष्कं दग्ध्वा निर्वापितं जले ॥

तद्वारिपानतो नूनं छर्दिं जयति दुस्तराम् ॥ ६ ॥

पुराणसणगोण्या वा खंडं दग्ध्वा तदंबु वै ॥  
 पिवेच्छर्दिहरं किं वा मधुना मक्षिकामलम् ॥ ७ ॥  
 इति वृंदात् ॥

ईषद्भृष्टं करंजस्य बीजं खंडीकृतं पुनः ॥  
 मुहुर्मुहुर्नरो भुक्त्वा छर्दिं जयति दुस्तराम् ॥ ८ ॥  
 पपटकाथमादाय शीतिलं दापयेन्नृणाम् ॥  
 वर्मिं हन्ति महाधोरां सपित्तभ्रमसंयुताम् ॥ ९ ॥  
 शंखपुष्पीरसं टंकद्वयं समरिचं मुहुः ॥  
 सक्षौद्रं मनुजः पीत्वा छर्दिभ्यः किल मुच्यते ॥ १० ॥  
 अजार्जीधान्यपथ्याभिः सक्षौद्रैः सकदुत्रिकैः ॥  
 एतैः सार्द्धं भस्म सूतः सद्यो वांतिं विनाशयेत् ॥ ११ ॥  
 इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां छर्दिचिकित्सानाम्  
 त्रयस्त्रिंशस्तरंगः ॥  
 चतुस्त्रिंशस्तरंगः ।

अथ तृष्णा ॥

सततं यः पिवेद्दारि न तृप्तिमधिगच्छति ॥  
 पुनः कांक्षति तोयं च तं तृष्णार्दितमादिशेत् ॥ १ ॥  
 इति वीरसिंहावलोकतः ॥  
 तृष्णाविवृद्धाबुदरे च पूर्णे  
 संछर्दयेन्मागधिकोदकेन ॥  
 विलेहनं चात्र हितं विधेयं  
 स्याद्वाडिमाम्लानकमातुलुंगैः ॥ २ ॥  
 सुवर्णरूप्यादिभिरग्नितप्तै-

लौष्ठैः कृतं वा सिकतोपलैर्वा ॥

जलं सुखोष्णं शमयेच्च तृष्णां

सशर्करं क्षौद्रयुतं हिमं वा ॥ ३ ॥

कशेरुशृंगाटकपद्मबीज-

विंसेक्षुसिद्धं ससितं च वारि ॥

तृषं क्षतोत्थामपि पित्तजातां

निहन्ति पीतं शिशिरीकृतं च ॥ ४ ॥

इति वृंदात् ॥

अरुणचंदनचंदनबालकै-

र्नलदपद्मकतुल्यकृतांशकैः ॥

शिरसि लेपनमाचरतां नृणां

तृडुपयात्युपशांतिमसंशयम् ॥ ५ ॥

नीलाब्जकुष्ठमधुलाजवटप्ररोहैः

श्लक्ष्णीकृतैर्विरचिता गुटिका मुखस्था ॥

तृष्णां निवारयति तत्क्षणमेव तीव्रा-

मंतस्पृहामिव यतेः परमार्थचिंता ॥ ६ ॥

इतिराजमार्तंडात् ॥ अथ रसः ॥

रसगंधककर्पूरैः शैलोशीरंमरीचकैः ॥

ससितैः कमवृद्धैश्च सूक्ष्मं चूर्णमहर्मुखे ॥ ७ ॥

त्रिगुंजाप्रमितं स्वादेत्पिवेत्पर्युपितांबु च ॥

भृशं तृष्णां निहंत्येवमाश्विनेयप्रकाशितम् ॥ ८ ॥

इति सारसंग्रहात् ॥

सक्षौद्रमात्रजंवूत्थं पिवेत्काथं रसान्वितम् ॥

सतृष्णो मधुना कुर्याद्भूपाञ्छिरस्थितः ॥ ९ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

तृपितो मोहमायाति मोहात्प्राणान्विमुञ्चति ॥

अतः सर्वास्ववस्थासु न कचिद्वारि वार्यते ॥ १० ॥

पानीयं प्राणिनां प्राणो विश्वमेतच्च तन्मयम् ॥

अतोत्पंतनिषेधेपि न कचिद्वार्यते जलम् ॥

घोरोपद्रवसंयुक्ता तृष्णा मरणमादिशेत् ११ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां तृष्णाचिकित्सा नाम च-

तुस्त्रिंशस्तरंगः ॥

पञ्चात्रिंशस्तरंगः ।

अथ मूर्छा ॥

सुखदुःखव्यपोहाच्च नरः पतति काष्ठवत् ॥

मोहो मूर्छेति तामाहुः पङ्क्तिषा सा प्रकीर्तिता ॥ १ ॥

इति रुग्णिनिश्रयात् ॥

सेकावगाहौ मणयः सहाराः

शीतोपचारा व्यजनानिलाश्च ॥

पुष्पाण्यनेकानि च गंधवंति

विसेनानि शस्तानि च मूर्छितेषु ॥ २ ॥

सिताप्रियालेक्षुरसशुनानि

द्राक्षामधूकस्वरसान्वितानि ॥

खर्जूरकाश्मर्यरसैः शृतानि

सिद्धानि सर्पीपि सजीवनानि ॥ ३ ॥

सिद्धानि पर्णे मधुरे पयांसि

सदाडिमा जांगलजा रसाश्च  
तथा यथा लोहितशालयश्च ॥

मूर्छासु पथ्याश्च सदा संतीनाः ॥ ४ ॥

नासावदनरोधैस्तु नस्यैर्मरिचनिर्मितैः ॥

नरं जागरयेद्भूमौ मूर्छितं मंदमारुतैः ॥ ५ ॥

तीक्ष्णांजनाभ्यंजनधूमयोगै-  
स्तथा नखाभ्यंतरंतोत्रपातैः ॥

वादित्रगीतानुनयैरपूर्वै-  
र्विस्मापनैर्गुप्तफलावघर्षैः ॥ ६ ॥

आभिः क्रियाभिर्यदि नाससंज्ञः  
सानाहलालाश्वसतश्च वज्र्यः ॥

प्रबुद्धसंज्ञं वमनानुलोमै-  
स्तीक्ष्णैर्विशुद्धं लघुपथ्ययुक्तम् ॥ ७ ॥

यथास्वं च ज्वरघ्नानि कषायाण्युपयोजयेत् ॥

सर्वमूर्छांपरीतानां विषजानां विषापहम् ॥ ८ ॥

वीरसिंहावलोकतः ॥ अथ रसः ॥

कणामधुयुतं सूतं मूर्छायामनुशीलयेत् ॥

शीतसेकावगाहानि सर्वैर्वा पीडनं हठात् ॥ ९ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां मूर्छाचिकित्सा नाम  
पंचत्रिंशस्तरंगः ॥

षट्त्रिंशस्तरंगः

अथ पानात्ययः ॥

अयुक्ता मद्यपानेन बहुना स्यान्मदात्ययः ॥

दाहमूर्छाविमिध्रांतिवैकल्याविषचेष्टितैः ॥ १ ॥  
 मंथः खर्जूरमृद्धीकावृक्षाम्लाम्लीकदाडिमैः ॥  
 परूपकैः सामलकैर्युक्तो मद्यविकारनुत् ॥ २ ॥  
 माथितं गोदधिसत्तितं तैलं कर्पूरसंमिश्रम् ॥  
 आस्वाद्य पीतमाशु क्षपयति पानात्पयं रोगम् ॥ ३ ॥  
 समरिचयनसारं वारि मीनांडिकायाः ॥  
 परिमिलितममंदैर्दाडिमीबीजतोयैः ॥  
 पिवति य इह मर्त्यस्तस्य पानात्पयाख्यो  
 विरमति मदिराक्षीचुंवनाश्लेषभाजः ॥ ४ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां पानात्पयचिकित्सा ना-

म पट्त्रिंशस्तरंगः ॥

सप्तत्रिंशस्तरंगः

अथ दाहः ॥

त्वचं प्राप्तः स पानोष्मा पित्तरक्ताभिमूर्छितः ॥  
 दाहं प्रकुरुते घोरं पित्तवत्तत्र भेषजम् ॥ १ ॥

इति रुग्निनिश्चयात् ॥

शतधौतघृताभ्यक्तो लिङ्गात्सक्तुसिताघृतम् ॥  
 कोलामलकसंयुक्तैर्दाडिमाम्लैश्च बुद्धिमान् ॥ २ ॥  
 छादयेत्तस्य सर्वांगमारभेालाद्रवांससा ॥  
 लामजेनाथ युक्तेन चंदनेनानुलेपयेत् ॥ ३ ॥  
 चंदनांबुकणस्यंदितालपुंतोपबीजनैः ॥  
 शैवालकदलीपत्रोशीरतल्पे शयीत वा ॥ ४ ॥  
 अंतर्दाहं प्रशमयेदेतैश्चान्यैश्च शीतलैः ॥

फलिनीलोघ्रसेव्यांबुहेमपत्रं कुट्टनटम् ॥ ५ ॥  
 कालीयंकरसोपेतं दाहे शस्तं प्रलेपनम् ॥  
 ह्रीवेरपद्मकोशीरचंदनोदकवारिणा ॥  
 संपूर्णामवगाहे तु द्रोणीं दाहार्दितो नरः ॥ ६ ॥  
 इति श्रीयोगतरंगिण्यां दाहचिकित्सा नाम

सप्तत्रिंशस्तरंगः ।

अष्टात्रिंशस्तरंगः ।

अथोन्मादः ॥

मदयंत्युद्गता दोषा यस्मादुन्मार्गंगामिनः ॥  
 मानसोयमतो व्याधिरुन्माद इति कीर्तितः ॥

इति रुग्निनिश्चयात् ॥

चौरैर्नरेन्द्रपुरुषैररिभिस्तथान्यै-

र्वित्रासितस्य धनवांधवसंक्षयाद्वा ॥

गाढं क्षते मनासि च प्रियया रिरंसो-

र्जायेत चोत्कटतरो मनसो विकारः ॥ २ ॥

इति रुग्निनिश्चयात् ॥

वातिके स्नेहपानं च प्राग्विरेकश्च पित्तजे ॥

कफजे वमनं कार्यं परो वस्त्यादिकक्रमः ॥ ३ ॥

यथा च वक्ष्यते किञ्चिदपस्मारे चिकित्सितम् ॥

उन्मादे तच्च कर्तव्यं सामान्यादोषदूष्ययोः ॥ ४ ॥

सिद्धार्थको वचा हिंशु करंजो देवदारु च ॥

मंजिष्ठा त्रिफला श्वेताकटभीत्वकटुत्रयम् ॥ ५ ॥

समांशानि प्रियंगुश्च शिरीषो रजनीद्वयम् ॥

वस्तमूत्रेण पिष्टोद्यमगदः पानमंजनम् ॥ ६ ॥



नस्यमालेपनं चैव स्नानमुद्धर्तनं तथा ॥

अपस्मारविषोन्मादकृत्यालक्ष्मीज्वरापहम् ॥ ७ ॥

भूतेभ्यश्च भयं हन्ति राजद्वारे च शस्यते ॥

सार्पिरेतेन सिद्धं वा गोमूत्रेण तदर्थकृत् ॥ ८ ॥

इति सिद्धार्थकाद्यगदः ॥

दशमूलांबु सघृतं युक्तं मांसरसेन वा ॥

ससिद्धार्थकचूर्णं वा केवलं वा नवं घृतम् ॥ ९ ॥

उन्मादशांतये पेयो रसो वा कालशांकजः ॥

प्रयोज्यं सार्पपं तैलं नस्याभ्यंजनयोः सदा ॥ १० ॥

आश्वासयेत्सुहृद्वाक्यैर्ब्रूयादिष्टविनाशनम् ॥

दर्शयेदद्भुतं कर्म ताडयेच्च कर्शादिभिः ॥ ११ ॥

सुवह्वं विजने गेहे त्रासयेदहिभिर्धिया ॥

विशाला त्रिफला कौन्ती देवदार्वैलवालुकम् ॥ १२ ॥

स्विरानंतं हरिद्रे द्वे सारिवे द्वे प्रियंगुका ॥

नीलोत्पलैलामंजिष्ठादंतीदाडिमकेसरम् ॥ १३ ॥

तालीसपत्रं बृहती मालतीकुसुमं नवम् ॥

विडंगं पृष्टिपर्णी च कुष्ठं चंदनपद्मकौ ॥ १४ ॥

एतैः कर्पमितैः कल्कैर्विशत्यष्टाभिरेव च ॥

जले चतुर्गुणे पक्त्वा घृतप्रस्थं प्रयोजयेत् ॥ १५ ॥

अपस्मारे ज्वरे कासे शोके मंदानले तथा ॥

वातरक्ते प्रतिश्याये तृतीयकचतुर्थके ॥ १६ ॥

वन्ध्याशोमूत्रकृच्छ्रे च विसर्पोपहतेषु च ॥

कंडूपांश्वामयोन्मादविषमेषु ज्वरेषु च ॥ १७ ॥

भूतोपहतचित्तानां गृहदानामचेतसाम् ॥

शस्तं स्त्रीणां च बन्ध्यानां धन्यमायुर्वलप्रदम् ॥ १८ ॥

अलक्ष्मीपापरोगघ्नं सर्वग्रहनिवारणम् ॥

कल्याणकमिदं सर्पिः श्रेष्ठं पुंस्त्वप्रसाधने ॥ १९ ॥

इति कल्याणकं धृतम् ॥

ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः

सशंखपुष्पः संसुवर्णचूर्णः ॥

उन्मादिनामुन्मदमानसाना-

मपस्मृतौ भूतहतात्मनां हि ॥ २० ॥

नस्येजने पानविधौ च शस्तो

ब्राह्मीरसोयं सवचादिचूर्णः ॥ २१ ॥

इति वीरसिंहावलोकनतः ॥

हिङ्गुसौवर्चलव्योषैर्द्विपलांशैर्घृताढकम् ॥

चतुर्गुणे गवां मूत्रे सिद्धमुन्मादनाशनम् ॥ २२ ॥

इति हिङ्गवाद्यं धृतं वृंदात् ॥

कृष्णाधत्तूरजैर्विजैः पंचभिः पर्यटीरसः ॥

साज्यो योज्यः प्रशांत्यर्थमुन्मादस्यास्य नाशने ॥ २३ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां उन्मादचिकित्सानाम्

अष्टात्रिंशस्तरंगः ॥ ३८ ॥

अथैकोनचत्वारिंशस्तरंगः ।

अथापस्मारः ॥

तमप्रवेशसंरंभो दोषोद्रेकहतस्मृतिः ॥

अपस्मार इति ज्ञेयो गदो घोरश्चतुर्विधः ॥ २४ ॥

इति रुग्निनिश्चयात् ॥

पूर्वं युञ्ज्यादपस्मारे छर्दिरादोनि तुद्धिमान् ॥  
 वातिकं वस्तिभिः प्रायः पैत्तं प्रायो विरेचनैः ॥ २ ॥  
 कफजं वमनैः प्रायस्त्वपस्मारमुपाचरेत् ॥  
 ततस्तीक्ष्णं प्रयुञ्जीत भिषक्सम्यक्प्रवर्तनम् ॥ ३ ॥  
 सर्वतः शुद्धदेहस्य स्यादुन्मादहरी क्रिया ॥

इति वृंदात् ॥

करंजदारुतिद्वार्यकटंभी रामठं वचा ॥  
 समंगा त्रिफला व्योषं प्रियंगुश्च समांशतः ॥ ४ ॥  
 वस्तमूत्रेण संपिष्ट्वा नस्यपानांजनादिभिः ॥  
 योज्यो योगोयमुन्मादेऽपस्मारे भूतरोगिषु ॥ ५ ॥

इति करंजादिप्रयोगः वीरार्तिहावलोकतः ॥

पुण्योद्धृतं गुणः पित्तमपस्मारघ्नमंजनात् ॥  
 तदेव सर्पिषा युक्तं धूपनं परमं स्मृतम् ॥ ६ ॥  
 यः स्वादेत्क्षीरभक्ताशी माक्षिकेण वचारजः ॥  
 अपस्मारं महाघोरं सुचिरोत्थं जयेद्भुवम् ॥ ७ ॥

इति योगरत्नावलीतः । अथ रसः ॥

रसः सतालः सशिलः सलोहः  
 स्रोतोऽजनं सार्कामिदं सगंधम् ॥  
 पिष्टं नृमूत्रेण समं समस्ता-  
 द्वेयो द्विभागो ऽथ वलिः पचेच्च ॥ ८ ॥  
 लोहेक्षणं हन्ति घृतेन माषो-  
 ऽपस्मारमस्योन्मदमानतत्त्वम् ॥  
 पिवेदनु ज्यूपर्णाहिगुयुक्तं  
 सर्पिर्नृमूत्रं रुचकेन सार्द्धम् ॥ ९ ॥

भूतोन्मादेषु सर्वेषु रसोऽयं भूतभैरवः ॥

स्वर्णजैः पञ्चभिर्वर्जैर्देयः सर्पिर्विमिश्रितः ॥ १० ॥

इति भूतभैरवरसः रसरत्नप्रदीपात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां अपस्मारचिकित्सानाम्  
एकोनचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ३९ ॥

अथ चत्वारिंशस्तरंगः ।

अथ वातव्याधिः ॥

स्वहेतुकुपितो वातो यद्यदंगग्रहो वली ॥

तत्तदारव्यो बहुरुजः कुरुतेऽशीतिमामयान् ॥ १ ॥

अभ्यंगः स्वेदनं वस्तिर्नस्यं स्नेहबिरेचनम् ॥

स्निग्धाम्ललवणस्वादु वृष्यं वातामयापहम् ॥ २ ॥

माषात्मगुप्तकैरंडवाट्यालकगृतं पिवेत् ॥

हिगुप्तैथवसंयुक्तं पक्षाघातनिवारणम् ॥ ३ ॥

पञ्चमूलीकृतः काथो दशमूलीकृतोऽथवा ॥

रूक्षः स्वेदस्तथा नस्यं मन्यास्तंभे प्रशस्यते ॥ ४ ॥

इति योगरत्नावलीतः ॥

वाजिगंधावलाशियुदशमूलीमहौषधैः ॥

द्वेगृध्नस्यौ रास्त्रा च गणो मारुतनाशनः ॥ ५ ॥

माषवलांशुर्काशीवीकचृणरास्त्राश्वगंधोरुब्रूकाणाम् ॥

प्रातः काथो पीतो रामठलवणान्वितः कोष्णः ॥ ६ ॥

अपनयति पक्षघातं मन्यास्तंभं सकर्गनादरुजम् ॥

दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति चावश्यम् ॥ ७ ॥

इति माषादिसप्तकम् ॥

पलमर्धपलं वापि रसोनस्य सुकुट्टितम् ॥

हिङ्गुजीरकसिंधूतैः सौवर्चलकटुत्रिकैः ॥ ८ ॥

चूर्णितैर्माषमात्रैस्तद्विलोड्य च विचूर्णितैः ॥

यथाग्निभक्षितं प्रातरेरंडस्नेहसंयुतम् ॥ ९ ॥

दिनेदिने प्रयोक्तव्यं मासमेकं निरंतरम् ॥

वातरोगं निहत्येव मर्दितं चापतंत्रकम् ॥

सर्वाङ्गैकाङ्गरोगं च गृध्रस्याक्षेपकावपि ॥ १० ॥

इति रसोनसप्तकम् ॥

कंदः सार्षपतैलं च लशुनं गृग्वेरकम् ॥

सर्षपमांशं सिंधूतं संधिनं दिनसप्तकम् ॥ ११ ॥

संचूर्ण्य घर्ममध्ये तु प्रातः स्वादेद्यथावलम् ॥

एष निर्गन्धतामेत्य सर्ववातामयाञ्जयेत् ॥ १२ ॥

स्निग्धभोजी मासमात्रं सेवनाद्वातजिह्ववेत् ॥

अजीर्णमातपं रोपमतिनीरं पयो गुडम् ॥ १३ ॥

रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतन्निरंतरम् ॥

मद्यं मांसं तथाम्लं च रसं सेवेत नित्यशः ॥ १४ ॥

इति रसोनपंचकम् ॥

आमाशयस्थे त्वनिले प्रशस्तं

प्राग्लंघनं दीपनपाचने च ॥

प्रच्छर्दनं तीक्ष्णविरेचनं च

पुराणमुद्गा यवशालयश्च ॥ १५ ॥

पूतीकपथ्यासटिपुष्कराणि

विल्वं गुडूची सुरदारु गुंठी ॥

विडङ्गवासातिविपाकणाह्वाः

काथास्त्रयः सामसमीरणघ्नाः ॥ १६ ॥

चित्रकेंद्रयवौ पाठा कटुकातिविषाभया ॥  
 वातव्याधिप्रशमनो योगः षट्चरणः स्मृतः ॥ १७ ॥  
 आमाशयगते वाते छर्दितापे यथाक्रमम् ॥  
 देयः षट्चरणो योगः सप्तरात्रं सुखांबुना ॥ १८ ॥  
 सर्वथा कोष्ठगो वातः प्रशमं याति देहिनः ॥  
 कार्यो वस्तिगते वाते विधिर्बस्तिविशोधनः ॥ १९ ॥  
 श्रोत्रादिषु प्रकुपिते कार्यश्चानिलहाक्रमः ॥  
 त्वद्मांसासृक्छिराप्राप्ते कुर्याच्चासृग्विमोक्षणम् ॥ २० ॥  
 स्वेदोपनाहान्निकर्मबंधनोन्मर्दनानि च ॥  
 स्नायुसंध्यस्थिसंप्राप्ते कुर्याद्वाते विचक्षणः ॥ २१ ॥  
 निगूढेऽस्थिगते वाते पाणिमंथेन दारिते ॥  
 नाडीं दत्वास्थनि भिषक्चूपयेत्पवनं वली ॥ २२ ॥  
 शुक्रप्राप्तेनिले कार्यं शुक्रदोषचिकित्सितम् ॥ २३ ॥  
 कार्पासास्थिकुलत्थिकातिलयवैरंडाधिमापांतसी-  
 बर्षाभूसणबीजकांजिकयुतैरेकीकृतैर्वा पृथक् ॥  
 स्वेदः स्यादिति कूर्परोदरहनुस्फिक्पाणिपादांगुली-  
 गुल्फस्तंभकटीरुजो विजयते सामाः समीरोद्धवाः ॥ २४ ॥  
 नवनीतेन संयुक्ताः स्वादेन्मर्षिंठरीर्नरः ॥  
 दुर्वीरमर्दितं हन्ति सप्तरात्राञ्च संशयः ॥ २५ ॥  
 मापातसीयषकुंरंटककंटकारी-  
 भोकंटदुंदुकजटाकपिकच्छुतोयैः ॥  
 कार्पासकास्थिशणबीजकुलत्थकोल-  
 काथेन वस्तपिशितस्य रसेन चापि ॥ २६ ॥  
 शुंठ्याच मागधिकया शतपुष्पया च

सैरंडमूलसपुनर्नवया सरण्या ॥

रालावलामृतलताकटुकैर्विपकं

मापाख्यमेतदपवाहुकहारितैलम् ॥ २८ ॥

अर्द्धांगशोपमपत्तानकमाढ्यवात-

माक्षेपकं सभुजकंपशिरःप्रकंपम् ॥

नस्येन वस्तिविधिना परिपेचनेन

हन्यात्कटीजघनजानुशिरःसमीरान् ॥ २९ ॥

इति मापाद्यं तैलं वृंदात् ॥

वलामूलकपायस्य दशमूलीकृतस्य च ॥

यवकोलकुलत्थानां कायस्य पयसस्तथा ॥ ३० ॥

अष्टावष्टौ सुभागास्ते तैलादन्येतदेकतः ॥

पचेदाषाप्य मधुरं गणं सैंधवसंयुतम् ॥ ३१ ॥

तथागुरुं सर्जरसं सरलं देवदारु च ॥

मंजिष्ठां चंदनं कुष्ठमेलां कालां च सारिवाम् ॥ ३२ ॥

मांतीं शैलेयकं पत्रं तगरं सारियां वचाम् ॥

शतायरीमश्वगंधां शतपुष्पां पुनर्नवाम् ॥ ३३ ॥

तत्ताधुसिद्धं सौवर्णं राजते मृन्मयेऽथ वा ॥

प्रक्षिप्य सकलं सम्यक्सुगुप्तं स्वापयेद्बुधः ॥ ३४ ॥

वलातैलमिदं स्यात्तं सर्ववातविकारनुत् ॥

यथावलं भिषग्मात्रां मृत्तिकायै प्रदापयेत् ॥ ३५ ॥

या च गर्भार्पिणी नारी क्षीणशुक्रश्च यः पुमान् ॥

क्षीणे वाते भर्महने मायिते पीडिते तथा ॥ ३६ ॥

भग्ने श्रमाभिपन्ने च सर्वधेनं प्रयोजयेत् ॥

सर्वानिसेपकादोश्च वातव्याधौ न्यपोहति ॥ ३७ ॥

प्रत्यग्रधानुः पुरुषो भवेच्च स्थिरयौवनः ॥

राज्ञामेतद्धि कर्तव्यं राजमान्यैस्तथा नरैः ॥ ३८ ॥

इति महावलतैलम् ॥

विल्वोग्निमंथः स्योनाकः पाटला पारिभद्रकः ॥

प्रसारिण्यश्वगंधा च बृहती कंटकारिका ॥ ३९ ॥

बला चातिबला चैव श्वदंष्ट्रा सपुनर्नवा ॥

एषां दशपलान्भागान्श्चतुर्द्रोणांभसा पचेत् ॥ ४० ॥

पादशोषं परिश्राप्य तैलपात्रे प्रदापयेत् ॥

शतपुष्पा देवदारु मांसी शैलेयकं वचा ॥ ४१ ॥

चंदनं तगरं कुष्ठमेलापर्णीचतुष्टयम् ॥

रास्ना तुरंगगंधा च सैधवं सपुनर्नवम् ॥ ४२ ॥

एषां द्विपलिकान्भागान्पेषयित्वा विनिक्षिपेत् ॥

शतावरीरसं चैव तैलतुल्यं प्रदापयेत् ॥ ४३ ॥

आंजनाय दिवा गव्यं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥

पाने वस्तौ तथाभ्यंगे भोज्ये नस्ये प्रयोजयेत् ॥ ४४ ॥

अश्वो वा वातभग्नो वा मजो वा यदि वा नरः ॥

पंगुर्वा भग्नहस्तो वा भग्नपादोथ वा नरः ॥ ४५ ॥

अधोभागे च ये वाताः शिरोमध्यगताश्च ये ॥

दंतगूले हनुस्तंभे मन्यास्तंभेऽपतंत्रके ॥ ४६ ॥

एकांगग्रहणे वापि सर्वांगग्रहणे तथा ॥

क्षीर्णेन्द्रिया नष्टशुक्रा ज्वरग्रस्ताश्च ये नराः ॥ ४७ ॥

लांलाजिह्वाश्च वधिरा विस्वरा मंदमेधसः ॥

मंदप्रजा च या नारी या च गर्भं न विंदति ॥ ४८ ॥

वातातौ वृषणी येषां अंत्रवृद्धिश्च दारुणा ॥



एतन्नारायणं तैलं शस्तं सर्वत्र सर्वदा ॥ ३९ ॥

इति मध्यमनारायणतैलम् ॥

समूलपत्रामुत्पाद्य जानसारां प्रसारिणीम् ॥

कुट्टयित्वा पलशतं कटाहे समाधिश्रयेत् ॥ ५० ॥

वारिद्रोणसमायुक्तं चतुर्भागावशेषितम् ॥

कपायसममात्रं तु तैलमत्र प्रदापयेत् ॥ ५१ ॥

दधस्तत्राढकं दद्याद्विगुणं चाम्लकांजिकम् ॥

भेषजानि तु पेप्याणि तत्रेमानि समावयेत् ॥ ५२ ॥

गुंठीपलानि पंचैव रास्नायांश्च पलद्वयम् ॥

यवक्षारपले द्वे च सैधवस्य पलद्वयम् ॥ ५३ ॥

द्विपलं पिप्पलीमूलं चित्रकस्य पलद्वयम् ॥

प्रसारणीपले द्वे च द्वे पले मधुकस्य च ॥ ५४ ॥

एतत्सर्वं समालोढ्य शनैर्मृद्वग्निनापचेत् ॥

एतत्प्रभञ्जने श्रेष्ठं नस्यकर्मणि शस्यते ॥ ५५ ॥

पाने वस्तौ च वातव्यं न क्वचित्प्रतिपिध्यति ॥

अशीर्तिं वातरोगाणां तैलमेतद्वधपोहति ॥ ५६ ॥

एकांगग्रहणं वापि सर्वांगग्रहणं तथा ॥

अपस्मारं तथोन्मादं विद्रधि मंदबद्धिताम् ॥ ५७ ॥

त्यग्गताभ्वापि ये वाताः शिरःसंधिगता अपि ॥

अस्थिसंधिगता ये च येच शुक्रांतरे स्थिताः ॥ ५८ ॥

सर्पान्वातामयान्नूनं नाशयत्येव सर्वथा ॥

हयं गजं नरं वापि वातजर्जरितं भृशम् ॥ ५९ ॥

तस्यः प्रशमयेत्तैलमेतन्नात्र विचारणा ॥

इन्द्रियस्य प्रजननं बंघ्यानां च प्रजाकरम् ॥

वृद्धानां बालकानां च स्त्रीणां राक्षां हिनं परम् ॥

पंगुर्वा पृष्ठभग्नो वा पीत्वैतत्संप्रधावति ॥ ६० ॥

इति प्रसारणीतैलम् ॥

बलाश्वगंधा बृहती श्वदंष्ट्रा

स्योनाकवाट्यालकपारिभद्रम् ॥

क्षुद्राकठिलोतिबलाग्रिमंथ

रास्नारणीवैकान्तिकच्छुरा च ॥ ६१ ॥

निर्गुडिकैरंडकुंरंटकानां

मूलानि वर्षास्तरणीयुतानि ॥

मूलं विदध्यादथ पाटलानां

संकुट्यपादांशतयोद्धृतानाम् ॥ ६२ ॥

द्रोणैरपामष्टभिरेव पक्का

पादावशेषेण रसेन तेन ॥

तैलाढकाभ्यां सह दुग्धमत्र

गन्धं विदध्यादथवाजदुग्धम् ॥ ६३ ॥

दद्याद्रसं चैव शतावरीणां

तैलेन तुल्यं पुनरेव तत्र ॥

पक्का दिनैकं कृतवस्त्रपूतं

कल्कानि चैषां च समावपेच्च ॥ ६४ ॥

रास्नाश्वगंधामिसिदारुकुष्ठ-

पर्णीतुरुष्कागुरुकेसराणि ॥

सिंधूत्यमांसी रजनीद्वयं च

शैलेयकं पुष्करचंदनानि ॥ ६५ ॥

१ पीठसर्पी ।

२ गीतुरु ।

३ भरलू ।

४ खिल्टो ।

५ निब ।

६ कोरल ।

७ पीयावांसो ।

८ पुनर्नवा

९ लुरा

तानीभजमायन ।

एलासयष्टीतगराब्दपत्रं  
 भृंगाष्टवर्गं च जयापलाशम् ॥  
 वृश्चीकधौणेयकचोरकारव्यं  
 मूर्धात्वचा कट्फलपद्मकं च ॥ ६७ ॥  
 मृणालजातीफलकेतकी च  
 सनागपुष्पं सरलं मुंरा च ॥  
 जीवंतिका चंदनकं सुशीरं  
 दुरालभाधानैरिकानखं च ॥ ६८ ॥  
 कैवर्तिकं तालंशिरः सतिक्तं  
 खंजूरमुस्तं समभागमेषाम् ॥  
 एतैः समेत्यार्द्धफलप्रमाणैर्भा-  
 गानथाष्टौ किल कालमेव्याः ॥ ६९ ॥  
 एणः कुरंगो हरिणो मयूरो  
 गोधा शशः शल्लकचक्रवाकौ ॥  
 वर्तीरलवौ वरतित्तिरी च  
 सत्सारसकौचकंकवुपर्णाः ॥ ७० ॥  
 अजाः सकूर्मा इह मांसयूपं  
 क्रमात्क्षिपेच्चात्र यथैव लाभम् ॥  
 रोहीतकोथासवनेत्रनामा  
 कंसाढकौ मुद्गरगुंगिके च ॥ ७१ ॥  
 पांठीनकालीयकतोणिका च  
 सशेखरं ये कुरुरादयश्च ॥

- |             |                  |                   |                       |
|-------------|------------------|-------------------|-----------------------|
| १ सांड ।    | २ भाग्येसर ।     | ३ कनूरकषरी ।      | ४ केयकेबीम ।          |
| ५ चिरायतो । | ६ ताडरुत ।       | ७ मुहारे ।        | ८ कृष्णमेड ।          |
| ९ गोड ।     | १० मयूरीविशेषः । | ११ मत्स्यविशेषः । | १२ मयूरी-<br>विशेषः । |
|             | १३ वर्धारयः ।    |                   |                       |

ये चापि तोये शिशुमारमुख्या

लभ्याश्च ये श्वभ्रगता भुजंगाः ॥ ७२ ॥

अन्येपि ये भूचरस्वेचराश्च

यूषा अमीषां क्रमशोऽत्र योज्याः ॥

सुताम्रपात्रेप्यथ मृत्तिकाजे

कर्पूरकाश्मीरमृंगांडजं च ॥ ७३ ॥

दद्यात्सुगंधानि वदन्ति केचित्प्रस्वेददौर्गन्ध्यविनाशनाय ॥

वदतिकेचिद्भिषजः समेतं शुभे तथा ऋक्षमुहूर्तलग्ने ७४

संतोष्यविप्रान्भिषजोर्थिनश्च

सुभाजने यत्नधृतं तथैव ॥

पाने च नस्ये च निरुहणे च

भोज्ये प्रयोज्यं तत एव नूनम् ॥ ७५ ॥

अभ्यंगमादौ च सदा प्रशस्तं निर्वाप्यते कर्मसुकुचिन्न

उन्मादशोषक्षतरक्तपित्तश्वासभ्रमच्छर्दिषु मूर्छितेषु ७६

कासाग्निवाताहतगूलदंतकमीन्पृथुहसतोददाहान् ॥

सतालुगूलंश्रवणाक्षिगूलंवाधिर्पमुच्चैर्ज्वरपीडितं च ॥ ७७

मर्देन्द्रियत्वं च यथाग्निमाद्यं प्रणष्टशुक्रत्वमथांगकंडूः ॥

निहत्य सत्यं स्वगुणप्रभावात्कटिग्रहापस्मृतिगृध्रसीच ॥

पक्षाभिघातं चरणाभिघातं

हस्ताभिघातं च शिरोग्रहं च ॥

कुष्ठानि सर्वाणि च सर्वगुल्मा

न्मगंदरं गूलमुरक्षत च ॥ ७९ ॥

यक्ष्माणमुग्रं सकलप्रमेहा-

न्नासाक्षिकर्णप्रभवान्विकारान् ॥

वातादिजातान्किल भूतजाता-  
 न्कृत्यादिजातान्गृहजान्विकारान् ॥ ८० ॥  
 रोगः स नास्त्येव नरस्य देहे  
 नानेन शान्तिं समुपैति यो हि ॥  
 सद्यो व्रणानस्थिविचूर्णितं वा  
 नाडीव्रणान्वापि च योजयित्वा ॥ ८१ ॥  
 सुवर्णं वर्णं वितनोति रूपं  
 नारायणाख्यः किल तैलराजः ॥  
 बन्ध्या पुमान्वापि वरांगना वा  
 सुपुत्रमाप्नोति विलेपतोस्य ॥ ८२ ॥  
 सिध्यत्यनेनैव नियोजितेन  
 निदाघदग्धः प्रहतोपि वृक्षः ॥  
 अल्पस्य का वा भणितिर्नरस्य  
 रोगस्य जंतोरपरस्य वापि ॥ ८३ ॥  
 नारायणोक्तं यदिदं सुतैलं  
 नारायणं नाम ततः प्रसिद्धं ॥

इति महानारायणतैलम् ॥

मापक्काये वलाकाये रास्त्रायां दशमूलजे ॥  
 यवकोलकुलत्यानां छागमांसरसे पृथक् ॥ ८४ ॥  
 प्रस्ये तैलस्य च प्रस्थं क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ॥  
 रास्त्रात्मगुप्तासिधूत्यशताहिरंडमुस्तकैः ॥ ८५ ॥  
 जीवनीयवलाव्योपैः पञ्चेदक्षमितैर्भिषक् ॥  
 हस्तकंपे शिरःकंपे वाङ्गकंपे ऽपवाङ्गुके ॥ ८६ ॥  
 वस्त्यभ्यंजनपानेषु नावनेषु प्रयोजयेत् ॥

भाषतैलमिदं श्रेष्ठं मूर्द्धजन्नुगदापहम् ॥ ८७ ॥

इति बृहन्मापादितैलम् ॥

रास्त्रामृतैरंडसुराह्विश्वं

तुल्येन गाढं पुरुणा विमर्द्य ॥

खादित्समीरी सशिरोगदी च

नाडीगदी चापि भगंदरी च ॥ ८८ ॥

इति रास्त्राद्यो गुग्गुलुः ।

त्रेकदु त्रिफला मुस्तं विडंगं चन्यचित्रकौ ॥

चैलापिप्पलीमूलं हपुषा सुरदारु च ॥ ८९ ॥

तुवरं पुष्करं कुष्ठं विषा च रजनीद्वयम् ॥

बाण्डिका जीरकं शुंठी पत्रं च सदुरालभम् ॥ ९० ॥

सौषर्चलं विडं चैव क्षारौ द्विरदपिप्पली ॥

सैन्धवं च समानेतांस्तुल्यं दद्याच्च गुग्गुलुम् ॥ ९१ ॥

साधयित्वा विधानेन कोलमात्रां वर्टी चरेत् ॥

घृतेन मधुना वापि भक्षयेत्तामहर्मुखे ॥ ९२ ॥

आमं हन्यादुदावर्तमंत्रबृद्धिगुदरुमीन् ॥

महाज्वरोपसृष्टानां भूतोपहतचेतसाम् ॥ ९३ ॥

आनाहं च तथोन्मादं कुष्ठानि गुदाजानि च ॥

शोफं स्त्रीहामयं देहे कामलामपर्चा तथा ॥ ९४ ॥

नाम्ना द्वात्रिंशको शेष गुग्गुलुः कथितो महान् ॥

धन्वंतरिरुतो योगः सर्वरोगनिपूदनः ॥ ९५ ॥

इति द्वात्रिंशको गुग्गुलुः ॥

औभाश्वगंधा हपुषा गुडूची शतावरीगोक्षुरकं च रास्त्रा ॥

श्यामा सठी घोषवतीयवानी सनागराक्षेति समं त्रिचूर्णं  
तुल्यं वरं कौशिकमत्र देयं गव्यं च सर्पिश्च ततोर्द्धभागं ॥  
अक्षार्द्धमात्रां तु ततः प्रयोगस्तत्रानुपानं सुरया च यूयैः ॥  
कोष्णांबुना वा पयसास्तेन भांसस्य वा कोमलवस्तुजस्य  
कटिग्रहेगृध्रसिवाहुपृष्ठहनुग्रहे जानुनि पादयुग्मे ॥ ९८ ॥  
संधिस्थिते चास्थिगते च वातेमज्जागते कोष्ठगते तथापि  
रोगाअयेद्वातकफानुविद्वान्वातेरितान् ऋद्रहयोनिदोषान्  
भग्नास्थिविद्वेषु च खंडजाने त्रयोदशांगं प्रवदंति सिद्धाः

इति त्रयोदशांगो गुग्गुलुः ॥

नागरं पिप्पलीमूलं पिप्पली चव्यचित्रकौ ॥

भ्रष्टं हिंस्वजमोदा च सर्पपा जीरकद्वयम् ॥ १०० ॥

रेणुकेंद्रयका पाठा विडंगं गजपिप्पली ॥

कटुकातिषिपा भांगी वचा मूर्खेति भागतः ॥ १ ॥

प्रत्येकं शाणमात्राणि द्रव्याणीमानि त्रिंशतिः ॥

द्रव्येभ्यः सरुलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ २ ॥

एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयस्तु गुग्गुलुः ॥

एकं पिंडं ततः कृत्वा धारयेद् घृतभाजने ॥ ३ ॥

गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः

गुग्गुलुर्योगराजोयं त्रिदोषघ्नो रसायनः ॥ ४ ॥

मैथुनाहारपानानां त्यागो नैवात्र विद्यते ॥

सर्वान्वातामयान्कुष्ठमर्शांसि ग्रहणीगदम् ॥ ५ ॥

प्रमेहं वातरक्तं च नाभिगूलं भगंदरम् ॥

उदावर्त क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ॥ ६ ॥

मंदाग्निं श्वासकासांश्च नाशयेदर्कच तथा ॥

रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाः ॥ ७ ॥  
 पुंतामपत्यजनको बन्ध्यानां गर्भदस्तथा ॥  
 रास्नादिकाथसंयुक्तो विविधं हन्ति मारुतम् ॥ ८ ॥  
 काकोल्यादिगृतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥  
 दूर्वागृतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पांडुताम् ॥ ९ ॥  
 मेदोवृद्धिं च मधुना कुष्ठं निवशृतेन च ॥  
 छिन्नाकाथेन वातास्रं शोथं मूलरुजाद्धृतात् ॥ १० ॥  
 पाटलाकाथसहितो विषं मूयकजं जयेत् ॥  
 त्रिफलाकाथसहितो नेत्रार्तिं हन्ति दारुणाम् ॥  
 पुनर्नवादिकाथेन हन्यात्सर्वोदराणि च ॥ ११ ॥  
 इति योगराजगुग्गुलुः शार्ङ्गधरात् ॥  
 चित्रकं पिप्पलीमूलं यवानी कारवी तथा ॥  
 विडंगान्यजमोदा च जीरकं सुरदारु च ॥ १२ ॥  
 चव्यैला सैन्धवं कुष्ठं रास्ना गोक्षुरधान्यकम् ॥  
 त्रिफला मुस्तकं व्योषं त्वक्क्षीरं तु यवाग्रजम् ॥ १३ ॥  
 तालीसपत्रं पत्रं च लवंगं सर्जिका सटी ॥  
 दंती गुडूची हपुषा बाजिगंधा शतावरी ॥ १४ ॥  
 प्रत्येकं कर्पमात्रं स्याच्चतुःकर्पमयामृता ॥  
 एतानि सुभिषक्पिप्प्ला सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ १५ ॥  
 यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रो हि गुग्गुलुः ॥  
 संमर्थं सर्पिषा गाढं स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥ १६ ॥  
 ततोमात्रां प्रयुञ्जीत यथेष्टाहारवानपि ॥  
 योगराज इति ख्यातो योगोयममृतोपमः ॥ १८ ॥



आमवातादिवातादीन्कूर्मीन्दुष्टव्रणानपि ॥  
 ह्रीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत् ॥ १ ॥  
 अग्निं च कुरुते दीप्तं तेजोवर्द्धि बलं तथा ॥  
 वातरोगाञ्जयत्याशु संधिमज्जागतानपि ॥ २० ॥  
 पादग्रहं क्रोष्टुशीर्षं मन्यास्तंभं गलग्रहम् ॥  
 बाहुग्रहं पक्षघातं ऋद्ध्रहं च कटिग्रहम् ॥ २१ ॥  
 दुष्टशुक्रं च दुष्टास्त्रं गृध्रसीमक्षिनिग्रहम् ॥  
 कर्णग्रहं कर्णशूलं शिरःशूलं मरुत्कृतम् ॥ २२ ॥  
 रास्त्राकायेन हंत्येष केवलो वा प्रशस्यते ॥  
 इति योगराजगुग्गुलुः सारसंग्रहात् ॥  
 रास्त्रा द्विगुणभागा स्यादेकभागास्तथापरे ॥  
 धन्वयासवलैरंडदेवदारुसठीवचाः ॥ २३ ॥  
 वासकं नागरं पथ्या चव्यमुस्तापुनर्नवाः ॥  
 गुडूचीवृद्धदारुश्च शतपुष्पा च गोक्षुरम् ॥ २४ ॥  
 अश्वगंधा प्रतिविषा कृतमालः शतावरी ॥  
 कृष्णा सहचरश्चैव धान्यकं बृहतीद्वयम् ॥ २५ ॥  
 एभिः कृतं पिवेत्काथं शुंठीचूर्णेन संयुतम् ॥  
 कृष्णचूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुना समम् ॥ २६ ॥  
 अजमोदादिना वापि तैलेनैरंडजेन वा ॥  
 सर्वाङ्गकंठे कुञ्जत्वे पक्षाघातापवाहुके ॥ २७ ॥  
 गृध्रस्यामामवातेषु श्लोषदे चापतानके ॥  
 भञ्जवृद्धौ तथाध्माने जंघाजानुगतेर्दिते ॥ २८ ॥  
 शुक्रामये मेढ्ररोगे वंध्यायोन्यामयेषु च ॥  
 महारास्त्रादिराख्यातो ब्रह्मणा गर्भकारणम् ॥ २९ ॥  
 इति महारास्त्रादि शार्ङ्गधरात् ॥ अथ रसः ।

सूतहाटकषज्जाणि ताग्रं लोहं च माक्षिकम् ॥  
 तालं नीलांजनं तुत्यमहिफेनं समांशकम् ॥ ३१ ॥  
 पंचानां लवणानां च भागमेकं विमर्दयेत् ॥  
 शृङ्गीक्षीरैर्दिनैकं तु रुध्वाधो भूधरे पचेत् ॥ ३२ ॥  
 माषैकमार्द्रकद्रवैर्लेहयेद्वातनाशनम् ॥  
 पिप्पलीमूलजं काथं सकृष्णमनुपाययेत् ॥  
 तर्षान्वातविकारांश्च निहन्त्याक्षेपकादिकान्  
 इति वातनाशनो रसः ॥

शुद्धं सूतं मृतं लोहं ताप्यं गंधकतालकम् ॥  
 पथ्याग्रिमंथनिर्गुडी व्यूषणं टंकणं क्षिपेत् ॥ ३३ ॥  
 तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे दिनं निर्गुडिकाद्रवैः ॥  
 मुंडीद्रवैर्दिनैकं तु द्विगुंजो षट्कीकृतः ॥ ३५ ॥  
 भक्षयेद्वातरोगार्तो नाम्ना स्वच्छंदभैरवः ॥  
 रास्त्रामृतादेवदारुशुंठीवातारिजं गृह्यतम् ॥ ३६ ॥  
 सगुग्गुलुं पिवेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥  
 इति स्वच्छंदभैरवो रसः ॥

इति श्रीयो० वातरोगचिकित्सानामचत्वारिंशस्तरंगः ॥

एक चत्वारिंशस्तरंगः

अथ वातरक्तचिकित्सा ॥

बाहनाभिरतस्यासृग्दूषयित्वानिलो वर्ली ॥  
 स्पर्शाज्ञत्वं मंडलानि स्फोटकानि विसूचिकाम् ॥ १ ॥  
 करोत्यंगुलिवैकल्यं वातरक्तमिदं स्मृतम् ॥  
 कालातिकांतमेतत्तु कुष्ठं भवति दुर्धरम् ॥ २ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

वातशोणितिनो रक्तं स्निग्धस्य बहुशो हरेत् ॥

अल्पाल्परक्षतायुक्तं यथादोषं यथाबलम् ॥ ३ ॥

इति वृंदात् ॥

वासागुडूचीचतुरंगुलानामेरंडतैलेन पिवेत्कषायम् ॥

क्रमेण सर्वांगजमप्यशोषं जयेदसृग्वातभवं विकारम् ॥ ४ ॥

त्रिफलानिवमंजिष्ठात्रचाकटुकरोहिणी ॥

वत्सादनीदारुनिशाकपायं नवकार्पिकम् ॥ ५ ॥

वातरक्तं तथा कुष्ठं पामानं रक्तमंडलम् ॥

कृच्छ्रं कापालिकं कुष्ठं पानाद्वेवापकर्षति ॥ ६ ॥

इति नवकार्पिकः काथः वृंदात् ॥

वनमहिपलोचनोदरसन्निभवर्णस्य गुग्गुलोः प्रस्थम् ॥

प्रक्षिप्य तोयराशौ त्रिफलां च यथोक्तपरिमाणाम् ॥ ७ ॥

द्वात्रिंशच्छिन्नरुहापलानि देयानि यत्नतो विबुधैः ॥

मृद्वग्निनाथ विपचेद्व्यां संघट्टयेन्मुद्गुर्यावित् ॥ ८ ॥

अर्द्धकथितं तोयं जातं ज्वलनस्य संपर्कात् ॥

अवतार्य वस्त्रपूतं पुनरपि संपाचयेदयःपात्रे ॥ ९ ॥

सांद्रीभूते तस्मिन्नवतार्य हिमोपलप्रस्थे ॥

त्रिफलाचूर्णार्द्धपलं त्रिकटोश्चूर्णं षडक्षपरिमाणम् ॥ १० ॥

कमिरिपुचूर्णार्द्धपलं कर्पकर्म त्रिवृद्धंत्योः ॥

पलमेकं तु गुडूच्या दत्त्वा संचूर्ण्य यत्नेन ॥ ११ ॥

उपयुंज्यात्वनुपानं यूपंतोयं सुगंधि सलिलं च ॥

इच्छाहारविहारी भेषजमुपयुंज्यात्सर्वकालमिदम् ॥ १२ ॥

तनुरोधिवातशोणितमेकजमथ द्वंद्वजं च मुचिरोत्थम् ॥

जयति गृतं परिगुष्कं स्फुटितमाजानुगं चापि ॥ १३ ॥

व्रणकासगुल्मकुष्ठश्वयथूदरपांडुमेहांश्च ॥

मंदार्मि च चिरोत्थं प्रमेहपिडिकांश्च नाशयत्याशु ॥ १४ ॥

सततं निषेव्यमाणः कालवशाद्धन्ति सर्वगदान् ॥

अभिभूय जरादोषं वितरति कैशोरकं रूपम् ॥ १५

इति कैशोरको गुग्गुलुर्वृदात् ॥

मंजिष्ठा मुस्तकुटजगुडूची कुष्ठनागरैः ॥

भांगीक्षुद्रावचानिबनिशाद्वयफलत्रिकैः ॥

पटोल कटुकामूर्खाविडंगाऽसनचित्रकैः ॥

शतावरीत्रायमाणाकृष्णेंद्रयववासकैः ॥ १६ ॥

भृंगराजमहादारुपाठाखदिरचंदनैः ॥

त्रिवृद्धरुणकैरातवाकुचीरुतमालकैः ॥ १७ ॥

शाखोटकमहानिबकरंजातिविषांशुभिः ॥

इंद्रवारुणिकानंतासारिवापर्पटैः समैः ॥ १८ ॥

एभिः कृतं पिवेत्काथं कणागुग्गुलुसंयुतम् ॥

अष्टादशसु कुष्ठेषु वातरक्तेर्दिते तथा ॥ १९ ॥

उपदंशे श्लीपदे च प्रसुप्तौ पक्षघातके ॥

मेदोदोषे नेत्ररोगे मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥ १९ ॥

इति वृहत्तमंजिष्ठादिः शार्ङ्गधरात् ॥

मंजिष्ठोऽथावरातिक्तानिशानि वामृतामरैः ॥

सत्रिवृत्खदिरैः काथः सर्वकुष्ठानिलाश्वजित् ॥ २० ॥

इति लघुमंजिष्ठादिः ॥

मंजिष्ठारिष्टवासात्रिफलदहनकं द्वे हरिद्रे गुडूची

भूनिवो रक्तसारः सखदिरकटुका वाकुची व्याधिघातः ॥

मूर्खादंतीविशालाकृमिरिपुजटिलावायसरिसर्पाठा-

श्यामीनंतापटोलैः समरिचमगधैः साधितोऽयं कपायः ॥

पीतो हन्यात्समस्तान् सकलतनुगतात्रक्तजातान्विकारान् ] कंडूविस्फोटकादीनलसकविषमश्वित्रपामादिदोषान् ॥ २१ ॥

इत्यपरो मंजिष्ठादिः योगरत्नावलीतः ॥

भूनेवांबुदनिवषत्सककणात्रायंत्यनंतामृता-  
तिकाभीरुफलत्रिकप्रतिविषामूर्वाविशालाजलैः ॥  
पाठापर्पटसारिवाद्वयनिशायुग्यष्टिकापद्मकैः  
सोशीरैः सपटोलचंदनवचाशम्याकससच्छदैः ॥ २२ ॥  
इत्येभिर्गदितैर्जलाष्टगुणितैः प्रस्थं पचेत्सर्पिपो  
गव्यं सामलकीरसद्विगुणितं नाम्ना महातित्तकम् ॥  
इत्येतद्गलगंडमंडलरुजः कंडूं सपांड्वामयां  
शोफश्लीपदवातरक्तविकृतीः कुष्ठानि चाष्टादश ॥ २३ ॥

इति महातित्तकं घृतं सारसंग्रहात् ॥

मरिचं त्रिवृता दंती क्षीरमार्कं सकृद्रसः ॥  
देवदारु हरिद्रे द्वे मांसी कुष्ठं सचंदनम् ॥ २४ ॥  
विशाला करवीरं च हरितालं मन शिला ॥  
चित्रकं लांगली चापि विडंगं चक्रमर्दकम् ॥ २५ ॥  
शिरीषं कुटजो निवः सप्तपर्ण्यमृता स्नुही ॥  
शम्याको नक्तमालश्च खदिरं पिप्पली वचा ॥ २६ ॥  
ज्योतिष्मती च पलिका विषस्य द्विपलं मतम् ॥  
भाढकं कटुतैलस्य गोमूत्रं च चतुर्गुणम् ॥ २७ ॥  
मृत्पात्रे लोहपात्रे वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥  
एतत्तैलं विशेषेण नाशयेत्कुष्ठजान्त्रणान् ॥ २८ ॥

वातरक्तभवान्व्याधीन् पामाविस्फोटचर्चिकाः

नश्यन्त्यभ्यंजनादेव बलीपलितमेव च ॥ २९ ॥

इति बृहन्मरिचाद्यं तैलं योगरत्नावलीतः ॥

सारिवासर्जमंजिष्ठापटीसिक्थैः पयोन्वितैः ॥

तैलं पक्का प्रयोक्तव्यं पिंडाख्यं वातशोणिते ॥ ३० ॥

इति पिंडतैलं वृंदात् ॥ अथ रसः ॥

शुद्धं सूतं चतुर्गुणं पलं यामं विचूर्णयेत् ॥ ३३ ॥

मृतताम्राभ्रलोहानां दरदं च पलंपलम् ॥ ३१ ॥

सुवर्णं रजतं चैव प्रत्येकं दशानिष्ककम् ॥

माषैकं मृतवज्रं च तालसत्त्वं पलद्वयम् ॥ ३२ ॥

जंघीरोन्मत्तवासाभिः स्नुस्वर्कविषंमुष्टिभिः ॥

मर्द्यं हेयारिजैर्द्रवैः प्रत्येकेन दिनंदिनम् ॥ ३३ ॥

एवं सप्तदिनं मर्द्यं तद्गोलं वस्त्रवेष्टितम् ॥

बालुकायंत्रगं स्वेद्यं त्रिदिनं लघुबहिना ॥ ३४ ॥

आदाय चूर्णयेच्छुद्धं पलिकं योजयेद्विषम् ॥

द्विपलं पिप्पलीचूर्णं मिश्रः सर्वेश्वरो रसः ॥ ३५ ॥

द्विगुंजो लिखते क्षौद्रैः सुप्तिमंडलकुष्ठनुत् ॥

बाकुची देवकाष्ठं च कर्षमात्रं सुचूर्णयेत् ॥

लिहोदेरंडतैलाक्तमनुपानं सुखावहम् ॥ ३६ ॥

इति सर्वेश्वरो रसः शार्ङ्गधरात् ॥

कनकभुजगवल्ली मालतीपत्रमूर्वा-

रसगंदकुनटीभिर्मर्दितस्तेलयोगात् ॥

अपहरति रसेन्द्रः कुष्ठकंडूविसर्प-

स्फुटितचरणरंघ्रश्यामलत्वं त्वचायाः ॥ ३७ ॥

अस्य तैलस्य लेपेन वातरक्तं प्रशाम्यति ॥ ३८ ॥

इति रसेन्द्रचिन्तामणेः ॥

दिवास्वप्नाग्निसन्तापं व्यायामं मैथुनं तथा ॥

कटूष्णगुर्वभिष्यंदिलवणाम्लानि वर्जयेत् ॥ ३९ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यांरक्तचिकित्सानामैकचत्वारिंशस्तरंगः ॥

रिंशस्तरंगः ॥

द्वाचत्वारिंशस्तरंगः ।

अथामवातः ॥

वृद्धेन वायुना नुञ्ज आमो याति कफाशयम् ॥

लभेत स च नाडीभिरामवातोऽयमीरितः ॥ १ ॥

कट्यूरूजानुजंघासुपृथुशोथरूजाकरः ॥

लंघनं स्वेदनं तिक्तदीपनानि कटूनि च ॥ २ ॥

पिरेचनं स्नेहपानं वस्तयश्चाममारुते ॥

रूक्षः स्वेदो विधातव्यो बालुकापुटकैस्तथा ॥ ३ ॥

उपनाहाश्च कर्तव्यास्तेपि स्नेहविर्जिताः ॥

सटी गुंठयभया चोया देवदारु विषामृता ॥ ४ ॥

कपायमामवातस्य पाचनं रूक्षभोजनम् ॥

चित्रकं कटुका पाठा कर्लिगातिविषामृता ॥ ५ ॥

देवदारु वचा मुस्तं नागरातिविषाभया ॥

पिवेदुष्णांबुना नित्यमामवातस्य भेषजम् ॥ ६ ॥

रास्नां गुडूचीमेरुदेवदारु महौषधम् ॥

पिवेत्सर्वांगे वाते सामे संध्यास्थिमज्जगे ॥ ७ ॥

इति रास्नादिपंचकम् ॥

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकंठकैरंडपुनर्नवानाम् ॥

काथं पिवेन्नागरचूर्णमिश्रं जंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वगूली ॥ ८

इति रास्नादिसप्तकम् ॥

रास्नैरंडशतावरीसहचरादुस्पैशंवासामृता-

देवाह्वातिविषाभयाघनवचाशुंठीकपायः कृतः ॥

पीतं सोरुबुतैल एष विहितः सामे सगूलेनिले

कट्यूरुत्रिकपार्श्वपृष्ठिजठरे कोष्ठेषु वातार्तिजित् ॥ ९ ॥

इति रास्नादि वृंदात् ॥

पिंडितं गुग्गुलोः प्रस्थं कटुतैलं पलायकम् ॥

प्रत्येकं त्रैफलं प्रस्थं सार्धद्रोणजले पचेत् ॥ १० ॥

पादशेषं ततः पूतं पुनरग्रावधिश्रयेत् ॥

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडंगं सुरुदारु च ॥ ११ ॥

गुडूच्यग्नित्रिवृद्धंतीवचासूरणमौणकम् ॥

पारदं गंधकं चैव प्रत्येकं शुक्तिसंमितम् ॥ १२ ॥

शुद्धं सहस्रं प्रत्यग्रं जैपालस्य फलं बुधः ॥

त्वगंकुरविनिर्मुक्तं सिद्धे संचूष्ये निक्षिपेत् ॥ १३ ॥

ततो मापद्वयं जग्ध्वा पिवेत्तप्तजलादिकम् ॥

अग्निं च कुरुते दीप्तं प्रलयानलसंनिभम् ॥ १४ ॥

धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलं च विपुलं तथा ॥

आमवातं शिरोवातं कटिवातं भगंदरम् ॥ १५ ॥

जानुजंघाश्रितं वातं सकटियहमेव च ॥

अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च साध्मानं तिमिरं तथा ॥ १६ ॥

सिंहनाद इति ख्यातो रोगधारणदर्पहा ॥

इति सिंहनादगुग्गुलुः वृंदात् ॥

तुलाक्षुण्णरसोनस्य तदर्द्धं लुंचितास्तिलाः ॥



पात्रे तु गव्यतक्रस्य पिष्टद्रव्यैः समं क्षिपेत् ॥ १७ ॥  
 व्यूषणं धान्यकं चव्यं चित्रकं गजपिप्पली ॥  
 अजमोदा त्वगेला च ग्रंथिकं च पलांशकम् ॥ १८ ॥  
 शर्करायाः पलान्यष्टौ पंचाजाज्याः पलानि च ॥  
 कृष्णाजाज्याश्च चत्वारि राजिकायास्तथैव च ॥ १९ ॥  
 पलप्रमाणं दातव्यं हिंगु लोणानि पंच च ॥  
 आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्षपोष्टौ पलानि च ॥ २० ॥  
 निलतैलस्य तावन्ति सुक्तस्यापि च विंशतिः ॥  
 सिद्धार्थकस्य चत्वारि द्विगुणं मधुनस्तथा ॥ २१ ॥  
 एकीकृत्य दृढे भांडे धान्यमध्ये विनिक्षिपेत् ॥  
 द्वादशाहात्समुद्धृत्य प्रातः स्वादेद्यथावलम् ॥ २२ ॥  
 सुरां सौवीरकं चापि मधु वापि विवेक्षतः ॥  
 जीर्णे यथेप्सितं भोज्यं दधिपिष्टकवर्जितम् ॥ २३ ॥  
 एष मासोपयोगेन सर्वव्याधिहरो भवेत् ॥  
 अशीतिवातरोगाश्च चत्वारिंशच्च पित्तजाः ॥ २४ ॥  
 विंशतिः श्लेष्मजास्तद्वन्नश्यन्ते तस्य सेवनात् ॥  
 योनिगूलं प्रमेहांश्च कुष्ठोदरभगंदरान् ॥ २५ ॥  
 अर्शोगुल्मक्षयाश्चापि जयेद्वलरुचिप्रदः ॥  
 इति महारसो नर्पिडः योगरत्नावलीतः ॥  
 महारास्त्रादिना जग्धो योगराजो हि गुग्गुलुः ॥  
 आमवातं कटीपृष्ठजानुजंघग्रहं जयेत् ॥ २६ ॥  
 अत्रापि वातनाशनोरसो योज्यः ॥  
 दधिमत्स्यगुडक्षीरपोतकीमापपिष्टकम् ॥

वर्जयेदामवातार्तो मांसमानूपजं च यत् ॥ २७ ॥

अभिष्यंदकरा ये च ये चान्ये गुरुपिच्छलाः ॥

वर्जनीयाः प्रयत्नेन ह्यामवातार्दितैर्नरैः ॥ २८ ॥

हितं यूपं च कौलत्वं कोलायहरिमंथयोः ॥

यवान्नं कोरंदूपान्नं पुराणं शालिषष्टिकम् ॥ २९ ॥

लावकानां तथा मांसं हितं तत्रेण संस्कृतम् ॥

पटोलं गोक्षुरं चैव वरुणं कारवेळकम् ॥ ३० ॥

वास्तुकं शाकैमारीषं शाकं पौनर्नवं हितम् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यामामवातचिकित्सानाम्

द्वाचत्वारिंशस्तरंगः ॥

त्रयश्रत्वारिंशस्तरंगः ।

अथ शूलम् ॥

दोषैः पृथक्समस्तामद्वैः शूलोष्ठया भवेत् ॥

सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायेण पवनो बली ॥ १ ॥

इति वृंदात् ॥

भवेच्छ्वीधान्यातिशयभजनाच्छूलमनिल-

प्रधानं तान्यष्टौ त्रिभिरथ समस्तैश्च युगलैः ॥

अजीर्णैश्च त्वस्मिन्भवति जठरे कुक्षियुगले

हृदि प्रौढाटोपो रुगति न मलानां विसरणम् ॥ २ ॥

वमनं लघनं स्वेदः पाचनं फलवर्तयः ॥

क्षारचूर्णानि गुटिकाः शस्यंते शूलशान्तये ॥ ३ ॥

आशुकारी हि पवनस्तस्मात्तं त्वरया जयेत् ॥

वातस्यानुजयेत्पित्तं पित्तस्यानुजयेत्कफम् ॥ ४ ॥

१ मउर । २ चणा ३ कोशो । ४ वयुआ । ५ मरुता-  
कोशाकचोराई ।

वातात्मकं हंत्यचिरेण शूलं स्नेहेन युक्तस्तु कुलत्थयूषः॥  
 तसैधवव्योषयुतः सलावः सहिगुसौवर्चलदाडिमाद्यः॥५॥  
 विश्वमेरुजं मूलं काथयित्वा जलं पिवेत् ॥  
 हिगुसौवर्चलोपेतं सद्यः शूलनिवारणम् ॥ ६ ॥  
 वामयेत्पित्तशूलार्तं पटोलेक्षुरसादिभिः ॥  
 पश्चाद्विरेचयेत्सम्यक्पित्तद्विर्विरेचनैः ॥ ७ ॥  
 गुडशालियवक्षारं सर्पिर्दुग्धं विरेचनम् ॥  
 जांगलानि च मांसानि भेषजं पित्तशूलिनः ॥ ८ ॥  
 धात्र्या रसं विदार्या वा त्रायंतीगोस्तनांबुना ॥  
 पिवेत्सशर्करं सद्यः पित्तशूलनिवारणम् ॥ ९ ॥  
 श्लेष्मशूलहरी पेया पंचकोलेन साधिता ॥  
 विदारी दाडिमरसः सव्योपलवणान्वितः ॥ १० ॥  
 क्षौद्रयुक्तो निहंत्याशु शूलं दोषत्रयोद्भवम् ॥  
 आमशूले प्रदातव्यं लघुवैश्वानराष्टकम् ॥ ११ ॥  
 इति लघुवैश्वानराष्टकं वृंदात् ॥  
 कणाचूर्णस्य कुडवं पट्टपलं हविषस्तथा ॥  
 पलपोडशकं खंडं शतावर्घ्याः पलाष्टकम् ॥ १२ ॥  
 पलपोडशकं चैव शिवायाः स्वरसस्य च ॥  
 क्षीरप्रस्थद्वये सार्द्धं लेहीभूतं तदुद्धरेत् ॥ १३ ॥  
 त्रिजातमुस्तधान्याकं गुंठी मांसी द्विर्जीरकम् ॥  
 अभयामलकं चैव चूर्णं द्वादशकार्षिकम् ॥ १४ ॥  
 तदर्द्धं मरिचं भागं सारं खदिरमेव च ॥  
 मधुत्रिफलसंयुक्तं स्वादेत्सिद्धं यथावलम् ॥ १५ ॥  
 शूलारोचकद्विजासच्छर्दिपित्ताम्लरोगनुत् ॥

अग्निसंदीपनी हृद्या खंडपिप्पलिका मता ॥ १६ ॥

इति खंडपिप्पलिका ॥

भागो रसस्य भागश्च हेमः पिष्टि विधाय च ॥

तथा द्वादशभागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ १७ ॥

ऊर्ध्वाधो गंधकं दत्वा पलमात्रं समंततः ॥

क्षारस्य मृगशृंगस्य चूर्णं योज्यं समंततः ॥ १८ ॥

सिंचेन्मत्स्याक्षिनीरेण पक्त्वा यामचतुष्टयम् ॥

पिवेच्छूलहरः सूतो भवेत्त्रिपुरभैरवः ॥ १९ ॥

माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोस्य परिणामजे ॥

अन्येष्वेरंडतैलेन हिंगुत्रययुतो हितः ॥ २० ॥

इति त्रिपुरभैरवो रसः ॥

हिंगूग्राजं ब्वरिश्रीपंदुजरैणजर्गत्कृष्णकृष्णाभयार्या

बह्विश्रीदीप्यचूर्णं प्रथमत उपरिष्टाल्लवेनाभिवृद्धम् ॥

सेव्यं तप्तांभसैतद्विगुणगुडयुतं हंति वातार्शसीद्वि-

त्पीडां गूलप्रमेहारुचिगरगलरुकुष्ठगुल्मांश्च कासम् ॥ २१ ॥

सेयं शार्दूलगुटिका धन्वंतरिकृता हरेत् ॥

रक्ष.पिशाचाहिभयक्लैव्यश्वांसामपांडुताः ॥ २२ ॥

इति शार्दूलगुटिका ॥

शिवा वचा हिंगु विषा कर्लिगं रुचकं समम् ॥

कर्पमुष्णांबुना पेयमनुपानं हि शूलिभिः ॥ २३ ॥

क्षारं कपर्दाद्विपसैधवौ च व्योषं चसंमर्द्य भुजंगवल्क्याः ॥

रसेन गुंजाप्रमितः प्रदिष्टः समीरगूलेभहरिः प्रचंडः ॥ २४ ॥

इति गूलगजकेसरी रसः ॥

रसवल्लिगगनार्कं वेतसाम्लं विपं स्या-  
त्समामिति पृथगेतद्भावयेद्धस्रमेतैः ॥

कनकभुजगवल्लीकंटकारीजंयाद्भिः  
सकमलतिलवातामुष्टिराष्ट्रं चतुष्वरैः ॥ २५ ॥  
अरुणसदृशशकैर्मातुलान्या यथोज्यः ॥

पटुगणरसवह्या भावयेदार्द्रकाद्भिः  
दहनवदनसंज्ञो वल्लमात्रो निहन्ति ॥  
प्रवलपवनशूलं तद्विकारानशेषान् ॥ २६ ॥

इत्यग्निमुखो रसः रसरत्नप्रदीपात् ॥  
व्योपग्रंधिवचाग्निर्हिगुजरंणद्वंद्वं विपं निष्क-  
द्रावैरार्द्रकजै रसैर्विमृदितं तुल्यं मरीचोपमा ॥  
कर्तव्या गुटिकाथ सा दिनमुखे भुक्ता कपोष्णांगुना ॥  
शूलं तृष्टविधं निहन्ति सहसा सूर्यप्रभानामतः ॥ २७ ॥  
इति सूर्यप्रभा वटी ॥

व्यायामं मैथुनं मद्यं लपणं कटुकानि च ॥  
वेगरोधं शुचं क्रोधं वज्रजयेच्छूलवाचरः ॥ २८ ॥  
इति श्रीयोगतरंगिण्यां शूलचिकित्सा नाम  
त्रयभत्यां रिशस्तरंगः ॥

धनुश्चन्द्रारिगरत्नायः

अग्नेर्जायति पच्छूलं तदेव पाणिनामजम् ॥  
साऽऽध्मानाऽऽटोपपिण्मूत्रग्रंथमष्टविधं तथा ॥ १ ॥  
अलंकारान् ॥

लपणं प्रथमं कुर्याद्वननं गरिगेचनम् ॥  
वास्तिरुमापरं चात्र पक्तिशूले प्रशम्यते ॥ २ ॥

नागरतिलगुडकल्कं पथसा संसाध्य यः पुमानद्यात् ॥

उग्रं परिणतिगूलं सप्ताहाच्चाशमायाति ॥ ३ ॥

शंबूकजं भस्म पीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात् ॥

पक्तिजं विनिहंत्येव गूलं विष्णुरिवासुरान् ॥ ४ ॥

लोहकिट्टपलान्यष्टौ गोमूत्राद्वाढके पचेत् ॥

क्षीरप्रस्थे च तत्सिद्धं पक्तिगूलहरं परम् ॥ ५ ॥

इति क्षीरमंडूरः ॥

कृष्णाभयालोहचूर्णं लिह्यात्समधुशर्करम् ॥

परिणामभवं गूलं सद्यो हन्ति न संशयः ॥ ६ ॥

विडंगं चित्रकं चव्यं त्रिफला त्र्यूपणानि च ॥

नवभागानि चैतानि लोहकिट्टसमानि च ॥ ७ ॥

गोमूत्रं द्विगुणं दत्त्वा मूत्राद्विगुणको गुडः ॥

शनैर्मृदाग्निना पक्त्वा सुतिष्ठं पिंडतां गतम् ॥ ८ ॥

स्निग्धभाडि विनिक्षिप्य भक्षयेत्कोलमात्रया ॥

प्राङ्मध्यान्ते क्रमेणैव भोजनस्य प्रयोजितः ॥ ९ ॥

योगोऽयं शमयत्याशु पक्तिगूलं सुदारुणम् ॥

कामलां पांडुरोगं च शोफं मेदोनिलार्शसी ॥

शूलार्तानां कृपाहेतोस्तारया प्रकटीकृतः ॥ १० ॥

इति तारामंडूरः वृंदात् ॥

शुद्धं सूतं विषं गंधं पलांशं मर्दयेद्दृढम् ॥

मरिचं पिप्पली गुंठी हिंगु चैव द्वयंद्वयम् ॥ ११ ॥

पलायकं पटूनां च चिंचाक्षारं पलायकम् ॥

सप्तवारं शंखभस्म जंवीराम्लेन सेचयेत् ॥ १२ ॥

पलायकं च संयोज्यं तत्सर्वं निबुकद्रवैः ॥

दिनं मर्द्य कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥ १३ ॥

अजीर्णोदरमंदाग्निमसाध्यमपि नाशयेत् ॥  
 गूलदावानलारव्योयं रसो जीर्णशिरोग्रहान् ॥ ११ ॥

इति गूलदावानलो रसः सारसंग्रहात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां परिणामगूलचिकित्सानाम्  
 चतुश्चत्वारिंशस्तरंगः ।

पञ्चचत्वारिंशस्तरंगः ।

अथोदावर्तः ॥

वातविण्मूत्रजृम्भाशुक्षबोद्गारवर्मीद्रियैः ॥

क्षुत्तृष्णाश्वासनिद्राणां धृत्योदावर्तसंभवः ॥ १ ॥

हरीतकी यवक्षारपीलुनी त्रिवृतः तथा ॥

साज्यं चूर्णं पिवेदेपामुदावर्तनिवर्तकम् ॥ २ ॥

हिङ्गु कुष्ठं वचा सर्जि विडं चेति द्विरुत्तरम् ॥

पीतं मद्येन तच्चूर्णमुदावर्तहरं परम् ॥ ३ ॥

मदनं पिप्पली कुष्ठं वचा गौराश्च सर्पपाः ॥

गुडक्षारसमायुक्ता फलवर्तिः प्रशस्यते ॥ ४ ॥

खण्डपलं त्रिवृतासममुपकुल्याकर्पचूर्णितं श्लक्ष्णम् ॥

प्राग्भोजनस्य समधु विडालपदकं लिङ्हेत्प्राज्ञः ॥ ५ ॥

एतद्वाढपुरीषे पित्ते च कफे च विनियोग्यम् ॥

स्नादुर्नृपयोग्योयं चूर्णो नाराचको नाम्ना ॥ ६ ॥

इति नाराचकं चूर्णं वृन्दान् ॥

मुरां सौषर्चलवर्ती मूत्रे त्वभिंहते पिवेत् ॥

पञ्चमूलीगुतं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा ॥ ७ ॥

मूत्ररुद्धाश्मरीविंधे प्रयुंजीत भिषग्वरः ॥

अहस्वेदरुदावर्तं जृम्भाजं समुपाचरेत् ॥ ८ ॥

मरिचाद्यं जनैर्धूमैर्निनिमेपावलोकनैः ॥  
 अस्त्रमोक्षोऽस्त्रजे कार्यः स्निग्धस्नेहनयत्नतः ॥ ३ ॥  
 क्षवजे सूत्रवर्त्या च घ्राणचर्या नयेत्क्षवम् ॥  
 उद्गारजे क्रमश्वात्र स्नेहिकं धूममाचरेत् ॥ १० ॥  
 छर्दिघाते यथादोषं नालं स्नेहादिभिर्जयेत् ॥  
 शुक्रोदावर्तिनं वैद्यो रमयेत्सह कांतया ॥ ११ ॥  
 क्षुब्धिघाते हि संस्निग्धं वृष्यमल्पं च भोजनम् ॥  
 तृष्णाघाते पिवेन्मद्यं यवागूं स्वादुशीतलाम् ॥ १२ ॥  
 रसेनाद्यात्तु विश्रान्तः श्रमश्वासादितो नरः ॥  
 निद्राघाते पिवेत्क्षीरं माहिषं रजनीमुखे ॥ १३ ॥  
 तिलतैलेन संमृज्य पत्तले शयनं चरेत् ॥  
 राढधूमंविडव्योषगुडमूत्रैर्विपाचिता ॥ १४ ॥  
 गुर्वेगुष्ठसमावर्तिर्विवंधानाहगूलनूत् ॥ १५ ॥  
 आमाशये गूलमथो गुरुत्वं दृष्ट्वातद्गारविघातनं च ॥  
 स्तंभःकटीपृष्ठपुरीषमूत्रे शूलोऽथ मूर्छाशक्तौ वमिश्च ॥  
 श्वासश्च पक्काशयजे भवंति तथालसोक्तानि च लक्षणानि  
 तृष्णादितं परिक्षिप्तं क्षीणं गूलैरुपद्रुतम् ॥  
 शकृद्वमित्वं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत् ॥ १७ ॥

अत्र क्रव्यादो रसो देयः ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां उदावर्तचिकित्सा नाम

पंचचत्वारिंशस्तरंगः

षट्चत्वारिंशस्तरंगः ।

अथ गुलमः ॥

दृढस्योरंतरे ग्रंथिर्जायते पञ्चलाचलः ॥



नाभेरधस्तात्संजातः संचारी यदि वा ऽचलः ॥ १ ॥  
 स गुल्मः पंचधा दोषैः सर्वैश्चासृग्भवोऽपि सः ॥  
 लंघनं दीपनं स्निग्धमुष्णं वातानुलोमनम् ॥  
 वृंहणं च भवेदन्नं तद्धितं सर्वगुल्मिनाम् ॥ २ ॥  
 सर्जिकाकुष्ठसहितः क्षारः केतकिजोपि वा ॥  
 पीतस्तैलेन शमयेद्गुल्मं पवनसंभवम् ॥ ३ ॥  
 सुखोष्णजांगलरसः सुस्निग्धोव्यक्तसैंधवः ॥  
 कटुत्रिकसमायुक्तो हितः पानेषु गुल्मिनः ॥ ४ ॥  
 काकोल्यादिसुसिद्धेन सर्पिषा पित्तगुल्मकम् ॥  
 जयेच्च शीतलैरेवोपचारैः पित्तनाशनैः ॥ ५ ॥  
 त्रिफला त्रिवृता दंती दशमूलं पलोन्मितम् ॥  
 जले चतुर्गुणे पक्त्वा चतुर्भागस्थिते रसे ॥ ६ ॥  
 सर्पिरैरंडजं तैलं क्षीरं चैकत्र साधयेत् ॥  
 संतिद्धो मिश्रकः स्नेहः सक्षौद्रः कफगुल्मनुत् ॥ ७ ॥  
 कफवातविकारेषु कुष्ठष्ठीहोदरेषु च ॥  
 प्रयोज्यो मिश्रकस्नेहो योनिगूलेषु चाधिकम् ॥ ८ ॥  
 इति मिश्रकः स्नेहः ॥  
 क्षारद्वयानलव्योपनीली लवणपंचकम् ॥  
 चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥ ९ ॥  
 तिलकाथो गुडव्योषाह्निगुभांर्गीयुतो भवेत् ॥  
 पीतो रक्तभवे गुल्मे नष्टे पुष्पे च योपिताम् ॥ १० ॥  
 सक्षारव्यूषणं मद्यं प्रापिवेदस्त्रगुल्मनुत् ॥  
 पलाशक्षारतोयेन सिद्धं सर्पिः पिवेच्च सा ॥ ११ ॥  
 नादेयीकुटजाऽर्कशिथुवृहतीस्तुग्विल्वभल्लातक-

व्याघ्री किंशुकपारिभद्रकजटाऽपामार्गनीपाऽग्निकान् ॥

वातामुष्कं कपाटलान् सलवणान्दग्ध्वा रसं पाचितं  
हिंवादिप्रतिवापमेतदुदितं गुल्मोदराष्टील्लिपु ॥ १२ ॥

इति नादेयोरसः ॥

क्षीरं वज्रतरुद्भवं दशपलं तावत्पयोप्यऽर्कजं  
प्रत्येकं पलपंचकं च लवणं क्षारं च पंचौत्तमकम् ॥  
विंशत्यार्कदलैर्युतं पवित्रोभिन्नैश्चतुर्भिः पलै-  
र्मृन्दांडे गुरुमार्गतो गजपुटे बह्वौ विपकीकृतम् ॥ १३ ॥  
संचूर्णयथ कटुत्रयं त्रिफलमप्येकं फलं रामठं  
सर्वं वस्त्रपुनीतमेतदमले पात्रे सुखं स्थापयेत् ॥  
वज्रक्षारमिदं निहन्ति सकलान्गुल्मानुदग्रान् नृणां  
पीनं तक्रयुतं प्रभातसमये कर्पप्रमाणं क्रमात् ॥ १४ ॥  
मदाग्निं सविसूचिकामरुचितामापांडुतां क्षीणतां  
श्वासं कासमजीर्णशैत्यपवनव्याधीन्वलासोद्भवान् ॥  
वज्रक्षारमिदं निवार्य भिषजां कीर्तिं विधत्तेतरां  
मांसं द्रावयति स्फुटं घटिकयोर्द्वे किमञ्च पुनः ॥ १५ ॥

इति वज्रक्षारं ॥

हिंशुग्रंथिकधान्यजीरकवचाचव्याग्रिपाठासटी ॥  
क्षुत्पान्तं लज्जतद्रयं त्रिकटुजं क्षास्त्वयं दाडिमम् ॥  
पथ्यापौष्करवेतसाम्लहपुषाऽजाज्यस्तदेभिः कृतं  
चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसे स्याद्दीजपूरस्य च ॥ १६ ॥  
आध्मानग्रहणीविकारगुदजान्गुल्मानुदावर्तिकान्  
प्रत्याध्मानगुदोदराश्मरियुतांस्तूणीर्द्वियारोचकान् ॥

ऊरुस्तंभमतिभ्रमं च मनसो वाधिर्यमष्ठीलिकां  
प्रत्यष्ठीलिकिकामथापहरते प्राक्पीतमुष्णांबुना ॥ १७ ॥

हृत्कुक्षवंक्षणकटीजठरांतरेषु-

वस्तिस्तनांत्यफलकेषु च पार्श्वयोश्च ॥

शूलानि नाशयति वातवलासजानि

हिंग्वादि मांद्यमिदमाश्विनसंहितायाम् ॥ १८ ॥

इति हिंग्वाद्यं चूर्णम् ॥

बह्वैरं मूलकं मत्स्याञ्जुष्कशाकानि द्वैदलम् ॥

न खादेद्वास्तुकं गुल्मी मधुराणि फलानि च ॥ १९ ॥

विश्वहिंगुविडैः सार्द्धं कव्यादो भक्षितो रसः ॥

गुल्मानशेषान् ग्रीहांश्च विद्रधीनपि नाशयेत् ॥ २० ॥

शंखद्रावो जयत्याशु पृथ्यासैयवसंयुतः ॥

दु साध्यानपि गुल्मांश्च पृथुलोपद्रवोत्कटान् ॥ २१ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां गुल्मचिकीत्सानाम

पद्चत्वारिंशस्तरंगः

सप्तश्वत्वारिंशस्तरंगः

अथ हृद्रोगः ॥

शोषयित्वा रसं दोषा विगुणा हृदयंगताः ॥

हृदि वायां प्रकुर्वन्ति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥ १ ॥

घृतेन दुग्धेन गुडांभसा वा पिबन्ति चूर्णं ककुभत्वचो ये

हृद्रोगजीर्णज्वररक्तपित्तं हत्वा भवेयुश्चिरजीविनस्ते ॥ २ ॥

हिंगूग्रगधाविडविश्वरुग्णा कुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ॥

पिबेच्च सौवर्चलपौष्कराढ्यं यवांभसा शूलहृदामयघ्नम् ॥ ३ ॥

कृमिजे च पिबेन्मूत्रं विडंगामयसंयुतम् ॥

हृदि स्थिताः पतंत्येव मध्यस्थाः कृमयो नृणाम् ॥ ४ ॥

इति वृंदात् ॥

● वाल्हीकविश्वदहनामयथावशूक-  
पथ्यावचाविडकणारुचैर्निहन्यात् ॥  
सूतः सपुष्करजटो यत्रवारिपीतो  
हृद्रोगमग्निविकलत्वमतिप्रवृद्धम् ॥ ५ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां हृद्रोगचिकित्सानाम सप्तच-  
त्वारिंशस्तरंगः

अष्टचत्वारिंशस्तरंगः

अथ मूत्रकृच्छ्रम् ॥

दृढकृतमस्तेस्तैः शुक्रविद्वेधादभिधाततः ॥

अश्मर्माश्वाद्येति स्यान्मूत्रकृच्छ्ररुजाकरः ॥ १ ॥

मूत्रकृच्छ्रः स यः कृच्छ्रान्मूत्रयेदस्तिरोधकृत् ॥

अभ्यंजनस्नेहनिरूहवस्तिस्वेदोपैनाहोत्तरवस्तिसेकान् ॥

स्थिरादिभिर्वातहैरश्वतिष्ठान्दद्याद्रसांश्चानिलमूत्रकृच्छ्रे ॥

अमृता नागरं धात्री वाजिगंधा त्रिकैटकम् ॥

प्रपिवेद्वातरोगार्तः गूलवान्मूत्रकृच्छ्रवान् ॥ ३ ॥

सेकावगाहाः शिशिराः प्रदेहाः

श्रेष्ठो विधिर्वस्तिपयोविकाराः ॥

द्राक्षाविदारीक्षुरसैर्घृतं च

कृच्छ्रेषु पित्तप्रभवेषु कार्यम् ॥ ४ ॥

कुशः काशः शरो दर्भ इक्षुश्चेति तृणोद्भवम् ॥

पित्तकृच्छ्रहरं पंचमूलं वस्तिविशोधनम् ॥ ५ ॥

एतत्सिद्धं पयः पीतं मेढ्रं हन्ति शोणितम् ॥

मूत्रेण सुरया वापि कदलीस्वरसेन वा ॥ ६ ॥

कफकृच्छ्रविनाशाय सूक्ष्मां पिष्ट्वा त्रुटीं पिवेत् ॥

• यवक्षारसमायुक्तं पिवेत्तक्रं प्रकामतः ॥ ७ ॥

मूत्रकृच्छ्रविनाशाय तथैवाश्मरिनाशनम् ॥

तत्राभिघातजे कुर्यात्सद्यो व्रणचिकित्सितम् ॥ ८ ॥

लेहं शुक्रविवंधोत्थे शिलाजतु समाक्षिकम् ॥

एलाश्मभेदकशिलाजतुपिप्पलीनां

चूर्णानि तंदुलजलैर्ललितानि पीत्वा ॥

दद्याद्बुडेन सहितान्यबलोद्ध धी ना-

नासन्नमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥ ९ ॥

निविग्धिकारसो वापि सक्षौद्रः कृच्छ्रनाशनः

सितातुल्यो यवक्षारः सर्वकृच्छ्रविनाशनः ॥ १० ॥

इतिबृंदात् ॥

प्रत्येकं तोलमादाय सूतं ताम्रं तथाभ्रकम् ॥

द्विगुणं गंधकं चैव कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥ ११ ॥

मुस्ता दाडिमतोयेन केतकीपुष्पवारिणा ॥

सहदेव्याः कुमार्याश्च पर्पटोशीरयोरपि ॥ १२ ॥

तालमूल्याश्चर्वेर्याश्च भावयित्वा दिनंदिनम् ॥

तिक्तागुडचिकासत्त्वं पर्पटोशीरमागधी ॥ १३ ॥

श्रीखंडं सारिवा चैषां समानं चूर्णकं क्षिपेत् ॥

द्राक्षापलकपायेण सप्तधा परिभावयेत् ॥ १४ ॥

छायाशुष्कं विधायथ बटी कार्या चणोपमा ॥  
 महाचंद्रकलानाम्ना रसेंद्रोयं निरूपितः ॥ १५ ॥  
 अम्लपित्तप्रशमनः प्रवरध्वंसकारकः ॥  
 अंतर्बाह्यमहादाहविध्वंसनघनाघनः ॥ १६ ॥  
 ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥  
 रक्तमूर्छारक्तपित्ततापज्वरवनानलः ॥ १७ ॥  
 मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि प्रमेहानपि दुस्तरान् ॥  
 हरत्येष रसो नूनं महाचंद्रकलाभिधः ॥ १८ ॥

इति सारसंग्रहात्

इति श्रीयोगतरंगिण्यां मूत्रकृच्छ्रचिकित्सा-  
 नामाष्टचत्वारिंशत्तरंगः ॥

एकोनपञ्चाशत्तरङ्गः ।

अथ मूत्राघातः ॥

मूत्रनाडीगतैर्दोषैरल्पमल्पं सवेदनम् ॥  
 यदा प्रवर्तते मूत्रं मूत्राघातः स उच्यते ॥ १ ॥  
 तद्भेदा वातकुंडलिकादयस्त्रयोदश ॥  
 पटोलाघावशूकाच्च पारिभद्रानिलादपि ॥  
 क्षारोदकेन मदिरां त्वगेलोपणसंयुताम् ॥ २ ॥  
 पिबेद्दुडोदकं सम्यग्लिप्तादेतान्पृथक्पृथक् ॥  
 त्रिफलाकल्कसंयुक्तं लवणं चापि यः पिबेत् ॥ ३ ॥  
 निविग्धिकायाः स्वरसं पिबेद्वातांतवत्स्रुतम् ॥  
 जले कुंकुमकल्कं वा सक्षौद्रमुपितं निशि ॥ ४ ॥  
 र्क्षाणामतिप्रसंगेन शोणितं यस्य तिष्ठति ॥

चित्रकं सारिवा चैव बला कालापि सारिवा॥  
 द्राक्षाविशालापिप्पल्यस्तथा च त्रिफला भवेत् ॥ ६ ॥  
 तथैव मधुकं दद्यात्पुष्टान्यामलकानि च ॥  
 घृताढकं पचेदेतैः कल्कैरक्षसमन्वितैः ॥ ७ ॥  
 क्षीरद्रोणे जलद्रोणे तत्सिद्धमवतारयेत् ॥  
 शीतं परिशृतं चैव शर्कराप्रस्थसंयुतम् ॥ ८ ॥  
 तुर्गोक्षीर्या च तत्सर्वं मतिमान्परिमिश्रयेत् ॥  
 ततो मितं पिवेत्काले यथादोषं यथाबलम् ॥ ९ ॥  
 वातरेताः पित्तरेताः श्लेष्मरेताश्च यो नरः ॥  
 रक्तरता ग्रंथिरेताः पिवेदिच्छन्नऽरोगताम् ॥ १० ॥  
 सर्पिरेतत्प्रयुंजीत स्त्रीगर्भं लभतेऽचिरात् ॥  
 असृग्दोषे योनिदोषे मूत्रदोषे तथैव च ॥  
 प्रयोक्तव्यमिदं सर्पिश्चित्रकाद्यं सदा बुधैः ॥ ११ ॥

इति चित्रकाद्यं घृतं चरकात् ॥

अत्रापि चंद्रकलारसः प्रशस्यते ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां मूत्राघातविकित्ता नाम

पद्मचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४६ ॥

पञ्चाशस्तरङ्गः ।

अथाश्मरी ॥

निरुध्य मूत्रमार्गं या यातनां जनयेद्भृशम् ॥

कटीवस्तिप्रदेशेषु साश्मरीति निगद्यते ॥ १ ॥

इति रसरत्नप्रदीपान् ॥

विशेषैर्दोषागतं सशुक्रं मूत्रं सपित्तं पवनः कफं वा ॥

पदातदाश्मर्युपजायते तु क्रमेण पित्तेष्विव रोचना गोः २  
इति रुग्निनिश्चयात् ॥

वरुणस्य त्वचं श्रेष्ठां गुंठीगोक्षुरसंयुताम् ॥

यवक्षारगुडं दत्वा काथयित्वा तु तं पिवेत् ॥

अश्मरीं वातजां हन्ति चिरकालानुबन्धिनीम् ॥ ३ ॥

वीरतरुसहचरद्वयदर्भवृक्षादनीगुंद्वांनलकुशकाशाग्नि-  
मन्थमोरटावसुकवसिरभल्लूककुरंटकेंदीवरकपोतचक्राश्व-  
दंष्ट्रा चेति ॥

वीरतर्वादिरित्येष गणो मारुतनाशनः ॥

अश्मरीशर्कराकृच्छ्रमूत्राघातरुजापहः ॥ ४ ॥

इति वीरतर्वादिः सुश्रुतात् ॥

वीरतर्वादिकं काथं तृणपंचसमन्वितम् ॥

भिनत्ति पित्तसंभूतामश्मरीं क्षिप्रमेव तु ॥ ५ ॥

वरुणत्वक्छिलाभेदगुंठीगोक्षुरकैः कृतः ॥

कषायः क्षीरसंयुक्तः शर्करां प्रभिनर्त्यरम् ॥ ६ ॥

क्षारो निपीतस्तिलनालजातः

समाक्षिकः क्षीरयुतस्त्रिरात्रात् ॥

हन्त्यश्मरीं सौधुविमिश्रितं वा

निपीयमानं रुचकं प्रयत्नात् ॥ ७ ॥

गोपालकर्कटीमूलं पिष्टं पर्युपितांभसा ॥

पीयमानं त्रिरात्रेण पातयेच्चाश्मरीं हठात् ॥ ८ ॥

इति राजमार्तंडात् ॥



एलोपकुल्यामधुकाश्मभेदकौंतीश्वदंष्ट्रावृषकोरुबूकैः ॥  
 गृतं पिवेदश्मजतु प्रगाढं सशर्करे साश्मरीमूत्ररुच्छ्रे ॥ १

इति योगज्ञातात्

हरीतकी गोक्षुरराजवृक्षपाषाणभिद्रन्वयवासकानाम् ॥

क्वाथं पिवेच्छर्करयावगाढं सशर्करे साश्मरीमूत्ररुच्छ्रे ॥ १०

निर्गुडिकाभिर्वलिसूतताम्रं

विमर्द्य गोलं सिकताख्ययंत्रे ॥

पक्कास्य वल्लः किल मातुलुंगी-

जलैर्निहंत्यश्मरिरोगमुग्रम् ॥ ११ ॥

इति त्रिविक्रमो रसः रसरत्नप्रदीपात् ॥

अत्रापि चंद्रकलैव रसो योज्यः ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां अश्मरीचिकित्सा नाम

पंचाशस्तरंगः ॥ ५० ॥

एकपञ्चाशस्तरंगः ।

\* अथ प्रमेहाः ॥

दशपट् चापि चत्वारः कफपित्तसमीरजाः ॥

साध्या घाप्या आसाध्यास्ते प्रमेहाः कमशो नृणाम् ॥ १

श्यामाककोद्रवोदालगोधूमचणकाढकी ॥

कुलत्थाश्च हिता भोज्ये मेहिनां देहिनां सदा ॥ २ ॥

सौवीरकं सूरं मुक्तं तैलं क्षीरं गुडं घृतम् ॥

अम्लेक्षुरसपिष्टान्नं मेहे क्षेतानि वर्जयेत् ॥ ३ ॥

इति वृंदात्

१ मटर । २ अरहर ।

\* औषध इन्दीजुलावकी ॥ जीरोस्येततोले १ सोरगेले १ रेयतनीनी तोले

१ हरबोती तोले १ एषां चूर्णं मासे ६ तथा ७ इतिन्यादिकाधेन दद्यात् ॥

सर्वप्रमेहमूत्ररुच्छ्रेमुत्रापाताश्मर्यादिविषु नशस्तम् ।

कलत्रिकं दारुनिशां विशालां  
मुस्तां च निःकाथ्य निशांसकल्कम् ॥  
पिवेत्कषायं मधुसंयुतं च  
सर्वप्रमेहेषु समुत्थितेषु ॥ ४ ॥

इति योगशानात् ॥

न्यग्रोधोदुंवराश्वत्थस्योनाकारग्वधासनम् ॥  
आम्रं कपित्थं जंबूं च प्रियालं ककुभं धवम् ॥ ५ ॥  
मधूकं मधुकं लोध्रं वरुणं पारिभद्रकम् ॥  
पटोलं मेघशृंगी च दंती चित्रकमानकम् ॥ ६ ॥  
करंजं त्रिफला शंक्रं भृङ्गातकफलानि च ॥  
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ७ ॥  
न्यग्रोधाद्यमिदं चूर्णं मधुना सह लेहयेत् ॥  
फलत्रयं चानुपिवेत्तेन मूत्रं विशुध्यति ॥ ८ ॥  
एतेन विंशतिर्मेहा मूत्ररुच्छ्राणि यानि च ॥  
प्रशमं यांति योगेन पिडिका न च जायते ॥ ९ ॥

इति न्यग्रोधाद्यं चूर्णं वृंदात् ॥

शिलाजतु नरः पीत्वा प्रातः क्षीरसितायुतम् ॥  
मुच्यते सर्वमेहेभ्यस्त्रिसप्तदिवसैर्नरः ॥ १० ॥  
शरावकाद्याः पिडिकाः शोधयेच्छोथवद्भिषक् ॥  
पक्त्वा चिकित्सेद्भ्रणवत्संधिमर्मसमुद्भवाः ॥ ११ ॥  
वेहैव्योषफलत्रयत्रिलवणद्विक्षारचव्यानल-  
श्यामापिप्पलिमूलमुस्तकसटीमौक्षीकधातुत्वचः ॥  
पट्टंधामरदारुवारणकणाभूर्निवदंतीनिशा-

पत्रैलातिविषापिचुप्रमितयो लोहस्य कर्षाष्टकम् ॥ १२ ॥  
 त्वक्क्षीरी पालिका पुरोर्दशपलानष्टौ शिलाजन्मनो  
 मीनांडघाः कुडवः कृतेति गुटिका संयोज्य सर्वं भिषक् ॥  
 तत्रैकां प्रतिवासरं हि सघृतक्षौद्रेण लिह्यादिमाम् ॥  
 तक्रं मस्तु पयो घृतं मधुरसं पश्चात्पिवेन्मात्रया ॥ १३ ॥  
 अशीसि प्रदरं ज्वरं च विषमं नाडीव्रणानश्मरीं  
 कृच्छ्रं विद्रधिमाग्निमांघ्रमुदरं पांड्वामयं कामलाम् ॥  
 यक्ष्माणं सभगंदरं सपिडकागुल्मप्रमेहारुची  
 रेतोदोषमुरःक्षतं कफमरुत्पित्तार्तिमुग्रां जयेत् ॥ १४ ॥  
 वृद्धं संजनयेद्युवानमसमौजस्कं बलं वर्द्धये-  
 देतस्या न निषिद्धमन्नमसकृन्नाध्वागमं मैथुनम् ॥  
 विख्याता गुटिकेयमर्चिततरा चंद्रप्रभा नामतः  
 सांद्रा नंदकरी तनोति च रुचिं चंद्रेणतुल्यां तनौ ॥ १५ ॥

इति चंद्रप्रभागुटिका योगरत्नावलीतः ॥

हेमांभोधरचंदनं त्रिकदुकं धात्री प्रियालं कुटू-  
 र्मज्जानस्त्रिसुगंधि जीरकयुतं गूंगाटकं वंशजम् ॥  
 जातीकोशलबंगधान्यकयुतं प्रत्येककर्पद्वयम्  
 पूगस्याष्टपलं विचूर्ण्य च पयःप्रस्थत्रये सर्पिषः ॥ १६ ॥  
 दद्याद्दोः कुडवं सितार्थकतुलां धात्री वरी ह्यंजली  
 मंदाग्नौ विषचेद्भिषक्शुभदिने सुस्निग्धभांडे क्षिपेत् ॥  
 यः स्वादेद्दिनशः प्रभातसमये मेहांश्च जीर्णज्वरं  
 पित्तं साम्लमसृक्स्थुतिं गुददृशोर्पक्वादिनासासु च ॥ १७ ॥  
 मंदाग्निं च विजित्य मुष्टिमतुलां कुर्याच्च शुक्रप्रदं

पूगं गर्भकरं परं गदहरं स्त्रीणामसृग्दोषजित् ॥ १८ ॥

इति पूगीपाकः योगरत्नावलीतः ॥

श्रीखंडं त्रिसुगंधिकेसरकणा गुंठी बरी चांबुदं  
गंगाटं जलजं प्रियालवदरीधान्यज्जर्वाजं तुगा ॥  
द्राक्षाजीरकथान्यकं ससुमनःपुष्पं च जातीदलं  
गुद्धारं दरदं पलार्धकमिदं सन्नारिकेरात्रंमत् ॥ १९ ॥

पूगं चाष्टपलं च सौरभपयः प्रस्थत्रये संपचेत्  
पश्चादामलकी बरी जलशरावार्धेथ पिष्टीकृतम् ॥  
गुष्कीकृत्य कटाहके च सघृते मंदाग्निना चूर्णयुक्  
वंगव्योमपलार्धकं तु तुलया खंडेन पाकीकृतम् ॥ २० ॥

भुक्तं प्रातरिदं प्रमेहपवनाध्मानानि गूलानि च  
क्षेप्यं दैन्यमसृक्स्तुतिं मुखगुदश्रोत्राक्षिलोमोद्भवाम् ॥  
हन्याद्रोगजराविपत्तिशमनं मंदाग्निद्वंद्वहणं  
बल्यं वृद्धिकरं प्रमोदजनकं पूगं न किं सेव्यते ॥ २१ ॥

इति पूगीपाकः सारसंग्रहात्

दंतीदारुसठीशिलाह्वदहनैर्भस्मातकार्काभया-  
स्तुग्वर्पाश्रकरंजयुग्मवरुणैर्युक्पंचमूलीयुतैः ॥  
इत्येभिर्दशपालिकैः सूतमपां द्रोणे पृथक्प्रस्थिकै-  
रेभिश्चाभिकुलत्यकोलकयवैः पादावशोपीकृते ॥ २२ ॥

अस्मिन्नीपकिरातरोहिपकणाकंपिह्यविश्वौषधै-  
र्भागीचव्यगजाह्वपिप्पलियुतैरेभिश्च सिद्धं घृतम् ॥  
एतन्मेहहरं क्षयक्षयकरं हिकापहं गुल्मजित्  
पांडुत्वकप्रतिधातिद्विदुरुजः प्रध्वंसि धान्वन्तरम् ॥ २३ ॥

इति धान्वंतरं धृतं चिकित्सातः ॥

सूतं कांतं गंधतीक्ष्णे ताप्यं व्योषं फलत्रिकम् ॥

शिलाजंतु शिला कोलबीजं रात्रिः कपित्थजम् ॥ २४ ॥

त्रिःसप्तकृत्वो भृंगाद्भिर्भाक्वेन्निष्कसंज्ञकः ॥

मेघनादारव्यसूतश्च सर्वमेहान्प्रणाशयेत् ॥ २५ ॥

महानिबस्य बीजानि पेपयेत्तंडुलांबुना ॥

सधृतान्यचिराद्बन्धुः पानान्मेहांश्चिरंतनान् ॥ २६ ॥

इति मेघनादो रसः ॥

सूताध्रमामलजलैः सप्ताहं भावयेद्रसम् ॥

हरिशंकरसंज्ञः स्याद्भुक्तः सर्वप्रमेहजित् ॥ २७ ॥

इति हरिशंकरो रसः ॥

रसस्य भस्मना तुल्यं वंगभस्म प्रकल्पयेत् ॥

अस्य गुंजाद्वयं हन्ति मेहान्क्षौद्रसमन्वितम् ॥ २८ ॥

इति वंगेश्वरो रसः ॥

एला सकर्पूरसिता सधात्री

जातीफलं गोक्षुरशाल्मलीत्वक् ॥

सूताध्रवंगायसभस्मसर्व-

मेतत्समानं परिमर्दनीयम् ॥

निष्कार्धमात्रो मधुनावलीढो

निहन्ति सर्वाभयमेहजातम् ॥ २९ ॥

इति प्रमेहकुठारो रसः रसरत्नप्रदीपात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां प्रमेहचिकित्सानामै-

कपश्चाशस्तरंगः ॥

द्विपञ्चाशस्तरंगः ।

अथ मेदः ॥

अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः ॥

मधुरान्नरसात्प्रायः स्नेहान्मेदो विवर्धते ॥ १ ॥

मेदो मांसविवृद्धित्वात्स्थूलस्निग्धगुदरस्तनः ॥

अथोपचयोत्साहो नरोतिस्थूल उच्यते ॥ २ ॥

इति रुग्निनिश्चयात् ॥

प्रातर्मधुयुतं वारि सेवितं स्थौल्यनाशनम् ॥

केवलं वा रजन्यंते पीतं मेदस्विनां हितम् ॥ ३ ॥

सचव्यजीरकव्योषहिंगुसौवर्चलाभयाः ॥

मस्तुना सक्तवः पीता मेदोवृद्धिविनाशनाः ॥ ४ ॥

क्षारं वा तालपत्रस्य हिंगुयुक्तं पिवेन्नरः ॥

मेदोवृद्धिविनाशाय भक्तमंडसमन्वितम् ॥ ५ ॥

वासादलरसोपेतः शंखचूर्णेन संयुतः ॥

विल्वपत्ररसो वापि गात्रदौर्गन्ध्यनाशनः ॥ ६ ॥

इति श्रीयो० मेदश्चिकित्सानामद्विपञ्चाशस्तरंगः ॥

त्रयःपञ्चाशस्तरंगः ।

अथोदरम् ॥

हृद्वा स्वेदांबुषाहीनि दोषाः स्रोतांसि संचिताः ॥

प्राणाद्वयपानान्संदूष्य जनयंत्युदरं नृणाम् ॥ १ ॥

इति वृंदात् ॥

रक्तशालिर्यवा मुद्गा जांगलाश्च रसा हिताः ॥

विरेकास्थापनं शस्तं सर्वेषु जठरेषु च ॥ २ ॥

क्षीरेणैरंडजं तैलं पिवेन्मूत्रेण वा संकृतम् ॥

ज्योतिष्मत्याः पिवेत्तैलं पयसा च विरेचनम् ॥ ३ ॥

सर्वेभ्यो जठरेभ्यस्तु शीघ्रं मुध्येत मानवः ॥

वातोदरी पिवेत्तैलं पिप्पलीलवणान्वितम् ॥ ४ ॥

शर्करामरिचोपेतं स्वादु पित्तोदरी पिवेत् ॥

यवानीसैन्धवाजाजीव्योपयुक्तं कफोदरी ॥ ५ ॥

सन्निपातोदरी तक्रं त्रिकटुक्षारसैन्धवैः ॥

त्रिभिरथ परिवृद्धं पंचभिः सप्तभिर्वा

दशभिरथ विवृद्धं पिप्पलीवर्द्धमानम् ॥

इति पिवति पुमान्यस्तस्य न श्वातकास-

ज्वरजठरगुदाशोषांतरक्तक्षयाः स्युः ॥ ६ ॥

स्तुहीपयोभाषितानां पिप्पलीनां पयोश्रतः ॥

सहस्रमुपयुंजीत शक्तितो जठरामयी ॥ ७ ॥

पटोलमूलं रजनी विडंगं त्रिफलात्वचम् ॥

कंपिष्ठकं नीलिनीं च त्रिवृतां चेति चूर्णयेत् ॥ ८ ॥

पडाद्यान्कार्पिकान्भागानंत्यान्दित्रिचतुर्गुणान् ॥

श्लक्ष्णचूर्णं ततो मुष्टिं गवां मूत्रेण वा पिवेत् ॥ ९ ॥

विरिक्तो जांगलरसैर्भुंजीत मृदुमोदनम् ॥

मंडं पेयां च पीत्वा वा सव्योषं पैडहं पयः ॥ १० ॥

गृतं पिवेत्त तच्चूर्णं पिवेदेवं ततः पुनः ॥

हंति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जानोदकान्यपि ॥

कामलां पांडुरोगं च श्वयथुं चापकर्षति ॥ ११ ॥

इति पटोलाद्यं चूर्णम् ॥

यवानी हपुषा धान्यं त्रिफला सोपकुंचिका ॥

१ मालकांगुली ।

२ मिरचाई ।

३ प्रमाण ।

४ कुनरेपना सत्र ।

५ पट्टिनि ।

६ कतोनी ।

कारवी पिप्पलीमूलमजगंया सठी वचा ॥ १२ ॥  
 शताह्वा जीरकं व्योषं स्वर्णक्षीरी सचित्रकम् ॥  
 द्वौ क्षारौ पौष्करं मूलं कुष्ठं लवणपंचकम् ॥ १३ ॥  
 विडंगं च समांशानि दंतीभागत्रयं तथा ॥  
 त्रिवृद्धिशाले द्विगुणे सातलौ स्याच्चतुर्गुणा ॥ १४ ॥  
 एवं नारायणो नाम चूर्णो रोगगणापहः ॥  
 तन्नेणोदारिभिः पेयो गुल्मिभिर्वदरांबुना ॥ १५ ॥  
 आनद्धवाते सुरया वातरोगे प्रसन्नया ॥  
 दधिमंडेन विडसंगे दाडिमांबुभिरर्शति ॥ १६ ॥  
 परिकर्तैतिवृक्षाम्लैरुष्णांबुभिरजीर्णके ॥  
 भगंदरे पांडुरोगे कासे श्वासे गलग्रहे ॥ १७ ॥  
 हृद्रोगे ग्रहणीदोषे कुष्ठे मंदानले ज्वरे ॥  
 दंष्ट्राविषे मूलविषे गरले कृत्रिमे विषे ॥  
 यथार्हं स्निग्धकोष्ठेन पेयमेतद्विरेचनम् ॥ १८ ॥  
 इति नारायणं चूर्णम् ॥  
 त्रिवृता त्रिफला पाठा दंती कटुकरोहिणी ॥  
 चतुरंगुलमज्जा च तथा च कटुकत्रयम् ॥ १९ ॥  
 चित्रकं च बृहत्पौ च तथा च गजपिप्पली ॥  
 लुहीक्षीरं पलं दद्याद् घृतस्याष्टौ प्रदापयेत् ॥ २० ॥  
 प्रावत्पिबानि तद्विदूस्तावद्देगान्विरिच्यते ॥  
 इतद्विदुघृतं सिद्धमृषिभिः समुदाहृतम् ॥ २१ ॥  
 इति विदुघृतम् ॥  
 रोहीतकाभयाशुंठीः पिवेन्मूत्रेण शक्तिः ॥



सर्वोदरहरः शीहमेहार्शः कृमिगुल्मनुत् ॥ २२ ॥

पातव्यो युक्तिः क्षारः क्षीरेणोदधिं शुक्तिजः ॥

पयसा च प्रयोक्तव्याः पिप्पल्यः शीहशान्तये ॥ २३ ॥

औदकानूपजं मांसं शाकं पिष्टकृतौ स्तिलाः ॥

व्यायामाध्वदिवास्वापपानाजीर्णं विवर्जयेत् ॥ २४ ॥

अत्र कव्यादो रसो हितः ॥

सूतगंधकणापथ्यातुत्थारग्वधकाढकम् ॥

मर्दयेद्वज्रिदुग्धेन तन्मापं स्वादयेद्दिनम् ॥ २५ ॥

नृणां जलोदरं हन्ति पथ्यं शाल्योदनं दधि ॥

चिंचाफलरसं चानुपानमत्र प्रयोजयेत् ॥ २६ ॥

इत्युदरारि रसः ॥

ध्रष्टकणतुल्यं तु मरिचं च रसं समः ॥

गंधकं पिप्पली गुंठी द्वौ द्वौ भागौ विचूर्णयेत् ॥ २७ ॥

सर्वतुल्यं क्षिपेदंतीबीजं सर्वमकट्मपम् ॥

द्विगुंजं रेचनं चैतदुदराणि व्यपोहति ॥ २८ ॥

इति नाराचः ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां उदरचिकित्सा नाम

त्रयःपञ्चाशस्तरंगः ॥

चतुःपञ्चाशस्तरंग ।

अथ श्वयथुः ॥

रक्तपित्तकफाद्वायुः क्षिराः प्राप्य वाह्याः ॥

शोथं करोति नवधा दोषक्षेडाभिधाततः ॥ १ ॥

गुंठीपुनर्नवैरंडपंचमूलीगृतं जलम् ॥

पातिकां श्वयथौ शस्तं पानाहारपरिमहे ॥ २ ॥

पटोलत्रिफलारिष्टदार्वाकाथः सगुग्गुलुः ॥  
हन्ति पित्तभवं शोथं तूष्णाज्वरसमन्वितम् ॥ ३ ॥  
पुनर्नवाविश्वत्रिवृद्बुद्धीशम्याकपथ्यामरदारुकल्कम् ॥  
शोथे कफोत्थे महिषाक्षयुक्तं मूत्रं पिवेद्वा सलिलं तथैव ४  
कफे तु कृष्णा सिकतापुराणा पिण्याकशिथुत्वगभिप्रलेपः  
गुडाद्रकं वा गुडपिप्पली वा गुडाभयां वा गुडनागरं वा ५  
कर्पाभिवृद्ध्या त्रिपलप्रमाणं  
खादेन्नरः पक्षमथापि मासम् ॥  
शोथप्रतिश्यायगलास्यरोगान्  
सश्वासकासारुचिपीनसादीन् ॥ ६ ॥  
जीर्णज्वराशौग्रहणीविकारान्  
हन्यात्तथान्यानपि वातरोगान् ॥  
कृष्णाग्निविश्वधनजीरककंटकारी  
पाठानिशाकारिकणामंगथाजटानाम् ॥ ७ ॥  
चूर्णं कवोष्णसलिलेन विलोडय पीतं  
नातः परं श्वयथुरोगहरं नराणाम् ॥ ८ ॥  
सर्पितैलगृतमद्यानि गुर्वम्ललवणानि च ॥  
जांगलं च दिवास्वापं शोथवान्वर्जयेन्नरः ॥ ९ ॥  
इति श्रीयोगतरंगिण्यां शोथचिकित्सा नाम  
चतुःपञ्चाशस्तरंगः ॥

पञ्चपञ्चाशस्तरंगः

अथ मुष्कवृद्धिः ॥

अधोगतिर्वक्ष्यतो गुष्कौ प्राप्य करोति हि ॥

दोषास्त्रमेदोमूत्रात्रैः सप्तधांडोन्नतं मसू ॥ १ ॥

यः पित्तदोषेण कुरंडरोगो भवेच्छिशोर्दक्षिणमुष्कभागे ॥

ततोर्द्धभागे श्रवणस्य वेधं वामस्य कुर्यात्परतोऽपरत्र ॥२॥

पथ्याक्षवीजशुंठीनिगुंडीनां मिथः समैश्चूर्णैः ॥

घृतमधुसहिता पिंडी न क्षमते मुष्कवृद्धिकथाम् ॥ ३ ॥

त्रिफलाक्वाथगोमूत्रं पिवेत्प्रातरतंद्रितः ॥

कोष्ठवातोद्भवं शूलं निहन्याद्वृषणोद्भवम् ॥ ४ ॥

कपायलेपयोः प्रायो युज्यते रक्तचंदनम् ॥

चंदनं मधुकं पद्ममुशीरं नीलमुत्पलम् ॥ ५ ॥

क्षीरपिष्टैः प्रलेपः स्याद्वाहशोधव्रणापहः ॥

पंचवल्कलकल्केन सघृतेन प्रलेपनम् ॥ ६ ॥

सर्वं पित्तहरं कार्यं रक्तजे रक्तमोक्षणम् ॥

वचासर्पपतैलेन प्रलेपः शोथनाशनः ॥ ७ ॥

तैलमैरंडजं पीतं वलासिद्धं पयोऽन्वितम् ॥

आध्मानशूलोपचितामंडवृद्धिं जयेन्नरः ॥ ८ ॥

गोमूत्रसिद्धां रुवुतैलभृष्टां हरीतकीं सैधवचूर्णयुक्ताम् ॥

स्वादेन्नरः कोष्णजलानुपानान्निहन्ति कूरंडमतिप्रवृद्धम् ॥

इतिश्रीयोगतरंगिण्यां अंत्रवृद्धिचिकित्सा नाम

पञ्चपंचाश स्तरंगः ॥

पदपंचाशस्तरंगः

अथ वृधः ।

वंक्षणे दोषजः शोथो वृध इत्यभिधीयते ॥

मूलं विल्वकपित्थयोररलुकस्याग्नेर्वृहत्योर्दयोः ॥ १ ॥

श्यामापूतिकरंजशिग्रुकतरुर्विश्वौषधारुंष्करम् ॥

रूष्णाग्रंधिकचव्यपंचलवणाक्षाराजमोदान्वितम् ॥२॥

पीतं कांजिककोष्णतोयमथितैश्वर्णीकृतं ब्रध्नजित् ॥ २ ॥

भृष्टश्चैरंडतैलेन कल्कः पथ्यासमुद्भवः ॥

रूष्णासैधवसंयुक्तो वृध्नरोगहरः परः ॥ ३ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां वृध्नचिकित्सा नाम-

पट्पञ्चाशस्तरंगः ॥

सप्तपञ्चाशस्तरंगः

अथ गंडमाला ॥

गंडमालोरुभिर्गंडैः कंठदेशासमुद्भवैः ॥

एषैव चिरवृद्धा स्यादपची व्रणसंज्ञिका ॥ १ ॥

माक्षिकाढ्यः सरुत्पीतः काथो वरुणमूलजः ॥

गंडमालां निहंत्याशु चिरकालानुवंधिनीम् ॥ २ ॥

विडंगमलसिंधूत्थरास्त्रोद्याक्षारदारुभिः ॥

तैलं चतुर्गुणे सिद्धं कटुतुंवीरसे शुभे ॥

गंडमालाहरं श्रेष्ठं गलगंडेपि शस्यते ॥ ३ ॥

इति तुंवीतैलम् ॥

व्योषं विडंगं मधुकं सैधवं देवदारु च ॥

तैलमेभिः शृतं सम्यक्छ्छ्रामप्यपर्चा जयेत् ॥ ४ ॥

इति व्योपायं तैलम् ॥

सुछुंदर्या विषकं तु क्षणात्तैलं वरं ध्रुवम् ॥

अभ्यंगान्नाशयेन्नृणां गंडमालां सुदारुणाम् ॥ ५ ॥

इति सुछुंदरीतैलम् ॥

सौभांजनं देवदारुकांजिकेन प्रयोजितम् ॥

कोष्णप्रलेपतो हन्यादपर्चा दुस्तरामपि ॥ ६ ॥

इति सौभांजनम् ॥

अथ गलगंडः ॥

निवद्धः श्वयथुर्यस्य मुष्कवल्लंबंते गले ॥

महान्वा यदि वा ह्रस्वो गलगंडं तमादिशेत् ॥ ७ ॥

जीर्णकैर्कारुकरसो विडसैर्धवसंयुतः ॥

नस्येन तरुणं हंति गलगंडं न संशयः ॥ ८ ॥

श्वेतापराजितामूलं प्रातः पिष्ट्वा पिबेन्नरः ॥

सर्पिषा नियताहारो गलगंडप्रशांतये ॥ ९ ॥

तिक्तालांबुफले पक्वं सप्ताहमुपितं जलम् ॥

गलगंडं निहंत्याशु पानात्पथ्यानुशीलितम् ॥ १० ॥

अथ ग्रंथिः ॥

वातादयो मांसमसृक्प्रदुष्टाः

प्रदूष्य मेदश्च तथा शिराश्च ॥

वृत्तोन्नतं ग्रंथिमरुक्स्तोषं

कुर्वत्यतो ग्रंथिरिति प्रदिष्टः ॥ ११ ॥

हिंत्वा सरोहिण्यमृताथ भांगी

स्योनाकविल्वागुरुवाजिगंधा ॥

गोजीवपिष्टा सहतालपंड्या

ग्रंथौ विधेयोनिलजे प्रलेपः ॥ १२ ॥

जलायुकाः पित्तरुते हितास्तु

क्षीरोदकाभ्यां परिपेचनं च ॥

द्राक्षारसेनेक्षुरसेन वापि

चूर्णं पिबेद्वापि हरीतकानाम् ॥ १३ ॥

मधूकजंबवर्जुनवेतसानां त्वग्निभः प्रदेहानवचारयेच्च ॥

१ कांकोटी । २ स्विक्तकोहल । ३ गोमूत्रेणपिष्टा । ४ तात्तपत्रेणसह ।

५ तेषाम् ।

हितेषु दोषेषु यथा न पूर्व ग्रंथौ भिषक्श्लेष्मसमुत्थितेषु ॥

अमर्मजातं सममप्रपातं

तत्पक्वमेवापहरेद्विचार्य ॥

देहस्थिते वाससि सिद्धकर्मा

सद्यः क्षतोक्तं च विधिं विदध्यात् ॥ १३ ॥

शस्त्रेण चोत्पाट्य सुपक्वमाशु

प्रक्षालयेत्पथ्यतमैः कपायैः ॥

संशोधनैस्तंतुविशोधयेत्तु

क्षारोत्तरैः क्षौद्रघृतप्रगाढैः ॥ १४ ॥

सिद्धं च तैलं त्ववचारणीयं

विडंगपाठारजनीविपक्वम् ॥

मेदःसमुत्थे तिलकल्कदिग्धे

कृतोपरिष्ठाद्विगुणं पटान्तम् ॥ १५ ॥

हुताशतमेन मुहुः प्रदद्या-

होहेन धीमान्नवबृद्धितायाम् ॥

प्रलिसदव्यां त्वथ लाक्षया वा

प्रतप्तया स्वेदनमस्य कार्यम् ॥ १६ ॥

निपात्य वा शस्त्रमपोह्य मेदो

बहेत्तुषकं त्वथ वा विदार्य ॥

प्रक्षाल्य मूत्रेण तिलैः सुपिष्टैः

सुवर्चलाद्यैर्इरितालमिश्रैः ॥ १७ ॥

ससंधैवः क्षारघृतप्रगाढैः क्षारोत्तरैरेनमभिप्रशोध्य ॥

तैलं विदध्याद्विकरंजगुंजावंशावलेख्ये गुदमूत्रसिद्धम् ॥ २१

लिप्तं पक्वक्षारविडंगबीजगंधोपलैः स्यान्मसृणीकृतैर्यत् ॥

रक्तेन मिश्रैः सरट्स्य सद्यस्तद्वुदं शाम्यति नान्यथैतत्  
इति राजमातृङ्गात् ॥

वातावुदं क्षीरघृतांबुसिद्धै-

रुष्णैः सतैलैरुपनाहयेत्तु ॥

कुर्यात्तु मुख्यान्युपनाहनानि

सिद्धैश्च मांसैरथवेसवारैः ॥ २० ॥

स्वेदं विदध्यात्कुशलश्च नाड्या

गुणैः रक्तं बहुशो हरेच्च ॥

वातघ्ननिर्यूहपयोऽम्लवर्गैः

सिद्धं सिंताख्यां त्रिवृतां पिवेद्वा ॥ २१ ॥

स्वेदोपनाहा मृदवस्तु पथ्या

पित्तावुदे काथविरेचनं च ॥

विकृष्य सोढुंवरशाकंगोजी-

पत्रैर्भृशं क्षौद्रयुतैः प्रालिपेत् ॥ २२ ॥

शुद्धस्य जंतोः कफजेवुदे च

रक्ते च सिक्ते स्रवतेवुदं यत् ॥

मेदःकृते मांसकृतेपि कार्यं

व्रणोदितं सर्वचिकित्सितं च ॥ २३ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां गण्डमात्रापच्यग्लान्द्वयं-

ध्यवुदचिकित्सानाम सप्तपंचाशस्तरंगः ॥

अष्टपंचाशस्तरंगः

अथ श्लोपदः ॥

श्लोपदः पादशोथः स्यान्मेदःकफसमुद्भवः ॥

नासाकर्णाक्षिहस्तादावप्याङ्गुः केप्यमुं पुनः ॥ २८ ॥

१ तिति । २ रक्तेता । ३ गोभीस्यपिपाठः ।

धत्तूरैरंडवर्षाभूर्निर्गुडीशिग्रुसर्षपैः ॥  
 प्रलेपः श्लीपदं हंति चिरोत्थमपि दारुणम् ॥ २ ॥  
 कृष्णचित्रकदंतीनां कर्षमर्धपलंपलम् ॥  
 विंशतिश्च हरीतक्या गुडस्य च पलद्वयम् ॥ ३ ॥  
 मधुना मोदकं स्वादेच्छ्नीपदं हंति दुस्तरम् ॥  
 संपिष्टमारनालेन रूपिकामूलवल्कलम् ॥  
 प्रलेपाच्छ्नीपदं हंति बद्धमूलमपि दृढम् ॥ ४ ॥  
 पिंडारकतरुसंभवशिफा जयति सर्पिषा पीता ॥  
 श्लीपदमुग्रं नियतं वद्धा सूत्रेण जंघायाम् ॥ ५ ॥  
 हितश्च लेपने नित्यं चित्रको देवदारु च ॥  
 सिद्धार्थशिग्रुकल्को वा सुखोष्णो मूत्रपेषितः ॥ ६ ॥  
 विडंगमरिचार्केषु नागरे चित्रके तथा ॥  
 भद्रंदावैलकारव्ये च सर्वेषु लवणेषु च ॥  
 तैलं पक्वं पिबेद्वापि श्लीपदानां निवृत्तये ॥ ७ ॥  
 इति विडंगाद्यं तैलम् ॥  
 यवान्नं कटुतैलं च कूर्ममांसं च योजयेत् ॥  
 श्लीपदानां प्रशांत्यर्थमशांते दाहमग्निना ॥ ८ ॥  
 इति वृंदात् ॥

इति श्रीयोगतरेगिण्यो श्लीपदचिकित्सा नाम

अष्टपंचाशस्तरंगः

एकोनषष्टितमस्तरंगः

अथ विद्रधिः ॥

पृथग्दोषैः समस्तैश्च क्षतेन क्षतजेन च ॥



गुल्मवद्विद्रधिर्ज्ञेयः स्त्रीस्तने रक्तविद्रधिः ॥ १ ॥  
 जलौकापातनं शस्तं सर्वस्मिन्नेव विद्रधा ॥  
 मृदुर्विरेको लघ्वन्नं स्वेदः पित्तोत्तरं विना ॥ २ ॥  
 वातघ्नौपधिकल्कैस्तु वसातैलघृतप्लुतैः ॥  
 सुखोष्णो बहुलो लेपः प्रयोज्यो वातविद्रधौ ॥ ३ ॥  
 स्वेदोपनाहाः कर्तव्याः शिशुमूलसमन्विताः ॥  
 यवगोधूममुद्गैश्च स्विन्नपिष्टैः प्रलेपयेत् ॥ ४ ॥  
 विलीयते क्षणेनैवमपक्वैश्चैव विद्रधिः ॥  
 पैत्तिकं शर्करालाजामधुकैः सारिषायुतैः ॥ ५ ॥  
 प्रदिह्यात्क्षीरपिष्टैर्वा वयस्योशीरचंदनैः ॥  
 पिवेद्वा त्रिफलाकाथं त्रिवृताकल्कसंयुतम् ॥ ६ ॥  
 इष्टिकासिकतालोहगोशरुतुपपांसुभिः ॥  
 गोमूत्रपिष्टैः सततं स्वेदयेच्छ्लेष्मविद्रधिम् ॥ ७ ॥  
 सोभांजनस्य निर्यूहो हिंगुसैंधवसंयुतः ॥  
 अचिराद्विद्रधिं हन्ति प्रातःप्रातर्निपेवितः ॥ ८ ॥  
 श्वेतवर्षाभुवो मूलं मूलं वरुणकस्य च ॥  
 जलेन कथितं पीतमपक्वं विद्रधिं जयेत् ॥ ९ ॥  
 कासीससैंधवशिलाजतुर्हिंगुचूर्णं  
 मिश्रीकृतो वरुणवल्कलजः कपायः ॥  
 अभ्यन्तरोत्थितमपक्वमतिप्रमाणं  
 नृणामयं जयति विद्रधिमुग्रशोफम् ॥ १० ॥  
 अपके त्वेतदुदितं पके तु व्रणवत्क्रिया ॥ ११ ॥  
 इति श्रीयोगतरंगिण्यां विद्रधिचिकित्सा नाम  
 एकोनपाष्टितमस्तरंगः

षष्ठितमस्तरंगः

अथ व्रणशोधः ॥

एकदेशोत्थितः शोधो व्रणानां पूर्वलक्षणम् ॥  
दोषैः पृथक्समस्तैस्तै रक्तजागंतुजौ च पट् ॥ १ ॥

इति रुग्विनिश्चयात् ॥

आदौ विष्ठावनं कुर्याद्वितीयमथ सेचनम् ॥  
तृतीयमुपनाहं च चतुर्थं पाटनक्रियाम् ॥ २ ॥  
पंचमं शोधनं चैव षष्ठं रोपणमिष्यते ॥  
एते क्रमा व्रणस्योक्ताः सप्तमं वैरुतापहम् ॥ ३ ॥  
अभ्यर्ज्य स्वेदयित्वा तु वेणुनाड्या ततः शनैः ॥  
विष्ठावनार्थं गृहीयात्तलेनांगुष्ठकेन वा ॥ ४ ॥  
शोधे महति संरब्धे वेदनावति वा व्रणे ॥  
यो न याति समं लेपस्वेदसेकापतर्पणैः ॥ ५ ॥  
सोऽपि नाशं व्रजत्यागु शोधः शोणितमोक्षणात् ॥  
एकतश्च क्रियाः सर्वा रक्तमोक्षणमेकतः ॥ ६ ॥  
रक्तं हि विक्रियां याति तन्मोक्षे याति विक्रिया ॥  
हरत्यष्टांगुलं तुंवी गृगं च द्वादशांगुलम् ॥ ७ ॥  
शिरा सर्वांगजं रक्तं जलौकाग्रंथिमुद्धतम् ॥  
तुंवी कफोत्थे वातोत्थे गृगी पित्ते जलौकसः ॥ ८ ॥  
संनिपातोत्थिते नाडी बहुदोषे प्रयोजयेत् ॥  
मातुलुंगाग्रिमंथौ च सुरदारु महौषधम् ॥ ९ ॥  
अहिंस्त्रा चैव रास्त्रा च प्रलेपेनागु शोधजित् ॥  
दुर्बानलकमूलं च मधुकं चंदनं तथा ॥ १० ॥

शीतलैश्च गणैः सर्वैः प्रलेपः पित्तशोथहा ॥  
 अंजगंधाश्वगंधा च काला सरलया सह ॥ ११ ॥  
 ऐकैषिका च शृंगी च प्रलेपः श्लेष्मशोथहा ॥  
 आलेपपूतिमांसानां मांसस्थानमरोहताम् ॥ १२ ॥  
 लेपः संरोपणः कार्यस्तिलजो मधुसंयुतः ॥  
 न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थपृक्षवेतसवल्कलैः ॥ १३ ॥  
 ससर्पिष्कैः प्रलेपः स्याच्छोथनिर्वारणः परः ॥  
 न रात्रौ लेपनं वद्यादत्तं च पतितं तथा ॥ १४ ॥  
 न च पर्युषितं शुष्कं न वा संधारयेत्कचित् ॥  
 सतिलाः सातसीवीजाः दध्यम्लसकुर्पिडिकाः ॥ १५ ॥  
 सकिण्वकुष्ठलवणाः शस्ताः स्युरुपनाहने ॥  
 शणमूलकशिग्रूणां फलान्यसितसर्पपाः ॥ १६ ॥  
 सक्तवः किण्वमुष्णानि द्रव्याण्येतानि पाचने ॥  
 हस्तिदंतं जले घृष्टं विदुमात्रप्रलेपनात् ॥ १७ ॥  
 अत्यर्पकठिने चापि शोथे पाचनभेदकम् ॥  
 चिरंवित्वाग्निकौ दंतचित्रकौ हयमारकः ॥ १८ ॥  
 कपोतकंकगृधाणां पुरीपाणि च दारणे ॥  
 ततः प्रक्षालने काथः पटोलीनिवपत्रजः ॥ १९ ॥  
 अविशुद्धे विशुद्धे वा न्यग्रोधादित्वगुद्भवः ॥  
 आलेपः पूतिमांसानां मांसस्थानामरोहणम् ॥ २० ॥  
 कल्कः संरोहणः कार्यस्तिलानां मधुना त्वितः ॥  
 निवपत्रमधुभ्यां तु यतः संशोधनः परः ॥ २१ ॥  
 निवपत्रं तिला दंती त्रिवृत्सैधवमाक्षिकम् ॥

दुष्टव्रणप्रशमनो लेपः शोधनकैसरी ॥ २२ ॥  
 निवपत्रवर्चाहिगुसर्पिलवणसैधवैः ॥  
 धूपनं कृमिरक्षोभं व्रणकंदूरुजापहम् ॥ २३ ॥  
 अग्निदग्धे व्रणे सम्यक्प्रयुंजीत चिकित्सितम् ॥  
 पित्तविद्रधिबीसर्पशमनं लेपनादिकम् ॥ २४ ॥  
 वाताभिभूतान्सर्वाश्च धूपयेदुग्रवेदनान् ॥  
 यवाज्यभूर्जमदनश्रीवेष्टकसुराह्वयैः ॥ २५ ॥  
 श्रीवासगुग्गुल्वगुरुशालनिर्यासधूपिताः ॥  
 कठिनत्वं व्रणा यांति नश्यंत्यास्त्राववेदनाः ॥ २६ ॥  
 करंजारिष्टनिर्गुडीरतो हन्याद्ब्रणकिमीन् ॥  
 लशुनेनाथ वा दद्याद्द्वेपनं कृमिनाशनम् ॥ २७ ॥

ये क्लेदपाकस्रुतिगंधवंतो

व्रणा महांतः सरुजः सशोथाः ॥

प्रयांति ते गुग्गुलुमिश्रितेन

पीतेन शान्तिं त्रिफलारसेन ॥ २८ ॥

इति त्रिफलागुग्गुलुः ॥

अमृतापटोलमूलत्रिफलात्रिकटुक्रिमिघ्नानाम् ॥  
 समभागानि रजांसि कौशिकभागः समः सर्वैः ॥ २९ ॥  
 गोघृतवद्धां गुटिकां खादेदनुवासरं सदक्षमिताम् ॥  
 जेतुं व्रणवातासृग्गुल्मोदरश्वयथुपांडुरोगान्वै ॥ ३० ॥

इत्यमृताद्यो गुग्गुलुः ॥

जातीर्निवपटोलपत्रकटुकादावीनिशासारिवा-  
 मंजिष्ठाभयसिकर्थातुत्यमधुकैर्नक्तं हवीजैः समैः ॥

सर्पिः सिद्धमनेन सूक्ष्मवदना मर्माश्रिताः स्त्राविणो  
गंभीराः सरुजो व्रणाः सगतिकाः शुष्यन्ति शुष्यन्ति च ३

इति जात्याद्यं घृतम् ॥

स्वर्जिका च यवक्षारः कंपिलमहिछंदिका ॥

टंकणं श्वेतखदिरं तुत्थं चूर्णं च गोघृते ॥ ३२ ॥

सर्वं समांशं संचूर्ण्य मर्दयेत्प्रहरं दृढम् ॥

स्वर्जिकादिघृतं चैव सर्वव्रणविशोधनम् ॥ ३३ ॥

पूरणं कृमिकंदूषं शीघ्रं पाटवकृत्तथा ॥

इति स्वर्जिकाद्यं घृतम् ॥

मनःशिला समंजिष्ठा सलाक्षारजनीद्वयम् ॥

प्रलेपः सघृतक्षौद्रस्त्वग्बिशुद्धिकरः परः ॥ ३४ ॥

पुनर्नवानिवपटोलशुंठी-

तित्तानिशादार्यभयाकपायः ॥

सर्वांगशोफोदरकासगूल-

श्वासान्वितं पांडुगदं निहन्ति ॥ ३५ ॥

इति पुनर्नवाष्टकं ॥

अयोरजः सकासीसं त्रिफलाकुसुमानि च ॥

प्रलेपः कुरुते काष्ण्यं सद्य एव नवत्वचि ॥ ३६ ॥

कालीयकफलाम्रास्थिहेमकालासुरोत्तमैः ॥

लेपः सगोमयरसस्त्वक्सवर्णकरः परः ॥ ३७ ॥ \*

अथ सद्योव्रणः ॥

सद्यः क्षतं व्रणं वैद्यः सगूलं परिपेचयेत् ॥

१ सर्पकंचुका । २ भगर । ३ नागकसर । ४ धारिया । \* पारोटक

१ गधक १ मुरदशृंगाटक १ कबेलोटक १ गुच्छ्यास्यं संमर्थ नादीव्रणादी तेषां  
दरदयं व्रणा नश्यति ॥

यर्धमधुकयुक्तेन किञ्चिदुष्णेन सर्पिपा ॥ ३८ ॥  
 बुद्धांगतुं व्रणं वैद्यो घृतक्षौद्रसमन्वितम् ॥  
 शीतां क्रियां प्रयुञ्जीत रक्तपित्तोष्मनाशिनीम् ॥ ३९ ॥  
 आमाशयस्ये रुधिरे वमनं पथ्यमुच्यते ॥  
 पकाशयस्ये दातव्यं रेचनं च समासतः ॥ ४० ॥  
 काथो वंशत्वगेरंडश्वदंष्ट्राश्मभिदाकृतः ॥  
 सहिगुसैधवः पीतः कोष्ठस्यै स्वावयेदमृक् ॥ ४१ ॥  
 यवकोलकुलत्थानां निस्त्रेहेन रसेन वा ॥  
 भुञ्जीताञ्च यवागूं वा पिवेत्सैधवसंयुताम् ॥ ४२ ॥  
 इति सांसाहिकः प्रोक्तः सद्योव्रणहितो विधिः ॥  
 समाहादपरतः कार्याः शारीरव्रणवत्क्रियाः ॥ ४३ ॥  
 व्रणे श्वयथुरायासात्तै च रागश्च जागरात् ॥  
 तौ च रुक्च दिवास्वापात्ताश्च मृत्युश्च मैथुनात् ॥ ४४ ॥  
 सिंदूरकुष्ठविर्पाहिगुरसोनचित्र-  
 वाणाम्ब्रिलांगलिककल्कविपकृतैलम् ॥  
 प्रासादमंत्रयुतहुंकृतनुन्नफेनः  
 क्लिन्नव्रणप्रशमनो विपरीतमल्लः ॥ ४५ ॥  
 खड्गाभिघातगुरुगंडमहोपदंश-  
 नाडीव्रणव्रणविचर्चिककुष्ठषामाः ॥  
 एता निहन्ति विपरीतकमल्लनाम  
 तैलं यथेष्टशयनाशनभोजनस्य ॥ ४६ ॥  
 इति विपरीतमल्लतैलं चक्रदत्तात् ॥

अथ भग्नानि ॥

आदौ भग्नं विदित्वा तु सेचयेच्छीतवारिणा ॥

१ मूल । २ सप्तदिनपर्यंत । ३ श्वयथुः । ४ पंचमूल ।

पंकेनालेपनं कुर्याद्विधनं च कुशान्वितम् ॥ ४७ ॥

आलेपनार्थं मंजिष्ठा मधुकं रक्तचंदनम् ॥

शतधौतघृते मिश्रं शालिपिष्टं च लेपनम् ॥ ४८ ॥

न्यग्रोधादिकपायस्तु सुशीतः परिपेचने ॥

पंचमूलीविषकं च क्षीरं दद्यात्सवेदने ॥ ४९ ॥

मूलं शृगालच्छिन्नायाः पीत्वा मांसरसेन तु ॥

तच्चूर्णीकृत्य सप्ताहादस्थिभंगं व्यपोहति ॥ ५० ॥

विल्वकर्णं मधुयुतमस्थिभंगे त्र्यहं पिबेत् ॥

पीत्वा चास्थि भवेत्सम्यग्ब्रजसारनिभं दृढम् ॥ ५१ ॥

लवणं कटुकक्षारमम्लं मैथुनमातपम् ॥

व्यायामं च न सेवेत भग्नो रूक्षान्नमेव च ॥ ५२ ॥

अथ नाडीव्रणः ॥

नाडीनां गतिमन्विष्य शस्त्रेणोत्पाट्य कर्मवित् ॥

सर्वव्रणक्रमं कुर्याच्छोधनं रोपणादिकम् ॥ ५३ ॥

नाडीं वातरुतां साधुपाटितां लेपयेद्भिषक् ॥

प्रत्यक्पुष्पीफलयुतैस्तिलैः पिष्टैः प्रलेपयेत् ॥ ५४ ॥

पैत्तिकीं तिलमंजिष्ठानागदंतीनिशाद्वयैः ॥

श्लैष्मिकीं तिलयष्ट्याहनिंकुंभारिष्टसैधवैः ॥ ५५ ॥

शल्यजां तिलमध्वाज्यैर्लेपयेत्पूयशोधनैः ॥

आरग्वधनिशाकालाचूर्णाज्यक्षौद्रसंयुताः ॥

सूत्रवर्तिव्रणे योज्या शोधिनी गतिनाशिनी ॥ ५६ ॥

घोटफलत्वङ्मदनाफलानि

पूगस्य च त्वग्लगुनं च मुरल्यम् ॥

स्नुह्यर्कदुग्धेन सहैष कल्को  
वर्त्तीकृतो हन्त्यचिरेण नाडीम् ॥ ५७ ॥

वर्त्तीकृतं माक्षिकसंप्रयुक्तं  
नाडीघ्नमुक्तं लवणोत्तमं च ॥

दुष्टव्रणे यदिहितं च तैलं  
तत्सेव्यमानं गतिमाशु हन्ति ॥ ५८ ॥

जात्यर्कशंपाककरंजदंती-  
सिंधूत्थसौवर्चलयावशूकैः ॥

वर्त्तिः कृता हन्त्यचिरेण नाडीं  
स्नुक्क्षीरलिप्ता सह सैन्धवेन ॥ ५९ ॥

कृशदुर्वलभीरूणां नाडीमर्माश्रितापि च ॥

क्षारसूत्रेण तां छिद्यान् शस्त्रेण कदाचन ॥ ६० ॥

गुग्गुलुस्त्रिफलाव्योषैः समांसैश्चाज्ययोजितैः ॥

नाडीं दुष्टव्रणं चापि जयेदपि भगंदरम् ॥ ६१ ॥

इति सप्तांगगुग्गुलुः ॥

समूलपत्रां निर्गुडीं पीडयित्वा रसं हरेत् ॥

तेन सिद्धं समं तैलं नाडीदुष्टव्रणापहम् ॥ ६२ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां शोथव्रणसद्योव्रणभग्नना-

डीव्रणचिकित्सानामपष्टितमस्तरंगः ॥

एकषष्टितमस्तरंगः ।

अथ भगंदरम् ॥

गुदस्य द्व्यंगुले क्षेत्रे पार्श्वतः पिडकार्त्तिकृत् ॥

भिन्नो भगंदरो ज्ञेयः स च पंचविधो मतः ॥ १ ॥

वातपित्तकफैस्त्रेधा चतुर्यः सन्निपाततः ॥



उन्मार्गगः पंचमः स्यादेवं पंचविधो मतः ॥ २ ॥

गुदस्य श्वयथुं दृष्ट्वा विशोष्यादौ विशोधयेत् ॥

रक्तावसेचनं कार्यं यथा पार्कं न गच्छति ॥ ३ ॥

खररुधिरसमेतं भूलतायाः शरीरं

दृपदि सहितमस्थना सारमेयस्य पिष्टम् ॥

भवति समुपलेपादाशु भागंदरीणा-

मपि विषमतराणामापदां नाशहेतुः ॥ ४ ॥

वटपत्रेष्टिकांसौडीगुडूच्यः सपुनर्नवाः ॥

सुपिष्टाः पिडकावस्थे लेपः शस्तो भगंदरे ॥ ५ ॥

पिडिकानामपक्वानामपतर्पणपूर्वकम् ॥

कर्म कुर्याद्विरेकांतं भिन्नानां वक्ष्यते क्रिया ॥ ६ ॥

स्नुह्यर्कदुग्धदावीभिर्वर्ति कृत्वा विचक्षणः ॥

भगंदरगतिं ज्ञात्वा दद्यादुष्टविशोधिनीम् ॥ ७ ॥

दुष्टां सर्वशरीरस्थां नार्डी हन्यादसंशयम् ॥

रसेन्द्रभागद्वितयं म्लेक्षक्षारचैतुष्टयम् ॥ ८ ॥

काकजंघारसैर्मद्यै खल्वे दिवसपंचकम् ॥

ताम्रस्य संपुटे रुद्धा सच्छिद्रे हंडिकांतरे ॥ ९ ॥

निवेश्य बालुकां दत्वा देयोग्निः प्रहराष्टकम् ॥

स्वांगशीतं समुद्धृत्य मधुटंकणसंगुतम् ॥ १० ॥

धमेन्मूपागतं तावद्यावद्भ्रमति तारवत् ॥

रूपराजरसः सोऽयं भगंदरविनाशनः ॥ ११ ॥

बह्ममात्रमिमं खादेच्चिफलामनुपाययेत् ॥

मुक्तः स्वल्पैरहोभिः स्याद्भगंदरमहागदात् ॥ १२ ॥

इति रूपराजो रसः ॥

त्रिफलापुरुकृष्णानां त्रिपंचैकभागयोजिता गुटिका ॥

कुष्ठभगंदरनाडीदुष्टव्रणविशोधिनी कथिता ॥ १३ ॥

इति नवकार्षिको गुग्गुलुः ॥

तिलाभयांलोध्रमरिष्टपत्रं निशावचाकुष्ठमगारधूमः ॥

भगंदरे नाड्युपदंशयोश्च दुष्टव्रणे शोधनरोपणोपयम् ॥ १४ ॥

त्रिफलारससंयुक्तं विडालास्थिप्रलेपनम् ॥

भगंदरं निहंत्याशु दुष्टव्रणविशोधनम् ॥ १५ ॥

चित्रकार्को त्रिवृत्पाठेमलंपूहयमारकौ ॥

मुधां वचां लांगलीं च हरितालं मनःशिलाम् ॥ १६ ॥

ज्योतिष्मतीं च संहृत्य तैलं धीरो विपाचयेत् ॥

एतद्विष्पदं नाम तैलं दद्याद्भगंदरे ॥ १७ ॥

शोधनं रोपणं चैव दुष्टनाडीं विपोहयेत् ॥

इति चित्रकाद्यं तैलम् ॥

करवीरनिशादंतीलांगलीलवणाग्निभिः ॥

मातुलुंगार्कपयसा पचेत्तैलं भगंदरे ॥ १८ ॥

इति करवीराद्यं तैलम् ॥

भागो रसस्य गंधस्य द्वौ कन्याद्भिर्विमर्दयेत् ॥

कृत्वा गोलं ताम्रपात्रं तावत्तस्योपरि क्षिपेत् ॥ १९ ॥

भस्मनापूर्य तद्भांडं वह्निं कुर्यादिदं तले ॥

शीतमुद्धृत्य जंवीरवारं तत्सप्तधा पुटेत् ॥ २० ॥

गुंजास्यमधुसर्पिभ्यां हंति सद्यो भगंदरम् ॥

तालमूर्लीं सलगुनां पिवेदनु सकांजिकाम् ॥ २१ ॥

इति रवितांडवो रसः ॥

व्यायामं मैथुनं युद्धं पृष्ठयानं गुरुणि च ॥

संवत्सरं परिहरेदुपस्कृष्टवणो नरः ॥ २२ ॥

अथोपदंशः ॥

हस्ताभिघातान्मृदंतघातादधावनादत्युपसेवनाद्वा ॥  
योनिप्रदोषाच्च भवंति शिश्वे पंचोपदंशा विविधोपचारैः ॥  
जलौकापातनं च स्यादूर्ध्वाधःशोधनं तथा ॥

पाको रक्ष्यः प्रयत्नेन शिश्वक्षयकरश्च सः ॥ २३ ॥

पटोलनिंबत्रिफलागुडूचीकाथं पिवेद्वा स्वदिरासेनाभ्यां ॥

सगुग्गुलुं वा त्रिफलायुतं वा सर्वोपदंशापहरः प्रयोगः ॥

त्रिफलायाः कपायेण भृंगराजरसेन वा ॥

व्रणप्रक्षालनं कुर्यादुपदंशप्रशान्तये ॥ २४ ॥

दहेत्कटाहे त्रिफलां समांशीमधुसंत्युताम् ॥

उपदंशप्रलेपोयं सद्यो रोपयति व्रणम् ॥ २५ ॥

जयांजात्यश्वमारार्कशम्याकानां दलैः पृथक् ॥

कृतं प्रक्षालने काथं मेढ्रपाके प्रयोजयेत् ॥ २६ ॥

करंजनिंबार्जुनसालजंबूवटादिभिः कल्ककपायसिद्धम् ॥

सर्पिर्निहन्यादुपदंशदोषं सदाहपाकं स्तुतिरागयुक्तम् ॥ २७ ॥

अथ शूकदोषाः

अक्रमाच्छेफसो वृद्धिं योभिवाञ्छति मूढधीः ॥

व्याधयस्तस्य जायन्ते दश चाष्टौ च शूकजाः ॥ २८ ॥

हितं च सर्पिषः पानं पथ्यं वापि विरेचनम् ॥

हितः शोणितमोक्षश्च यच्चापि लघुभोजनम् ॥ २९ ॥

शूकदोषे हरेद्रक्तं पके शोधनरोपणम् ॥

तिंदुकत्रिफलालोघ्रैर्लेपस्तैलं च रोपणम् ॥ ३० ॥

इति श्रीयो० भगंदरोपशूकदोषचि० एकपष्टितमस्त०

द्वापष्टितमस्तरंगः ।

अथ कुष्ठानि ॥

अत्युग्रपातकाहारघर्मश्रमविरेकिणाम् ॥

कुष्ठान्यष्टादश नृणां जायन्ते चोग्रकर्मणाम् ॥ १ ॥

वातोत्तरेषु सर्पिर्वमनं श्लेष्मोत्तरेषु ॥

पित्तोत्तरेषु मोक्षो रक्तस्य विरेचनं श्रेष्ठम् ॥ २ ॥

एलाकुष्ठविडंगानि निशाह्वा चित्रको बला ॥

दंती रसांजनं चेति लेपः कुष्ठविनाशनः ॥ ३ ॥

निंबभूनिंबपाठाब्दपटोलत्रिफलानलैः ॥

श्यामाशम्योकगायत्रीभांगीवासकचंदनैः ॥ ४ ॥

वचामृताकणाशुंठीसठीद्राक्षानिशाह्वयैः

वत्सकत्वक्फलानंतामूर्वात्रायंत्यवल्गुजैः ॥ ५ ॥

ऐंद्रीगोपारुर्णाकट्ठीवृषंठुम्यैरिपपटैः ॥

कल्कचूर्णैः कपायाणां क्षौद्रयुक्तैरुपाचरेत् ॥ ६ ॥

क्रमः पित्तविसर्पितः पुष्करीमूढयोर्हितः ॥

त्वक्पाके स्पर्शहानौ च सेचयेन्मृदितं पुनः ॥ ७ ॥

बलातैलेन कोष्णेन मधुरैश्चोपनाहयेत् ॥

महाकपायो गोमूत्रे सर्वकुष्ठान्तको भवेत् ॥ ८ ॥

इति महाकषायः ॥

दूर्वाभयासैधवचंक्रमद्वकुठेरकाः कांजिकतक्रपिष्टाः ॥

त्रिभिः प्रलेपैरपि बद्धमूलां दद्रूं च कंडूं च निवारयन्ति ९

गोमूत्रवारिसंपिष्टैः शिलातालांशुतुथकैः ॥

लेपः किटिभवीसर्पकुष्ठनाशाय पूजितः ॥ १० ॥

१ खेरसार । २ ब्राक्षी । ३ इंद्रजो । ४ जत्रासो । ५ वाक्ची ।

६ इन्द्रायण । ७ सारिवा । ८ मजीठ । ९ कुटकी । १० भद्रुसो ।

११ विडंग । १२ पमार । १३ समभागः । पादांशः ।

आरग्वधस्य पत्राणि कांजिकेन प्रलेपयेत् ॥  
 दद्रूकिटिभकुष्ठानि हन्ति सिध्मानमेव च ॥ ११ ॥  
 स्थौणेयारुद्धनिशादूर्वाः सप्तवारप्रलेपनात् ॥  
 धतूररसापिष्टाश्च कंडुरक्तविनाशिकाः ॥ १२ ॥  
 कांसमर्दकमूलं तु सौवीरेण प्रपेपितम् ॥  
 दद्रूकिटिभकुष्ठानि जयेदतत्प्रलेपनात् ॥ १३ ॥  
 एडगजस्तिलसर्पपकुष्ठं भागधिकारजनीद्वयमुस्तम् ॥  
 पूतिकृतं दिवसत्रयमेतद्वन्ति सकुष्ठविसर्पककंदूः ॥ १४ ॥

सिंदूरगुग्गुलुरसांजनसिक्थतुतै-

स्तुल्यांशैः कदुकतैलमिदं विपक्वम् ॥  
 कच्छां स्वल्पिपडकिनीमथ वापि शुष्का-  
 मभ्यंजनेन सकृदुद्धरति प्रसह्य ॥ १५ ॥

इति सिंदूराद्यं तैलम् ॥

कृत्वा कज्जलिकां रंगौ च कुनटी द्वे जीरके द्वे निशे  
 गोदंतोपणनागएडगजिका वांकूचिका सर्पिषा ॥  
 लोहे लोहविमर्दितं दृढतरं माहेश्वराख्यं घृतं  
 कंडूकुष्ठविचर्चिकादिशमनं पामाहरं स्वेदनात् ॥ १६ ॥

इति माहेश्वरं घृतम् ॥

खदिरत्रिफलानिवपटोलामृतवासकैः ॥  
 अष्टकौऽयं जयेत्कुष्ठं कंडूविस्फोटकानि च ॥  
 विसर्पपामाकिटिभरोमांतिकमसूरिकाः ॥ १७ ॥

इति खदिराष्टकम् ॥

अर्कपत्ररसे पुरं हरिद्राकल्कसंयुतम् ॥

नाशयेत्सर्पपं तैलं पामां कच्छूं विचर्चिकाम् ॥ १८ ॥

इत्यर्कतैलम् ॥

मंजिष्ठात्रिफलाक्षशिलागंधकरात्रिभिः ॥

तैलमादित्यसंपक्वं पाषाकंडूविसर्पनुत् ॥ १९ ॥

इत्यादित्यपाकतैलम् ॥

हरितालशिलाब्दार्कपयोऽश्वारिजटात्रिवृत् ॥

शकृद्रसविशालारुंडानिशायुर्गदोरुचंदनैः ॥ २० ॥

कटुतैलं पचेत्प्रस्थं द्यक्षैर्विषपलान्वितैः ॥

सगोमूत्रं तदभ्यंगाद्द्रुकुष्ठविनाशकत् ॥

सर्वेष्वपि च कुष्ठेषु तैलमेतत्प्रयोजयेत् ॥ २१ ॥

इति लघुमरिचाद्यं तैलम् ॥

धात्रीखदिरयोः क्वाथं पीत्वा बल्गुजसंयुतत् ॥

शखेंदुधवलं श्वित्रं हन्ति तूर्णं न संशयः ॥ २२ ॥

मंथितेन पिवेच्चूर्णं काकोदुंबैरिवल्गुजम् ॥

तैलाक्तो घमसेवी स्यात्तक्राशी श्वित्रमुद्धरेत् ॥ २३ ॥

इंद्रासेनं समाधाय प्रशस्तेहनि चोद्धृतम् ॥

तच्चूर्णं मधुसर्पिभ्यां लिहेत्क्षरिं घृताशनः ॥ २४ ॥

हत्वा स सर्वकुष्ठानि जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥

तिलाज्यत्रिफलाक्षौद्रव्योपभलातशर्कराः ॥ २५ ॥

वृष्यः संतप्तमो मेध्यः कुष्ठहा कामचारिणः ॥

यः खादेदभयारिष्टमरिष्टामलकानि च ॥

स जयेत्सर्वकुष्ठानि मासादूर्ध्वं न संशयः ॥ २६ ॥

इति वृंदात् ॥

कुडवो वल्गुजवीजाद्वरितालचतुर्थभागसंमिश्रः ॥

मूत्रेण गवां पिष्टः सवर्णकरणः परः श्वित्रे ॥ २७ ॥

चत्वारो वोहंभागाः स्युर्द्वौ भागौ तु कुलिंजनात् ॥

मंस्तकी चैकभागा स्याद्यवानीपोटलीयुते ॥ २८ ॥

जले समुचिते हंड्यां घर्ममध्ये दिनत्रयम् ॥

संस्थाप्य तज्जलं लेपाद्वन्ति दद्रूं न संशयः ॥ २९ ॥

इति वोहजलम् ॥

चंद्रसूर्याख्यबीजानि प्रपुन्नाटस्य तानि च ॥

कंकत्या अपि बीजानि समांशत्रिनयं क्षिपेत् ॥ ३० ॥

सर्वद्विगुणतक्रेण सूक्ष्मं संपिष्य साधयेत् ॥

दिनत्रयं ततो बन्धगोमयेन प्रधर्षयेत् ॥ ३१ ॥

तं कल्कं लेपयेत्पश्चाद्दूर्गच्छति निश्चितम् ॥

निवगोपारुणार्कद्वीत्रायंतीत्रिफलाधनम् ॥ ३२ ॥

पर्पटावल्गुजानंतावचाखदिरचंदनम् ॥

पाठाशुंठीसटीभांगीवासाभूर्निववत्सकम् ॥ ३३ ॥

श्यामेद्रवारुणीमूर्वाविडंगेद्रविपानैलम् ॥

हस्तिकर्णामृताद्रेष्का पटोलं रजनीद्वयम् ॥ ३४ ॥

कणारग्वधसर्षपं कृष्णामूलोच्चटाफलम् ॥

मंजिष्ठा लांगली रास्ना नक्तमौलः पुनर्नवा ॥ ३५ ॥

दंती बीजकसारश्च भृंगराजंकुरंतकम् ॥

एषां द्विपलिकान्भागाजलद्रोणे विपाचयेत् ॥ ३६ ॥

१ बीजायोल २ मस्तगी । ३ हालेप्रसिद्धः । ४ कण्ठीकेबीज ।  
 ५ दद्रूइतिशेषः । ६ सारिवा । ७ मजीठ । ८ कुटकी । ९ निसेत ।  
 १० ऊटकटेहरीकेफल । ११ मोरेहरीस्याभावेमरोरफरी । १२ परण्ड ।  
 १३ सतपूरः । १४ पीपयमूल १५ चिरमिडि । १६ कंजा । १७ पी-  
 पावासो ।

अष्टभागावशिष्टं च कपायमवतारयेत् ॥  
 भल्लातकसहस्राणि क्षिप्त्वा त्रीण्यर्मणैर्भसि ॥ ३७ ॥  
 चतुर्भागावशिष्टं च कपायमवतारयेत् ॥  
 तौ कपायौ समादाय वस्त्रपूतौ च कारयेत् ॥ ३८ ॥  
 एकीकृत्य कपायौ तौ पुनरग्रावधिश्रयेत् ॥  
 गुडस्यैकतुलां दत्त्वा लेहवत्साधयेद्भिषक् ॥ ३९ ॥  
 भल्लातकसहस्राणां मज्जानं तत्र दापयेत् ॥  
 त्रिकटुत्रिफलामुस्तसैंधवानां पलंपलम् ॥ ४० ॥  
 विडंगं चित्रकं कुष्ठं चंदनं च पलंपलम् ॥  
 सौगंधिकस्य दातव्यं चूर्णं पलचतुष्टयम् ॥ ४१ ॥  
 दीप्यकस्य पलं चैव चातुर्जातं पलंपलम् ॥  
 संमेल्य प्रक्षिपेत्कोष्णे घृतभांडे निधापयेत् ॥ ४२ ॥  
 महाभल्लातको ह्येष महादेवेन निर्मितः ॥  
 प्राणिनां तु हितार्थाय नाशयेद्धीघ्रमेव तु ॥ ४३ ॥  
 चित्रमौदुंबरं दद्रुमृक्षजिह्वं सकाकणम् ॥  
 पुंडरीकं च चर्मख्यं विस्फोटं रक्तमण्डलम् ॥ ४४ ॥  
 कृच्छ्रं कापालिकं कुष्ठं पामां चापि विपादिकाम् ॥  
 वातरक्तमुदावर्तं पांडुरोगं वर्मि कृमीन् ॥ ४५ ॥  
 अर्शांसि पट्प्रकाराणि श्वासं कासं भगन्दरम् ॥  
 अनुपानेन दातव्यं छिन्नातोयेन वा भिषक् ॥ ४६ ॥  
 भोजनेन सदा योज्यमुष्णं चाम्लं विशेषतः ॥

इति महाभल्लातकः ॥

मुंडीरसेन संसिद्धं घृतं हन्ति विपादिकाम् ॥ ४७ ॥  
 मंजिष्ठा कुटजो घनामृतषचा शुंठीहरिद्राद्वयं



क्षुद्रारिष्टपटोलकुष्ठकटुकाभांगीविडंगाग्रिकम् ॥  
 मूर्वादारुकलिंगभृंगमगधात्रायंतिपाठावरी-  
 गार्थत्रीत्रिफलाकिरातकमहानिवासनारग्वर्थ ॥ ४८ ॥  
 श्यामावल्गुजचंदनं सवरुणं पूर्तीकशाखोटकम् ॥  
 वासापपेटसारिवाप्रतिविपानंताविपालाजलम् ॥  
 मंजिष्ठादिरयं कपायविधिना नित्यं पुमान्यः पिवे-  
 च्छग्दोषास्त्वचिरेण यांति विलयं कुष्ठानि चाष्टादश ॥ ४९ ॥  
 वातरक्ते प्रसुप्तौ च विसर्पे विद्रव्यौ तथा ॥  
 सर्वेषु रक्तदोषेषु मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥ ५० ॥

इति बृहन्मंजिष्ठादिः ॥

पिबति सकटुतैलं गन्धेषापाणचूर्णं  
 रविकिरणसुतप्तः पामलो यः पलार्द्रम् ॥  
 त्रिदिवसमाभिपिक्तः क्षीरभोजी च शीघ्रं  
 भवतिकनकदीप्तिः कामयुक्तो मनुष्यः ॥ ५१ ॥  
 क्षारास्त्रयस्त्रिकटुकं पंचैव लवणानि च ॥  
 वचा कुष्ठं हरिद्रे द्वे विडंगं चित्रकं विषम् ॥  
 हरितालशिलागंधर्षिदूरं तुत्थत्पर्परम् ॥ ५२ ॥  
 रामठं च रसोनश्च मदनं च रसांजनम् ॥  
 भल्लातकं वाकुचिका चोक्तं कर्पूरकं तथा ॥ ५३ ॥  
 लांगली च पटोली च हंसपादी तथैव च ॥  
 तेजनी मुरमांसी च कंषिष्ठं स्वदिरांतरम् ॥  
 एतच्चूर्णं समांशेन वज्र्यर्कपयसा श्रुतम् ॥  
 पङ्गुणं सार्षपं तैलं कारंजं वा विशेषतः ॥ ५५ ॥

तैलं गंधर्वजं वापि तिलतैलं तथैव च ॥  
 तैलाच्चतुर्गुणं मूत्रं गोमहिष्यश्वसंभवम् ॥ ५३ ॥  
 हस्तिगर्दभजं वापि तथोष्ट्राजाविजं क्षिपेत् ॥  
 सर्वमेकत्र संपक्वं कटाहे मंदवह्निना ॥ ५४ ॥  
 तैलावशेषं संगृह्य रुजामभ्यंगमाचरेत् ॥  
 वातरक्तविनाशाय दद्रुकंदूविचर्चिकाः ॥ ५५ ॥  
 अष्टादशानि कुष्ठानि मांसमेदोगतानि च ॥  
 दुष्टव्रणानि सर्वाणि जीर्णनाडीव्रणानि च ॥ ५६ ॥  
 भगंदरं च दुर्नामलूतागर्दभजालकम् ॥  
 एतत्तैलं सदाभ्यंगात्सर्वकुष्ठं व्यपोहति ॥ ५७ ॥  
 इति कुष्ठकालानलं तैलम् ॥

सिंदूरं चंदनं मांसी विडंगं रजनीद्वयम् ॥  
 प्रियंगु पद्मकं कुष्ठं मंजिष्ठा खदिरं वचा ॥ ५८ ॥  
 जात्यर्कत्रिवृत्तानिवाः करंजो विषमेव च ॥  
 कृष्णाचित्रकलोध्रं च प्रपुनाटं च संहरेत् ॥ ५९ ॥  
 श्लक्ष्णं पिष्टानि सर्वाणि योजयेत्तैलमात्रया ॥  
 अभ्यंजने प्रयुंजीत सर्वकुष्ठानि नाशयेत् ॥ ६० ॥  
 पामाविचर्चिकाकच्छूविसर्पादिहरं परम् ॥  
 रक्तपित्तेतिथितान्हंति रोगानेवंविधान्वहून् ॥ ६१ ॥  
 इति बृहत्सिंदूराद्यं तैलम् ॥

सैधवं मदनं रालं मधु सर्पिः पुरोगुडम् ॥  
 गैरिकं स्फुटितौ पादौ लिप्तौ पंकजसन्निभौ ॥ ६२ ॥  
 इति सैधवाद्यं घृतम् ॥

कार्पासिकापत्रविमिश्रकाक-

जंधारुतो मूलकबीजयुक्तः ॥

तन्नेण लेपः क्षितिपुत्रवारे

सिध्मानि सद्यो नयति प्रणाशम् ॥ ६६ ॥

उन्मत्तकस्य बीजानि मानकक्षारवारिणा ॥

कंदुतैलं विपक्तव्यं शीघ्रं हन्ति विपादिकाम् ॥ ६७ ॥

जंवीरद्रवमध्ये तु प्रक्षाल्यनटमंडनम् ॥

दशांशं टंकरणं दत्त्वा खंडशः परिमेलयेत् ॥ ६८ ॥

चतुर्गुणो गाढपटे निबध्य प्रहरद्वयम् ॥

दोलायंत्रेण संस्वेद्यं प्रदीपप्रमिते ऽनले ॥ ६९ ॥

चूर्णतोये कांजिके च कूष्मांडांबुनि तैलके ॥

त्रिफलांबुनि तत्पश्चात्क्षालयित्वाम्लवारिणा ॥ ७० ॥

ततः पलाशमूलत्वग्वारिपिष्टं प्रशोषयेत् ॥

महिषीमूत्रसंपिष्टं पुनस्तं परिशोषयेत् ॥ ७१ ॥

तं गोलकं शरावाभ्यां संपुटीकृत्य यत्नतः ॥

स्वाते गजपुटे पक्त्वा स्वांगशीतिं समुद्धरेत् ॥ ७२ ॥

अजादुग्धैः पुनः पिष्ट्वा शोषयेद्गोलकीकृतम् ॥

आढकं भस्म पालाशं हंडिकायां दृढं क्षिपेत् ॥ ७३ ॥

सम्यक्चूर्णस्य कुट्टवं दत्त्वा तत्र विनश्यत् ॥

स्थापयेद्गोलकं तत्र पुनश्चूर्णं च भस्म च ॥ ७४ ॥

यथाधूमो वह्निर्याति न तथा तां विमुद्रयेत् ॥

द्वात्रिंशत्प्रहरांश्रुत्यां वह्निं भक्तवदर्पयेत् ॥ ७५ ॥

स्वांगशीतिं समुद्धृत्य संचूर्ण्य नटमण्डनम् ॥

हिमकुन्देदुसंकाशं निर्धूमं कृष्णवर्त्मनि ॥ ७६ ॥  
 रक्तिकाऽस्य प्रदातव्या पुराणगुडयोगतः ॥  
 पथ्यं च चणकस्योक्तं रोटिका पष्टिकौदनम् ॥ ७७ ॥  
 निह्लोणं किंच नाप्यन्यन्न खोदेदेकविंशतिम् ॥  
 दिवा निवातगतिकः सर्वव्यापारवर्जितः ॥ ७८ ॥  
 गलत्कुष्ठं पुंडरीकं श्वित्रं कापालिकं तथा ॥  
 औदुंबरं ऋक्षजिह्वं काकणं स्फोटमुल्बणम् ॥ ७९ ॥  
 वातरक्तं पांडुरोगं दद्रूं पामां विचर्चिकाम् ॥  
 विसर्पमर्शांसि तथा विपादी च भगंदरम् ॥ ८० ॥  
 सर्वथा क्रमशो हन्ति सेवितं हरितालकम् ॥  
 अन्यानपि व्रणान्सर्वानंधकारमिवांशुमान् ॥ ८१ ॥

इति तालं । अत्र नागोपि ॥

तालताप्यशिलासूतं शुद्धं सैन्धवटकणम् ॥  
 समांशं चूर्णयेत्खल्वे सूताद्विगुणगंधकम् ॥ ८२ ॥  
 गंधतुल्यं मृतं ताम्रं जंवीरैर्दिनपंचकम् ॥  
 मर्दितं पट्पुटेः पाच्यं भूधरे संपुटोदरे ॥ ८२ ॥  
 पुटेपुटे द्रवैर्मर्द्य सर्वमेतत्तु पट्पलम् ॥  
 द्विपलं मारितं ताम्रं लोहभस्म चतुःपलम् ॥ ८३ ॥  
 जंवीराज्जलेन तत्सर्वं दिनं मर्द्य पुटेऽष्टयु ॥  
 त्रिंशदंशं विषं चास्य क्षिप्त्वा सर्वं विचूर्णयेत् ॥ ८४ ॥  
 माहिषाज्येन संमिश्र्य निष्कार्द्वं भक्षयेत्सदा ॥  
 मध्वाज्यैर्वाकुचीचूर्णं कर्पमात्रं लिहेदनु ॥  
 सर्वकुष्ठं निहंत्याशु महातालेश्वरो रसः ॥ ८५ ॥  
 इति महातालेश्वरो रसः ॥

गुंजाफलानि चूर्णानि लेपयेच्छ्वेतकुष्ठनुत् ॥

शिलापामार्गभस्मापि लिप्त्वां श्वित्रं विनाशयेत् ॥ ८७ ॥

भस्म सूतसमो गंधो मृतायस्ताम्रगुग्गुलु ॥

त्रिफला च महानिंबश्चित्रकश्च शिलाजतु ॥ ८८ ॥

इत्येतच्चूर्णितं कुर्यात्प्रत्येकं शाणपोडशम् ॥

चतुःपष्टिकरंजस्य बीजचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ८९ ॥

चतुःपष्टि मृतं चाभ्रं मध्वाज्याभ्यां विलोडयेत् ॥

स्निग्धभांडे धृतं स्वादेद्विनिष्कं सर्वकुष्ठनुत् ॥

रसः कुष्ठकुठारोऽयं गलत्कुष्ठविनाशनः ॥ ९० ॥

इति कुष्ठकुठारो रसः ॥

मांसेक्षुतैलांबुकुलत्थमाप-

विदाह्यभिष्यंदपयोदधीनि ॥

निष्पावपिष्टाध्यसनादि निद्रां

त्वग्दोषवान्ध्र्यां लवणं च जह्यात् ॥ ९१ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां कुष्ठचिकित्सा नाम

द्वापष्टितमस्तरंगः ॥

अथःपष्टितमस्तरंगः

अथ शीतपित्तोददौत्कोठः ॥

वरटीदंशवदेहे कंडूलः शीतपित्ततः ॥

उददः स पृथुः प्रोक्त उत्कोठो भूरितोदवान् ॥ १ ॥

गैरिकं सैधवं चैव कुसुंभं कुंकुमं समम् ॥

घृतलिप्ता अर्मी घ्रंति शीतपित्तमुददकम् ॥ २ ॥

सगुडां पिप्पलीं यस्तु स्वादेत्पय्यान्नभुङ्क्ते नरः ॥

तस्य नश्यंति समाहादुददाः सर्वदेहजाः ॥ ३ ॥

सिद्धार्थरजनीकल्कैः प्रपुञ्जाटतिलैः सह ॥

कटुतैलेन संमिश्रमेतदुद्धर्तनं हितम् ॥

शीतपित्त उद्वर्तितं उत्कोठे च विशेषतः ॥ ४ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां शीतपित्तोद्वर्तितकोठचिकित्सा-  
नाम त्रयःषष्टितमस्तरंगः

चतुःषष्टितमस्तरंगः

अथाम्लपित्तम् ॥

अत्यम्लकदुकाहारादन्तकाष्ठातिघर्षणात् ॥

दिवास्वप्नाद्रसस्तिक्तोम्लो ह्यास्याद्रवते बलात् ॥ १ ॥

अविपाककृमोत्केदतिक्ताम्लोद्गारगौरवैः ॥

हृत्कंठदाहारुचिभिश्चाम्लपित्तं वदेद्भिषक् ॥ २ ॥

वमनानन्तरं तत्र विरेकं मृदु कारयेत् ॥

सम्यग्वातविरक्तस्य सुस्निग्धस्यानुवासनम् ॥ ३ ॥

तिक्तभूयिष्ठमाहारं पाचनं चापि कल्पयेत् ॥

यवगोधूमविरुतिं तीक्ष्णसंस्कारवर्जितम् ॥

यथाश्वं लाजसक्तूंश्च सितामधुयुतां ह्रिहेत् ॥ ४ ॥

निस्तुषयववृषधात्रीकाथस्त्रिसुगंधिमधुयुतःपीतः ॥

अपनयति चाम्लपित्तं यदि भुंक्ते मुद्गयूपेण ॥ ५ ॥

एलातुगाचोचशिवाभयानां

त्वर्ग्रंथिपाठीरदलालकानाम् ॥

चूर्णं सितातुल्यमपाकरोति

प्रौढाम्लपित्तं दिवसाष्टभुक्तम् ॥ ६ ॥

इति बौद्धसर्वस्वात् ॥

कुडवमितमिह स्यान्नालिकेरं सुपिष्टं ।  
 पलपरिमितसर्पिः पाचितं खंडतुल्यम् ॥  
 निजपयसि तदेतत्प्रस्थमात्रे विपक्वं  
 गुडवदथ सुशीते शाणमात्रं क्षिपेच्च ॥ ७ ॥  
 धान्याकपिप्पलिवयोदतुगाद्विजीरैः  
 साकं त्रिजातमिभकेशरवद्विचूर्ण्य ॥  
 हंत्यम्लपित्तमरुचिं क्षयमस्रपित्तं  
 गूलं वामिं सकलपौरुषकारि पुंसाम् ॥ ८ ॥

इति नालिकेरखंडः योगरत्नावलीतः ॥

शुद्धसूतसमं गंधं मृतताम्राभ्ररूप्यकम् ॥  
 तुल्यांशं मर्दयेद्यामं रुद्धा लघुपुटे पचेत् ॥ ९ ॥  
 अक्षधात्रीहरीतक्यः क्रमवृद्ध्या विपाचयेत् ॥  
 जलेनाष्टगुणेनैव ग्राह्यमष्टावशेषकम् ॥ १० ॥  
 अनेन भावयेत्पूर्वं पक्वं सूतं पुनः पुनः ॥  
 पंचविंशतिवारं तु तावता भृंगजैर्द्रवैः ॥ ११ ॥  
 शुष्कं तच्चूर्णितं खादेत्पंचगुंजं मधुशुतम् ॥  
 रसो लीलाविलासोयमम्लपित्तं नियच्छति ॥ १२ ॥  
 इति लीलाविलासो रसः ॥  
 कूष्माण्डस्य रसो ग्राह्यः पलानां शतमात्रकम् ॥  
 रसतुल्यं गवां क्षीरं धात्रीचूर्णं पलाष्टकम् ॥ १३ ॥  
 लघ्वग्निना पचेत्तावद्यावद्भवति पिंडितम् ॥  
 धात्रीतुल्या सिता योज्या पलाई लेहयेत्सदा ॥  
 अम्लपित्तं वातपित्तं मूर्छां श्वासं च नाशयेत् ॥ १४ ॥  
 इति कूष्माण्डालेहः रसरत्नप्रदीपात् ॥

पिप्पल्याः कुडवं चूर्णं घृतस्य कुडवद्वयम् ॥  
 पलषोडशकं खंडाच्छतांवर्षाः पलाष्टकम् ॥ १५ ॥  
 शिवायाः स्वरसस्यापि पलषोडशकं मतम् ॥  
 क्षीरप्रस्थद्वये साध्यं लेहीभूतेत्र निक्षिपेत् ॥ १६ ॥  
 त्रिजातकाभयाजाजीधान्यमुस्तशिवातुगाः ॥  
 एतेषां कार्पिकं चूर्णं कर्पाई कृष्णजीरकम् ॥ १७ ॥  
 नागरं नागकं जातिफलं समरिचं हिमम् ॥  
 दत्त्वा पलत्रयं क्षौद्रं स्निग्धभांडे निधापयेत् ॥ १८ ॥  
 प्रातर्यथावलं लिह्यादम्लपित्तप्रशांतये ॥  
 हृल्लासारोचकच्छर्दिपिपासादाहनाशनम् ॥  
 गूलहृद्रोगशमनं हृद्यं चेदं रसायनम् ॥ १९ ॥

इति खंडपिप्पली योगरत्नावलीतः ॥

द्राक्षापथ्ये समे कृत्वा तयोस्तुल्यां सितां क्षिपेत् ॥  
 संकुट्याक्षद्वयमितां तर्पिडीं रचयेद्विपक् ॥ २० ॥  
 तां खादेदम्लपित्तार्तो हृत्कंठदहनापहाम् ॥  
 तृणमूर्छाभ्रममंदाग्निनाशिनीमामवानहाम् ॥ २१ ॥

इति द्राक्षादिगुटिका ॥ अत्रापि चंद्रकरसः ॥

त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगदहनाः समाः ॥  
 एतेषां चूर्णितानां च प्रत्येकं च पलं भवेत् ॥ २२ ॥  
 कर्पद्वयं गंधकस्य तदूर्ध्वं पारदस्य च ॥  
 विडालपदमात्रं तु लिह्यात्समधुसर्पिषा ॥ २३ ॥  
 शीतोदकं चानुपिवेत्कमाद्यूपं पयस्तथा ॥  
 अम्लपित्तं चाग्निमाद्यं परिणामरुजं तथा ॥



कामलां पांडुरोगं च हन्यादत्र न संशयः ॥ २३ ॥

इति रसामृतं चूर्णम् ॥

शतावरीमूलकल्के घृतं सिद्धं पयोऽश्वितम् ॥

पचेन्मृद्वग्निना गव्यं क्षीरं दत्वा चतुर्गुणम् ॥ २५ ॥

नाशयेदम्लपित्तं च वातपित्तभवान्गदान् ॥

रक्तपित्तं तृपां मूर्छां श्वासं संतापमेव च ॥ २६ ॥

इति शतावरीघृतं योगरत्नावलीतः ॥

यंवकृष्णापटोलानां काथं क्षौद्रयुतं पिवेत् ॥

नाशयेदम्लपित्तं च वर्मि चारुचिमेव च ॥ २७ ॥

अम्लपित्ते प्रयोक्तव्यः कफपित्तहरो विधिः ॥

गुडकूष्मांडकं चैव तथा खंडामलक्यपि ॥

गुडक्षीरकणासिद्धं सर्पिर्वात्र प्रयोजयेत् ॥ २८ ॥

इति योगतरंगिण्यां अम्लपित्तचिकित्सा नाम

चतुःषष्टितमस्तरंगः ॥

पञ्चषष्टितमस्तरंगः

अथ विसर्पः ॥

क्षुद्रपामाकृतिर्देहे परितः परिसर्पणात् ॥

विसर्पो जायते जंतोस्तोदस्त्रावरुजाकरः ॥ १ ॥

विरेकवमनालेपसेवनासृग्बिमोक्षणात् ॥

उपाचरेद्यथादोषं विसर्पानविदाहिभिः ॥ २ ॥

शिरीषयष्टीनवचंदनैलामांसीहरिद्राद्वयकुष्ठवालैः ॥

लेपो दशांगः सघृतः प्रयोज्यो विसर्पदुष्टघ्नणशोथहारी ३

इति दशांगः ॥

वृषखदिरपटोलपत्रनिव-  
मृतमामलकीकपांयकलैः ॥

घृतमभिनवमेतदाशु यकं

जयति सदास्त्रविसर्पकुष्ठगुल्मान् ॥ ३ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां विसर्पचिकित्सानाम्

पञ्चपष्टितमस्तरंगः

पट्टपष्टितमस्तरंगः ।

अथ विस्फोटाः

अग्निदग्ध इव स्फोटा विस्फोटाः स्युर्ज्वराननाः ॥

क्वचित्सर्वत्र देहेषु रक्तपित्तसमुद्भवाः ॥ १ ॥

किराततिक्तकारिष्टयष्ट्याह्वांशुदवासकम् ॥

पटोलपर्पटोशीरत्रिफला कौटजान्वितम् ॥

किरातादिरयं प्रोक्तो गणो विस्फोटनाशनः ॥ २ ॥

पटोलसप्तच्छदनिववासाफलत्रिकछिन्नरुहाविषकम् ॥

तत्पंचतिक्तं घृतमाशु हन्याच्चिदोषविस्फोटविसर्पकंदूः

पटोलामृतभूनिववासकारिष्टपर्पटैः ॥ ३ ॥

खदिराह्वयुतैः काथो विस्फोटज्वरशांतये ॥ ४ ॥

चंदनं नागपुष्पं च तंडुलीयकवारिणा ॥

शिरीषवल्कलं जातिलेपः स्यादाहनाशनः ॥ ५ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां विस्फोटचिकित्सानाम्

पट्टपष्टितमस्तरंगः

सप्तपष्टितमस्तरंगः

अथ स्नायुकः

शाखासु कुपितो दोषः शोफं कृत्वा विसर्पवत् ॥

कुर्युस्तंतुनिभान्कीरान्स्नायवस्ते निरूपिताः ॥ १ ॥

कुष्ठरामठशुंठीभिः कल्कं शिशुसंमन्वितम् ॥

पाजलेपनयोगेन तंतुकीटविनाशनम् ॥ २ ॥

गव्यं सर्पिरुयहं पीत्वा निर्गुडीस्वरसं व्यहम् ॥

पिवेत्स्नायुकमत्युग्रं निहंत्येव न संशयः ॥ ३ ॥

शिशुमूलदलैः पिष्टैः कांजिकेन ससैधवैः ॥

लेपनं स्नायुरोगाणां शमनं परमुच्यते ॥ ४ ॥

इति स्नायुकचिकित्सा ॥

अथ मसूरिका ॥

मसूराकृतिसंस्थानः पिडिकाः स्युर्मसूरिकाः ॥

आसां पूर्वं ज्वरः कंडूर्गात्रभंगो रतिर्ध्रुमः ॥ ५ ॥

अमृतवृषपटोलं मुस्तकं सप्तपर्णं

खदिरमसितवेत्रं निवपत्रं हरिद्रे ॥

विविधविषविस्पर्णकुष्ठाविस्फोटकण्डू-

रपनयाति मसूरीः शीतपित्तं ज्वरं च ॥ ६ ॥

इत्यमृतादिः ॥

कपीतनक्षीतकरात्रियुग्ममांसीनतैलामेयवारिशतैः ॥

लेपः सप्तर्षिः प्रणुदत्यवश्यं विस्फोटदाहज्वरकान्विसर्पान्

इति दशांगलेपः

पटोलमूलारुणतंडुलानां तथैव धात्रीखदिरैण संयुतम्

पिवेज्जलं सुकथितं सुशीतं मसूरिकारोगविनाशनं परम् ८

यस्तु कोद्रवको नाम कफमारुतकोपजः ॥

सप्ताहाद्वादशाहाद्वा स्वयमेवोपशाम्यति ॥ ९ ॥

दिवसैरेकविंशत्या शाम्यन्ति च मसूरिकाः ॥

स्तोत्रपाठग्रहजपैर्धर्मपावनकर्मभिः ॥

शीतलाराधनैश्चण्डीपाठैश्चैता उपाचरेत् ॥ ११ ॥

इति योगतरंगिण्यां मसूरिकाचिकित्सानामसप्तप-

ष्टितमस्तरंगः

अष्टषष्टितमस्तरंगः

अथ क्षुद्ररोगाः ॥

क्षुद्ररोगाः समासेन चतुर्द्विंशत्प्रकीर्तिताः ॥

ग्रंथभूयस्त्वभीत्या च वक्ष्यामि कियतोऽत्र तान् ॥ १ ॥

तत्राजगल्लिकामामां जलौकाभिः समाचरेत् ॥

विवृतार्मिद्रवृद्धां च गर्दभीं जालगर्दभीम् ॥ २ ॥

इरवेल्लीगंधनाम्रीं जयेत्पित्तविसर्पवत् ॥

मधुरौपधिसिद्धेन सर्पिषा च जयेद्व्रणम् ॥ ३ ॥

रक्तावशेषैर्वहुभिः स्वेदनैरपतर्पणैः ॥

जयेद्विदारिकां लेपैः शिशुदेवदुमोद्भवैः ॥ ४ ॥

पनसिकां कच्छपिकां तेनैव विधिना जयेत् ॥

साधयेत्कठिनानन्याञ्छोथान्दोषसमुद्भवान् ॥ ५ ॥

अंधालर्जां कच्छपिकां तथा पापाणगर्दभीम् ॥

सुरदारुशिलाकुष्ठैः स्वेदयित्वा प्रलेपयेत् ॥ ६ ॥

कफमारुतसंभूते लेपः पापाणगर्दभे ॥

शस्त्रेणोत्कृत्य बल्मीकं क्षाराग्निभ्यां प्रसाधयेत् ॥ ७ ॥

मनःशिलां लभह्यातसूक्ष्मैलागुरुचंदनैः ॥

जातीपल्लवयुक्तैश्च निवर्तैलं विपाचयेत् ॥ ८ ॥

बल्मीकं नाशयेत्तद्वि बहुच्छिद्रं बहुद्रवम् ॥

शिरां च पाददारीषु वेधयेत्तलशोधनीम् ॥ ९ ॥

स्नेहस्वेदोपपन्नौ तु पादावालेपयेन्मुहुः ॥  
 मधूच्छिष्टवसोमज्जाघृतक्षीरैर्विमिश्रितैः ॥ १० ॥  
 सज्जाह्नसिंधूद्भवयोश्चूर्णं मधुघृतप्लुतम् ॥  
 निर्मथ्य कटुतैलाक्तं हितं पादप्रमार्जनम् ॥ ११ ॥  
 करंजबीजं रजनी कासीसं मधुकं मधु ॥  
 रोचना हरितालं च लेपोऽयमलसे हितः ॥ १२ ॥  
 देहत्वेदरमुद्धृत्य तैलेन दहनेन वा ॥  
 चिप्यमुष्णांबुनां स्विन्नमाकृष्याभ्यज्य तं व्रणम् ॥ १३ ॥  
 दत्त्वा सर्जरसं चूर्णं बुद्ध्या व्रणवदाचरेत् ॥  
 स्वरसेन हरिद्रायाः पात्रे कृष्णाघसेऽभयाम् ॥ १४ ॥  
 संस्थाप्य तज्जकल्केन लिपेच्चिप्यं मुहुर्मुहुः ॥  
 निबोदकेन वमनं पद्मिनीकंटके हितम् ॥ १५ ॥  
 निबोदकरुतं सर्पिः सक्षौद्रं पानमिष्यते ॥  
 अहिपूतनके धाड्याः पूर्व स्तन्यं विशोधयेत् ॥ १६ ॥  
 त्रिफलाखदिरकाथो व्रणानां पूर्वधावने ॥  
 रसांजनं विशेषेण पानलेपनयोर्हितम् ॥ १७ ॥  
 गुदभ्रंशे गुदस्नेहैरभ्यज्याशु प्रवेशयेत् ॥  
 प्रविष्टं स्वेदयेचापि वज्रं गोफणया दृढम् ॥ १८ ॥  
 कोमलं पद्मिनीपत्रं यः स्वादेच्छर्करान्वितम् ॥  
 एतन्निश्चित्य निर्दष्टं न तस्य गुदनिर्गमः ॥ १९ ॥  
 मूपिकानां वसाभिर्वा गुदे सम्यक्प्रलेपनम् ॥  
 स्विन्नमूपिकमांसैर्वा स्वेदाच्च गुदनिर्गमः ॥ २० ॥  
 चर्मकीलं जतुमणिं मापकं तिलकालकम् ॥  
 उद्धृत्य शस्त्रेण दहेत्क्षाराग्निभ्यामशेषतः ॥ २१ ॥

युवानपिडिकान्यच्छनीलिकान्यंगशर्कराः ॥  
 शिराव्यधैः प्रलेपैश्च जयेदभ्यंजनैस्तथा ॥ २२ ॥  
 लोधधान्यवचालेपस्तारुण्यपिडिकापहः ॥  
 व्यंगेषु चार्जुनत्वक्च मंजिष्ठावृषमाक्षिकैः ॥ २३ ॥  
 लेपः सनवनीतो वा श्वेताश्वखुरजामसी ॥  
 रक्तचंदनमंजिष्ठाकुष्ठं लोध्रं तथैव च ॥ २४ ॥  
 बटांकुराश्च व्यंगघ्ना बहुकांतिप्रदास्तथा ॥  
 केवलान्पयसा पिष्ट्वा तीक्ष्णाञ्छालमलिकंठकान् ॥ २५ ॥  
 आलिसं त्र्यहमेतेन भवेत्पद्मोपमं मुखम् ॥  
 पुराणमथ पिण्याकं पुरीषं कुक्कुटस्य च ॥ २६ ॥  
 मूत्रपिष्टप्रलेपोयं शीघ्रं हन्यादरूपिकाम् ॥  
 लेपयेत्परितः कल्कैस्तैलमभ्यंजने हितम् ॥ २७ ॥  
 कुटनंटीशिखीजातीकरंजकस्तुत्यकैः ॥  
 हरिद्राद्वयमंजिष्ठा त्रिफलारिष्टचंदनैः ॥  
 एतत्तैलमरूपीणां सिद्धमभ्यंजने हितम् ॥ २८ ॥  
 इति हरिद्रादितैलम्  
 इंद्रलुप्ते शिरां विध्वा शिलाकासीतस्तुत्यकैः ॥  
 लेपयेत्परितः कल्कैस्तैलमभ्यंजने हितम् ॥ २९ ॥  
 कुटनंटीशिखीजातीकरंजकस्वीरकैः ॥  
 अवगाढं पदं चापि प्रच्छाद्य च पुनःपुनः ॥ ३० ॥  
 गुंजाफलैश्चिरं लिपेत्केशभूर्मि समंततः ॥  
 इंद्रलुप्तापहो लेपो मधुना बृहतीरसः ॥ ३१ ॥  
 हस्तिदंतमर्षी कृत्वा छागक्षीरी रसांजनम् ॥

रोमाण्यनेन जायंते लेपात्पाणितलेष्वपि ॥ ३२ ॥

लोहमेलामलकलैः सजपाकुसुमैर्नरः सदा स्नायी ॥

पालितानीह न पश्यति गंगास्नायीव नरकाणि ॥ ३३ ॥

मंजिष्ठा मधुकं लाक्षा मातुलुंगश्च यष्टिका ॥

• कर्पूरमाणैरेतैस्तु तैलस्य कुडवं तथा ॥ ३४ ॥

आजं पयस्तु द्विगुणं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥

नीलिका पिडिकाव्यंगमभ्यंगादेव नाशयेत् ॥ ३५ ॥

मुखं प्रसादोपचिनं नीलकार्कश्यवर्जितम् ॥

तत्तत्रात्रप्रयोगेण भवेत्कनकसुन्दरम् ॥ ३६ ॥

इति मंजिष्ठाद्यं तैलम् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां क्षुद्ररोगचिकित्सा नामा-

ष्टापष्टितमस्तरङ्गः ॥ ६८ ॥

एकोनसप्ततितमोऽध्यायः

प्रोक्तं यज्जनकात्मजेन तदिदं रोगापहं प्राणिनाम् ॥ ३ ॥

इति खदिराद्यं तैलम् ॥

रोगेषु वक्रगलनालुसमुत्थितेषु

काथः फलात्रिककटुत्रयकट्फलानाम् ॥

स्याद्वाथ पर्पटककट्फलविश्वभांगी-

भूतीकंधान्यघनदारुवचाभयानाम् ॥ ४ ॥

इति चिकित्सातः ॥

संचर्वितैर्वक्रधृतैः प्रशान्ति

वक्रामयो गच्छति जातिपत्रैः ॥

दंताश्च बीजैर्वहुलहुमस्य

स्थानच्युता अप्यचला भवंति ॥ ५ ॥

माक्षिकं पिप्पलीसर्पिर्विभिन्नं धारयेन्मुखे ॥

दंतगूलहरं प्रोक्तं प्रधानमिदमौषधम् ॥ ६ ॥

दंतचालेषु गंडूषो वबूलत्वक्कृतो हितः ॥

गृहधूमयवक्षारपाठाव्योपरसांजनैः ॥ ७ ॥

तेजोह्वा त्रिफला लोध्रश्चित्रकश्चेति चूर्णितः ॥

सक्षौद्रं धारयेदास्ये गलरोगविनाशनम् ॥ ८ ॥

इति कालकचूर्णम् ॥

सिद्धं केवलं धार्यं दंतगूलविनाशनम् ॥

जैपाललेपो दंतानां पीडाळमिविनाशनः ॥ ९ ॥

फलान्यम्लानि शीतांबु रूक्षान्नं दंतधावनम् ॥

तथातिकठिनं भक्ष्यं दंतरोगी विवर्जयेत् ॥

मनःशिला यवक्षारो हरितालं ससैधवम् ॥

दार्वी त्वक्चेति संचूर्ण्य माक्षिकेण समन्वितम् ॥ ११ ॥



मूर्छितं घृतमण्डेन कंठरोगेषु धारयेत् ॥

मुखरोगेषु च श्रेष्ठं पीतकं नामकीर्तितम् ॥ १२ ॥

इति पीतकं चूर्णम् ॥

जीवन्तिकामदनतुत्यकचित्रवल-

मेदायुतं कमलशालिसमन्वितं वा ॥

दुग्धं शृतं शमयति स्फुटितोपसर्ग-

मालेपनादधरसंस्त्रवमाशु हन्यात् ॥ १३ ॥

सघृतफोणिततैलविमिश्रितं

कनकगैरिकसर्जसमन्वितम् ॥

सलवणं मदनं विनिवारय-

त्यधरजान्स्फुटितांश्च महात्रणान् ॥ १४ ॥

जातीपत्रपुनर्नवातिलकणाकोरंटकुष्ठं वचा

शुंठीदीप्यहरीतकीसमरुतं चूर्णं मुखे धारितम् ॥

घातघ्नं कृमिदन्तशूलशमनं दुर्गन्धदोषापहं

शैथिल्यक्षयकारि दन्तपटुतावीजं च जात्यादिकम् ॥ १५ ॥

इति जात्यादिकवलः योगरत्नावल्याः ॥

काञ्चनारत्वचः क्वाथः प्रातर्गदूपकैर्धृतः ॥

जिह्वादरदरं हन्ति स्फोटानपि रुजाकरान् ॥ १६ ॥

इति वृन्दान् ॥

कुष्ठैलवालुकैलासमधुकधान्याकयाष्टिमधुकवलः ॥

हरति मुखपूतिगन्धं रसोनमदिरादिगन्धं च ॥ १७ ॥

प्रियंगुकाश्मीरजकोलमज्जा-

ईविरैकैश्वदनभागयुक्तैः ॥

पिष्टैः प्रलेपो विहितो मुखस्य  
 द्युतिं शंशांकादधिकां विधत्ते ॥ १८ ॥  
 तांबूलमध्यस्थितचूर्णकेन  
 दग्धं मुखं यस्य भवेत्कथंचित् ॥  
 तैलेन गंडूषमसौ विदध्या-  
 दम्भारनालेन पुनःपुनर्वा ॥ १९ ॥

इति राजमार्तडात् ॥

जातीदलैलामधुमातुलुंगपत्रैः सलाजैर्युतपिप्पलीकैः ॥  
 कृतोवलेहः कुरुते नराणां कंठे ध्वनिकिन्नरनादतुल्यं २०  
 कुंकुमं चंदनं पत्रमुशीरं कमलोत्पलम् ॥  
 गोरोचना हरिद्रे द्वे मंजिष्ठामधुयष्टिका ॥ २१ ॥  
 सारिवालोध्रपत्तंगाः कुष्ठं गैरिककेसरे ॥  
 स्वर्णबल्ली प्रियंगुश्च कालेयं रक्तचंदनम् ॥ २२ ॥  
 एभिरक्षमितैर्भगैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥  
 अभ्यङ्गाद्राजपत्नीनां ये चान्ये धनिनो नराः ॥ २३ ॥  
 तिलकाः पिडिका व्यंगा नीलिका मुखदूषिकाः ॥  
 नश्यंत्यनेन देहस्य दुःस्त्राया च विवर्णता ॥ २४ ॥  
 नाशयित्वा च जनयेद्रूपं चातिमनोहरम् ॥  
 पद्मकेसरवर्णाभं मुखं भवति कांतिमत् ॥ २५ ॥

इति कुंकुमाद्यं तैलम् । वैद्यालंकारात् ॥

जातीपत्रामृताद्राक्षार्यासदावींफलत्रिकैः ॥  
 काथः क्षौद्रयुतः शीतो गंडूषान्मुखपाकजित् ॥ २६ ॥  
 पटोर्लानिवजंब्वाभ्रमालतीनां च पल्लवैः ॥

कृतः काथः प्रयोक्तव्यो मुखपाकस्य धावने ॥ २७ ॥  
 सप्तच्छदोशीरपटोलमुस्ताहरीतकीमुस्तकरोहिणीभिः ॥  
 यष्ट्याह्वराजद्रुमचन्दनैश्च काथं पिवेत्पाकहरं मुखस्य २८  
 खदिरस्य तुलां तोयद्रोणे पक्काष्टशेषिते ॥  
 जातीकोशेंदुपूगाघचातुर्जातमृगांडजैः ॥ २९ ॥  
 पृथक्कर्पमितैः पिष्टैर्मेलयित्वा चणोपमाम् ॥  
 गुटीं कृत्वा मुखे धृत्वा सा निहत्यखिलान्नादान् ॥  
 जिह्वादंतोष्ठवदनगलतालुसमुद्भवान् ॥ ३० ॥

इति खदिरगुटी ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां मुखरोगचिकित्सा नाम

एकोनसप्ततितमस्तरंगः ॥

सप्ततितमस्तरंगः

अथ कर्णरोगः ॥

करोति विगुणो वायुर्मलं संगृह्य कर्णयोः ॥  
 सकफः पाकवाधिर्यगूलस्त्रावादिकान्नादान् ॥ १ ॥  
 तैलं कांजिकबीजपूरकरसक्षौद्रैः समूत्रैः गृतं  
 स्यात्क्षौद्रार्द्रकशिथुमूलकदलीकंदद्रवैर्वा समैः ॥  
 गुंठीतुंबुरुर्हिगुभिः गृतमथ स्यात्कर्णगूलापहं ॥  
 सिद्धं विल्वगणेन साजपयसा मूत्रेण वाधिर्यजित् ॥ २ ॥

हिं ग्वब्ददारुमिसिमूलकभस्मभूर्ज-

त्वक्क्षारसिंधुरुचकोद्भिदशिथुविश्वैः ॥

सस्वर्जिकाविडवचांजनमातुलंग-

रंभारसैः समंधुशुद्धमिदं विपक्वम् ॥ ३ ॥

तैलं प्रसिद्धमापि तच्छृवणामयघ्नं

कर्णप्रसादवधिरत्वहरं नराणाम् ॥

भ्रूमस्तकश्रवणशङ्कुलिकांतरैषु

गूलापहं चरकशास्त्रचिकित्सितोक्तम् ॥ ४ ॥

इति क्षारतैलं चिकित्सातः ॥

रामठं निंदपत्राणि फेनं सागरसंभवम् ॥

एतानि समभागानि सद्भिर्देयं सितं विषम् ॥ ५ ॥

गोमूत्रेण समायुक्तं कटुतैलं विपाचयेत् ॥

तेनैव पूरयेत्कर्णं नरकुंजरवाजिनाम् ॥ ६ ॥

कर्णरोगं निहंत्याशु लेपनाच्छिरसो गदान् ॥

नाम्ना कर्णामृतं तैलं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥ ७ ॥

इति कर्णामृतं तैलम् ॥

आर्द्रकसूर्यावर्तकसौभांजनकमूलकंस्वरसाः ॥

मधुतैलसैधवयुताः पृथगुक्ताः कर्णगूलहराः ॥ ८ ॥

अर्कस्य पत्रं परिणामपीत-

माज्येन लिप्तं शिखिना च तप्तम् ॥

आर्पीडय तोयं श्रवणेभिपिक्तं

निहंति गूलं बहुवेदनं च ॥ ९ ॥

तीव्रगूलातुरे कर्णे सशब्दे क्लेदवाहिनि ॥

छागमूत्रं प्रशंसन्ति कोष्णं सैधवसंयुतम् ॥ १० ॥

हिंशुतुंबुरुशुंठीभिः कटुतैलं विपाचयेत् ॥

कर्णगूले प्रणादे वा पूरणं हितमुच्यते ॥ ११ ॥

इति हिग्वाद्यं तैलम् । चिकित्सातः ॥

अपामार्गक्षारजलेतत्कृतकल्केन साधितं विजलम् ॥

अपहरति कर्णनादं वाधिर्यं चापि पूरणतः ॥ १२ ॥

इत्थपामार्गतैलम् ॥

शंवूकंस्य तु मांसेन कटुतैलं विपाचयेत् ॥

तस्य पूरणमात्रेण कर्णनाडी प्रशाम्यति ॥ १३ ॥

इति शम्बूकतैलम् ॥

चूर्णेन गंधकाशिलारजनीभवेन

मुष्टधंशकेन कटुतैलपलायकं तु ॥

धत्तूरपत्ररसतुल्यमिदं विपकं

नाडी जयेच्चिरभवामपि कर्णजाताम् ॥ १४ ॥

इति गन्धकतैलम् । योगरत्नावलीतः ॥

शुष्कमूलकशुंठीनां क्षारो हिंगु सनागरम् ॥

सुक्तं चतुर्गुणं दद्यात्तैलमेतद्विपाचयेत् ॥ १५ ॥

वाधिर्यं कर्णशूलं च पूयस्त्रावं च कर्णयोः ॥

कृमयश्चापि नश्यन्ति तैलस्यास्य च पूरणात् ॥ १६ ॥

इति लघुक्षारतैलं कृष्णात्रेयात् ॥

स्वर्जिकामूलकं शुष्कं हिंगु कृष्णा महौषधम् ॥

शतपुष्पा च तैस्तैलं मस्तुपकं चतुर्गुणम् ॥ १७ ॥

कर्णनादं च वाधिर्यं शूलं वास्य व्यपोहति ॥

वाधिर्यं बालवृद्धोत्थं चिरोत्थं च विवर्जयेत् ॥

स्नानं शीतांबुषानं च मैथुनं च विवर्जयेत् ॥ १८ ॥

महिषीनवनीतयुतं सप्ताहं धान्यराशिपर्युपितम् ॥

नवमुसालिकंदचूर्णं वृद्धिकरं कर्णपार्लीनाम् ॥ १९ ॥

शतावरीवाजिगन्धापयस्पेरंडवीजकैः ॥

तैलं विपक्वं सक्षीरं पालीनां वृद्धिकृत्परम् ॥

इति शतावरीतैलम् ॥

इतिश्रीयोगतरंगिण्यां कर्णरोगचिकित्सानाम  
सप्ततितमस्तरंगः ॥

एकसप्ततितमस्तरंगः

अथ नेत्ररोगः ॥

अंजनं पूरणं क्वाथपानं मानेन शस्यते ॥

आ चतुर्थादिनादाममभिष्यंदोपि लोचनम् ॥ १ ॥

गंडूषांजननस्यादिहीनानां कफकोपतः ॥

षट्सप्ततिर्नेत्ररोगा दुःसहाः स्युरुपेक्षिताः ॥ २ ॥

रसटकणार्सिधूत्यव्योषस्वर्परतुत्थकैः ॥

सवेतसाम्लैः सक्षौद्रैर्वर्तिर्नेत्रगदापहा ॥ ३ ॥

इति रसादिवर्तिः रसरत्नप्रदीपात् ॥

जीवंती मधुकं द्राक्षा कटुकस्य फलानि च ॥

सटी पुष्करमूलं च व्याघ्री गोकुुरकं बला ॥ ४ ॥

नीलोत्पलं चामलकीं त्रायमाणां दुरालभम् ॥

पिप्पलीं च समः पिष्ट्वा घृतं चैव विपाचयेत् ॥ ५ ॥

एतद्व्याधितमूहस्य रोगराजं समुच्छिन्नम् ॥

रूपमेकादशैर्विधं सर्पिरेव व्यपोहति ॥ ६ ॥

इति नेत्ररोगे जीवंत्याद्यं घृतम् ॥

लंघनालेपनस्वेदशिराव्यधनरेचनैः ॥

उपाचरेदभिष्यंदमंजनाश्रुतेनादिभिः ॥ ७ ॥

अक्षिकुक्षिभवा रोगाः प्रतिश्यायव्रणज्वराः ॥

पंचैते पंचरात्रेण रोगा नश्यन्ति लंघनात् ॥ ८ ॥

पद्मसप्ततिलोचनजा विकारा-  
 स्तेषामभिप्यंदसमुद्भवानाम् ॥  
 श्लेष्माश्रयत्वादिह लंघनं प्राक्  
 प्रशस्यते मुद्गरसौदनं च ॥ ९ ॥  
 आभ्योतने सत्रिफला सलोप्रा  
 सचंदना दारुनिशा प्रशस्ता ॥  
 आलेपने चंदनगौरिकं च  
 सताक्ष्यशैलाभयमेतद्विष्टम् ॥ १० ॥

यष्टीगुडूचीत्रिफलासदावी-  
निःकाथ्य तत्काथंमथ प्रभाते ॥  
निपीय नेत्रे च निपिच्यतेन  
सद्योक्षिपाकं विजहाति जंतुः ॥ १७ ॥

इति यष्ट्याः काथः ॥

त्रिफलाया रसप्रस्थं प्रस्थं भृंगरसस्य च॥  
वृषस्य च रसप्रस्थं शतावर्याश्च तत्समम् ॥ १८ ॥  
आजं क्षीरं गुडूच्याश्च आमलक्या रसं तथा ॥  
उत्पलं मधुकं क्षीरं काकोली त्रिफला कणा ॥ १९ ॥  
द्राक्षासितोपला व्याघ्री चैषां कल्कैर्विपाचयेत् ॥  
गव्यं घृतं च तत्सिद्धं महात्रैफलनामकम् ॥ २० ॥  
ऊर्ध्वपानमधःपानं मध्यपानं च शस्यते ॥  
यावन्तो नेत्ररोगाः स्युस्तावन्नोप्यपकर्षति ॥ २१ ॥  
नक्तांध्ये तिमिरे काचे नीलिकापटलेर्बुदे ॥  
अभिष्यंदेधिमंथे च पक्ष्मकोपे च दारुणे ॥ २२ ॥  
नेत्ररोगेषु सर्वेषु रक्तपित्तकफेषु च ॥  
अट्टिष्टि मंदट्टिष्टि च कफवातप्रदूषिताम् ॥ २३ ॥  
स्त्रावतो वातपित्ताभ्यां सकंद्वासन्नदूरदृक् ॥  
पटुदृष्टिकरं सद्यो चलवर्णाग्निवर्धनम् ॥  
सर्वनेत्रामयं हन्यात्महात्रैफलकं घृतम् ॥ २४ ॥

इति महात्रैफलकं घृतं योगरत्नावल्याः ॥

काथेन कल्कविधिना च फलत्रिकस्य  
पक्वं घृतं जयति नेत्ररुजः समस्ताः ॥  
कुष्ठप्रमेहमुखकर्णकपोलनासा-  
रोगान्भगंदरगतिव्रणगंडमालाः ॥ २५ ॥



इति लघुत्रिफला घृतं कलिकातः ॥

श्वेतकरवीरकिसलयविच्छेदरसेन पूरिताक्षस्य ॥

तत्कालसमुत्पन्नो नयने कोपः शमं याति ॥ २६ ॥

इति राजमार्तडात् ॥

ससैंधवं लोध्रमथाज्यभ्रष्टं सौवीरपिष्टं सितवस्त्रवद्धम् ॥

आश्रोतनं तन्नयनस्य कुर्यात्कंदूरुजानाहविनाशहेतुम् ॥

निवत्तचोदुंबरवल्कलेन वातारियष्टी मधुचन्दनेन ॥

पिंडीकृतातीव हिताक्षिकोपे वातेन पित्तेन कफेन वापि ॥

हरीतकीसैंधवताक्ष्यसैलैः सगैरिकैः स्वच्छजलप्रपिष्टैः ॥

वाह्ये प्रलेपं नयनस्य कुर्यात्सद्योक्षिरोगोपशमार्थमेनम् ॥

वासामृतावचाव्याघ्रीपटोलत्रिफलादलैः ॥

मतिमान्पाययेत्काथं सर्वाभिष्यंदनाशनम् ॥ ३० ॥

निशाब्दत्रिफलादावीं सितामधुसमान्वितम् ॥

अभिघाताक्षिगूलघ्नं नारीक्षीरं सुपूरितम् ॥ ३१ ॥

कृष्णात्रेयात् ॥

प्रत्यक्पुष्पीमूलं ताम्रमये भाजने सार्सिधूतम् ॥

मधुना सहितं घृष्टं चक्षुःकोपं हरत्पाशु ॥ ३२ ॥

इति राजमार्तडात् ॥

वातारिपत्रे पुटपाचितानां द्रवं दलानां वरमल्लिकायाः ॥

संमर्दयेत्सिन्धुफलेन कांस्ये तेनांजनेनांजितलोचनस्य ॥

सद्योक्षिनिष्यंदमकांडकंदूरथाधिमंथादिगदान्निहंति ॥ ३३ ॥

इति सारसंग्रहात् ॥

अटरूपाभयानिवधात्रीमुस्ताक्षकूलकैः ॥

\* अथान्यप्रकारः ज्वरीभा वीजानां शोषानुत्थ शोषकीप्रिवली नि-  
बुक्रत्रेण समर्थं सर्पपसमा वटी कार्या तासां पानीयेनानयेत् तिमिरदापपटल  
कटुपेगाः नदयति नात्र परिहः । २ एतेन

स्वावरक्तकफं हन्ति चक्षुष्यं वासकादिकम् ॥ ३४ ॥

इति वासकादिकायः ॥

वासा यनं निवपटोलपत्रं तिक्तामृता चंदनवत्सकं च ॥  
 कालिंगदार्वीदहनं च गुंठीभूर्निवधात्री विजया विभीतम्  
 तथा यवकाथमथाष्टशेषं पिवेदिमं पूर्वदिने कपायम् ॥  
 तैमिर्यकंदूपटलार्बुदं च शुक्रं तथा सव्रणमव्रणं वा ३६ ॥  
 दाहं सरागं सरुजं सपित्तं हन्यात्समस्तानपि नेत्ररोगान्  
 इति पृथुवासादिः ॥

पटोलवासकारिष्टगुडूचीत्रिफलाघनम् ॥

पंचमूली सयष्ट्याह्वा चंदनं विश्वभेषजम् ॥ ३७ ॥

पटोलादिर्गणः प्रोक्तः सर्वनेत्रामयापहः ॥

वातिकं पैत्तिकं चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥ ३८ ॥

स्त्रावं रक्तप्रकोपं च पटोलादिव्यपोहति ॥ ३९ ॥

इति पटोलादिर्गणः ॥

चित्रकमूलत्रिफलापटोलयवस्ताधितं पिवेदंभः ॥

सघृतं निशि चक्षुष्यं तिमिरं च विशेषतो हन्ति ॥ ४० ॥

धात्रीफलं निवर्कपित्थपत्रं

यष्ट्याह्वलोध्रं खदिरं तिलाश्च ॥

काथः सुशीतो नयने निषिक्तः

सर्वप्रकारं विनिहन्ति शुक्रम् ॥ ४१ ॥

वटक्षीरेण संयुक्तं श्लक्ष्णं कर्पूरजं रजः ॥

क्षिप्रमंजनतो हन्ति शुक्रं चातिघनोन्नतम् ॥ ४२ ॥

इति राजमार्तंडात् ॥

किंशुकस्वरसभावितं मुहुर्नैकमालतरुबीजजं रजः ॥

वर्तियोगविधिना विनाशयत्याशु नेत्रगतपुष्पपांडुताम् ॥  
 यस्त्रैफलं चूर्णमपथ्यवर्जं सायंसमश्नाति समाक्षिकाज्यं  
 समुच्यते नेत्रगतैर्विकारैर्भृत्यैर्यथा क्षीणधनो मनुष्यः ४४  
 इति मतिमुकुरात् ॥

जातरोगा विनश्यन्ति न भवंति कदाचन ॥  
 त्रिफलायाः कषायेण प्रातर्नयनधावनात् ॥ ४५ ॥  
 हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पलीमरिचानि च ॥  
 विभीतकस्य मज्जा च शंखनाभिर्मनःशिला ॥ ४६ ॥  
 सर्वमेतत्समीकृत्य छागीक्षरेण पेपयेत् ॥  
 नाशयेत्तिमिरं काचं पटलान्यर्बुदानि च ॥ ४७ ॥  
 अधिकान्यपि मांसानि रात्र्यंधं पुष्पकं तथा ॥  
 वर्तिश्वंद्रोदया नास्त्रा नृणां नेत्रप्रदायिनी ॥ ४८ ॥  
 योगरत्नावलीतः ॥

निशाद्वयाभयाभांसीकुष्ठरुष्णाविचूर्णितैः ॥  
 सर्वनेत्रामयान्हन्यादेतत्सौगतमंजनम् ॥ ४९ ॥

इति मतिमुकुरात् ॥  
 रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ तयोर्द्विगुणमंजनम् ॥  
 ईपत्केर्पूरसंमिश्रमंजनं नयनामृतम् ॥ ५० ॥  
 तिमिरं पटलं काचं शुक्रमर्मार्बुदानि च ॥  
 क्रमात्पथ्यशिखी हन्ति तथान्यानपि दृग्गदान् ॥ ५१ ॥  
 द्विगुणा द्रोणपुष्प्या वा रसेनाजितलोचनः ॥  
 अचिरात्कामलां व्याधिं नरो जयति निश्चितम् ॥ ५२ ॥  
 गुंजामूलं वस्तमूत्रेण पिष्टं निर्वृष्टं वा वारिणा भद्रमुस्ता  
 आंध्र्यं सद्यस्तैमिरं हन्ति पुंतामत्युद्राढं नेत्रयोरंजनेन ॥

कलितरुफलमज्जास्निग्धपट्टे प्रविष्टो  
हरति नयनपुष्पं स्तन्ययोगांजनेन ॥  
श्रवणमलसमेतं मारिचं पंकमक्ष्णोः  
क्षपयति किल नैशीमंधतां स्त्रीप्रियोक्तम् ॥ ५४ ॥  
वैद्यदर्शनात् ॥

पिप्पली त्रिफला लाक्षा लोघकं च ससैधवं ॥  
भृंगराजरसे घृष्टं गुटिकांजनमिष्यते ॥ ५५ ॥  
अर्म सतिमिरं काचं कंडूं शुक्रं तथार्जुनम् ॥  
अंजनं नेत्रजान् रोगान्निहंत्येव न संशयः ॥ ५६ ॥  
इत्यश्विनीकुमारसंहितायाः ॥  
श्वेतस्य कांचनारस्य मूलं दुग्धेन पेपितं ॥  
घृष्टं ताम्रैर्जनं हन्ति सद्यो नेत्ररुजं पृथुम् ॥ ५७ ॥  
तुलस्या विल्वपत्रस्य रसौ ग्राह्यौ समांशकौ ॥  
ताभ्यां तुल्यं पयो नायूर्यास्त्रितयं कांस्यपात्रके ॥ ५८ ॥  
अयःस्थं त्रिफलाचूर्णं सर्पिषा सह योजितम् ॥  
भुक्तोपरि पिवेत्साधं मासेनांधोऽपि पश्यति ॥ ५९ ॥  
भुक्त्वा पाणितले घृष्टा चक्षुषो यदि दीयते ॥  
अचिरेणैव तद्वारि तिमिराणि व्यपोहति ॥ ६० ॥  
मुक्ताभस्मसिंताभ्रपौररसकथ्रोत्तोजनैनांडजा-  
तुत्थांभोभवशंखनाभिचंपलाभृंगोत्तमौमज्जभिः ॥  
वर्त्तिश्चंद्रकला निहन्ति तिमिरं चित्रं किमत्र स्फुटं  
कंडूमंडलकाचशुक्रतिमिरांभःस्त्रावपिछानपि ॥ ६१ ॥  
इति चंद्रकलावर्तिः ॥

|           |                |                   |                 |
|-----------|----------------|-------------------|-----------------|
| १ वेहडो । | २ गाडो ।       | ३ स्त्रीदुग्धेन । | ४ कर्ममल-       |
| युक्त ।   | ५ मरिचचूर्णं । | ६ सन्निभया ।      | ७ श्वेतभ्रक्त । |
| ८ गूर ।   | ९ समुद्रफेन ।  | १० दातरीनी ।      | ११ त्रिकटा ।    |

गजबल्या दृढं मर्द्यं ताम्रेण प्रहरं पुनः ॥

कज्जलं तत्समुत्पाद्य तेनांजितविलोचनः ॥

सद्यो नेत्ररुजं हन्ति समूलं पाकसंभवाम् ॥ ६२ ॥

योगरत्नप्रदीपात् ॥

• हरेणुंकां सैधवसंप्रयुक्तां श्रोतोंजयुक्तामुपकुल्यया च ॥  
पिष्टाजमूत्रेण कृता च वर्त्तिर्नक्तांधविध्वंसकरी नराणाम्  
इति कलिकातः ॥

निर्वापयेच्चैफलके कपाये

नागं विधिज्ञः शतधा हुताशे ॥

संताप्य संताप्य ततः शलाकां

कृत्वास्य शुद्धेन रसेन लिपेत् ॥ ६३ ॥

तयांजिताक्षो मनुजः क्रमेण

सुपर्णद्वष्टिर्भवति प्रसह्य ॥

जयेदभिष्यंदमथाधिमंथ-

ममार्जुनौ वै तिमिरारिपिह्वान् ॥ ६५ ॥

इति सारसंग्रहान्नेत्रसंजीवनी शलाका ॥

शाकाम्लमद्यमत्स्यांश्च धूममैथुनमापकान् ॥

तीक्ष्णानि धर्मं धूर्लि च नेत्ररोगी विवर्जयेत् ॥ ६६ ॥

शालितंडुलगोधूममुद्रसैधवगोधृतम् ॥

गोपयःश्च सिता क्षौद्र पथ्यं नेत्रगदे हितं ॥ ६७ ॥ \*

इति श्रीयोगतरंगिण्यां नेत्ररोगचिकित्सा नामैकसप्त  
तितमस्तरंगः ॥

६ ताबूलरसेन । ७ संभातु ।

\* ओषधफुलेकी । नीरमली, कस्तूरी, ममीरा, समुद्रफेन, थोया, मुरमा,  
सखनाभि, रसोत, रतनजोम, पोपर, बोख्याल, निंबुरसमे खरल वरिके गो-  
ती बाधनीतू पित्तके आजनी फूली जाय । इति जुनौयामतात् ।

द्विसप्ततितमस्तरंगः

अथ नासारोगः ॥

अशांसि पीनसः स्वावः क्वचिच्छोणितपूययोः ॥

रोगा नासोद्गवास्तेषां क्षयो नस्यादिभिर्भवेत् ॥ १ ॥

गुडमरिचविमिश्रं पीतमागु प्रकामं

हरति दधि नराणां पीनसं दुर्निवारम् ॥

यदि तु तघृतमज्जं क्षुण्णगोधूमचूर्णं

त्यजति तदुपसेवी तत्कुतोऽस्यावाकाशः ॥ २ ॥

पिबति शिशिरमंभो यः प्रभूतं निशायां

तदनु च शंघनीयाधिष्ठितो याति निद्राम् ॥

धुवमतिविपमोपि क्षीयतेस्य त्रिरात्रात्

अधिगतपरिपाकः पीनसः श्वासहेतुः ॥ ३ ॥

नवोत्पन्नं प्रतिश्यायं स्नातस्य हरतेऽचिरात् ॥

मरिचं क्षौद्रसंयुक्तं सगुडं दधिमाक्षिकम् ॥ ४ ॥

चत्वार्यत्र शतानि चित्रकजटायुक्पंचमूलामृता-

धात्रीणामुदकर्मणैस्त्रिभिरपां द्रोणेन च क्वाथयेत् ॥

पादस्थे कथने गुडस्य च शतं पथ्याढकेनान्वितं

पक्तव्यं गृत्तशीतले च मधुनः प्रस्थार्द्धमात्रं क्षिपेत् ॥ ५ ॥

व्योपस्य त्रिसुंगधिकस्य च पलान्यत्रैव पट्प्रक्षिपे-

त्क्षारस्यार्द्धपलं रसायनमिदं संसेव्यते सर्वदा ॥

शोपश्वासप्रलापकासवमधुश्लेष्मप्रतिश्यायिभिः

क्षीणोरक्षतहिक्किभिः कफशिरोरुग्भिः प्रणष्टाग्निभिः ॥ ६ ॥

इति चित्रकहरीतकी योगरत्नावलीतः ॥

पाठाद्विरजनीपूर्वापिप्पलीजातिपट्टवैः ॥

दंत्या च तैलं संसिद्धं नस्यतः पीनसापहम् ॥ ७ ॥  
 हिंगुव्योपविडंगकट्फलवचारुक्तीक्ष्णगंधायुतै-  
 र्लाक्षाश्वेतपुनर्नवाकुटजजैः पुष्पोद्भवैः सौरसैः ॥  
 इत्येभिः कटुतेलमेतदनले मंदे समूत्रं गृतं  
 पीतं नासिकया यथाविधि भवेन्नासामयिभ्यो हितम् ८

इति हिंग्वादितैलं चिकित्साकलिकातः ॥  
 कट्फलं गुंगवेरं च पिप्पलीमरिचानि च ॥  
 सटी पुष्करमूलं च भांगी मधुरसा वरा ॥ ९ ॥  
 अभया कृष्णलवणं गुंगी कर्कटकस्य च ॥  
 एतच्चूर्णवरं प्रोक्तं काथो वा मूत्रमूर्छितः ॥ १० ॥  
 पीनसे स्वरभेदे च तमके सहलीमके ॥  
 संनिपातेनिलकफे कासे श्वासे च शस्यते ॥ ११ ॥

इति कट्फलादिचूर्णकाथः ॥

नासावनाहे कर्तव्यं पानं गव्यस्य सर्पिषः ॥  
 नासास्त्रावेऽतितीक्ष्णस्य नस्यं द्रव्यस्य कल्पयेत् ॥ १२ ॥  
 नासाशोषे क्षीरपानं शंसितं च प्रशस्यते ॥  
 प्रतिश्यायेषु सशिरःपीनसे नवसादरम् ॥ १३ ॥  
 समानकालचूर्णं च सूक्ष्मं संचूर्ण्य नह्वयम् ॥  
 गुंजामात्रं तु तच्चूर्णं नस्यं प्रथमनं चरेत् ॥ १४ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां नासारोगचिकित्सानाम्  
 द्विसप्ततितमस्तरंगः ॥ ७२ ॥

त्रिसप्ततितमस्तरंगः ।

अथ शिरोरोगचिकित्सा ॥

अकालपालितं पीडामूर्धपित्तादिभेदकाः ॥  
 इत्यादयः शिरोरोगास्तान्यथादोषमाचरेत् ॥ १ ॥

कुष्ठमेरंडजं मूलं लेपात्कांजिकपेपितम् ॥  
 शिरोऽर्तिं नाशयत्याशु पुष्पं वा मुचकुंदजम् ॥ २ ॥  
 देवदारुनतं कुष्ठं नलदं विश्वभेषजम् ॥  
 लेपः कांजिकसंपिष्टस्तैलयुक्तः शिरोर्तिनुत् ॥ ३ ॥  
 सारिवोत्पलकुष्ठानि मधुकं चाम्लपेपितम् ॥  
 सर्पिस्तैलयुतो लेपः सूर्यावर्तार्द्धभेदयोः ॥ ४ ॥  
 सितोपलायुतं घृष्टं मदनं गोपयोन्वितम् ॥  
 नस्यतोनुदिते सूर्ये निहंत्येवार्द्धभेदयोः ॥ ५ ॥

स्मरफलतिलपर्णीवीजसंयुक्तभूता-  
 कुशदलघटवीजत्वग्रजोऽर्द्धाशतुल्याम् ॥  
 प्रधमनविधिना तदत्तमात्रं शिरोरु-  
 कप्रलपनकफतंद्रासन्निपातं निहन्यात् ॥

इति स्मरफलादिप्रधमनम् ॥

सशर्करं कुंकुममाज्यभृष्टं नस्यं विधेयं पवनासृगुत्थे ॥  
 भूकर्णनासाक्षिशिरोर्धशूले दिनादिवृद्धिप्रभवे च रोगे ॥  
 इत्यर्द्धभेदः ॥

एरंडमूलं तगरं शताह्वा जीवन्तिरास्त्रा सहसैधवं च ॥  
 भृंगं विडंगं मधुयष्टिकाचविश्वौषधं कृष्णतिलस्य तैलं ॥  
 आजं पयस्तैलचतुर्गुणं च  
 चतुर्गुणं भृंगरसं च दत्त्वा ॥  
 पक्वं च पद्मविदव एतदीया  
 नस्येन हन्युः शिरसो विकारान् ॥ ९ ॥  
 च्युतांश्च केशांश्चलितांश्च दंता-  
 न्निबद्धमूलांश्च दृढीकरोति ॥



सुवर्णदृष्टिप्रतिमां च दृष्टिं

वाहोर्वलं चाप्यधिकं ददाति ॥ १० ॥

इति पद्मविन्दुतैलम् ॥

षट्प्ररोहकेशिन्याश्चूर्णेनादित्यं पाचितम् ॥

गुडूचीस्वरसैस्तैलमभ्यंगात्केशरोहणम् ॥ ११ ॥

मांसीकुष्ठं तिलाः कृष्णाः सारिवामूलमुत्पलम् ॥

सक्षौद्रक्षीरपिष्टानि केशसंवर्धनं परम् ॥ १२ ॥

मार्कण्डेयस्वरसभाषितगुंजावीजचूर्णपरिपाचिततैलम् ॥

मिश्रितं त्रुटिजंटासुरकाष्ठैः केशभारजननं जनतायाः ॥

मांसीबलावकुलजामलकैः सकुष्ठैः ॥

पिष्टैः प्रलिप्ताशिरसो न पतन्ति केशाः ॥

स्निग्धायतानि कुटिलाकृतयो भवन्ति

ये प्रच्युता अपि मिर्लिदकुलप्रकाशाः ॥ १३ ॥

वृहतीफलरसपिष्टं गुंजायाः फलमथापि वा मूलम् ॥

हेमनिघृष्टं लिप्तं व्यपहरति मर्हेद्रलुसारूपम् ॥ १४ ॥

नीलोत्पलाक्षफलमज्जातिं लाजगंधाः

सार्द्धं प्रियंगुलतया समधूकवरैः ॥

संपेष्य यः प्रकुरुते वट्टशः प्रलेपं

खालित्यमस्य न पदं विदधाति मृष्टिं ॥ १५ ॥

पलत्रयं माजुफलं हरांतक्याः पलं तथा ॥

आमलस्यास्तु समैव पलैकं खदिरस्य च ॥ १६ ॥

तुल्यस्यापि पलैकं तु नीलोत्पला दशैव तु ॥

नवसादरकस्यैकं लोहचूर्णस्य चैककम् ॥ १८ ॥  
 तुवर्याः पलमेकं तु पलं ताम्रविशस्तथा ॥  
 अतिश्लक्ष्णमिदं घृष्टं भृंगराजरसैश्चिरम् ॥ १९ ॥  
 संधितं त्रिदिनं लोहे भिन्नांजनसमप्रभम् ॥  
 रूक्षीकृत्य कचानादौ पुनस्तेनावलेपयेत् ॥ २० ॥  
 वातारिपत्रैरावेष्ट्य सुप्तिं कुर्याद्विचक्षणः ॥  
 प्रातस्तैलामलैः स्नात्वा नरो जायेत निश्चितम् ॥ २१ ॥  
 भिन्नकज्जलभृंगालीनिभकुंतलसंततिः ॥  
 कृमिजे च शिरोरोगे व्योपनक्ताह्वशिशुजैः ॥ २२ ॥  
 अजामूत्रेण संपिष्टैर्नस्यं कृमिहरं परम् ॥  
 विडंगसर्जिकादंतीर्हिगुमूत्रेण संयुतम् ॥ २३ ॥  
 विषकं सार्पपं तैलं कृमिघ्नं नस्यतः स्मृतम् ॥  
 भद्रं श्रियं पुंडरीकं मधुकं नीलमुत्पलम् ॥ २४ ॥  
 पद्मारव्यं वेतसं मूर्वा लामज्जकमथापि वा ॥  
 दार्वीहरिद्रामंजिष्ठाशारिबोशारिपद्मकम् ॥ २५ ॥  
 एतैरालेपनं कुर्याच्छंखकस्य प्रज्ञांतये ॥  
 अनंतवाते कर्तव्यो रक्तमोक्षः शिराव्यधैः ॥ २६ ॥  
 इति विडंगाद्यं तैलं ॥ \*

इति श्रीयोगतरंगिण्यां शिरोरोगचिकित्सानाम्

त्रिसप्ततितमस्तरंगः ॥ ७३ ॥

चतुःसप्ततितमस्त रंगः ।

अथ प्रदरः ॥

अतिमार्गाश्वगमनप्रभूतसुरतादिभिः ॥

१ सिंहर । \* ॐ उज्जैननगरदेवपालराजाजडावसेमहादेवकोलिगडाजाय  
 आधासीसीकूहरे आधासीसीकडाचलीनारीमानवीकेमायिपरतेकसेउतराजसेउता-  
 रीतेसेउतरोगुदकीसक्तमेरीभक्तफुगेमत्रईशरीवाचा ॐ ॥

प्रदरो जायते स्त्रीणां योनिरक्तस्रुतिः पृथुः ॥ १ ॥  
 अशोकवल्कजं काथं गृतं दुग्धं सुशीतलम् ॥  
 यथावलं पिबेत्प्रातः शीघ्रासृग्दरनाशनम् ॥ २ ॥  
 जीरकप्रस्थमेकं तु क्षीरस्याढकमेव च ॥  
 घृतप्रस्थार्द्धसंयुक्तं शनैर्मदाग्निना पचेत् ॥ ३ ॥  
 सुशीते शर्कराप्रस्थं द्वयं चापि विनिक्षिपेत् ॥  
 चातुर्जातकणाविश्वमजाजी च घनं जलम् ॥ ४ ॥  
 दाडिमं रसजं धान्यं रजनी पटवासकम् ॥  
 वंशजानं यवक्षारं प्रत्येकं तु पलार्धकम् ॥ ५ ॥  
 जीरकस्यावलेहोयं प्रदरापहरः परः ॥  
 ज्वरप्रमेहतृड्दाहकृच्छ्रक्षैण्यविनाशनः ॥ ६ ॥  
 इति जीरकस्यावलेहः ॥  
 दार्वीरसांजनवृषाब्दकिरातविल्व-  
 भङ्गातकैरपि कृतो मधुना कषायः ॥  
 पीतो जयत्यतिबलं प्रदरं सगूलं  
 पीतासितारुणविलोहितनीलशुक्लम् ॥ ७ ॥  
 कुशमूलं तमुद्धृत्य पेपयेत्तंदुलांबुना ॥  
 एतत्पीत्वा त्र्यहं नारी प्रदरात्परिमुच्यते ॥ ८ ॥  
 भूम्यामलकमूलं हि पीतं तंदुलवारिणा ॥  
 दिनद्वयं त्रयं वापि स्त्रीरोगं नाशयेवद्धम् ॥ ९ ॥  
 धात्रीरसं सितायुक्तं योनिदाहापहं पिबेत् ॥  
 शर्करायुतसंयुक्तं लोध्रं प्रदरनाशनम् ॥ १० ॥  
 काथस्तिलानां विनिधायपीतः  
 कटुत्रयं ब्राह्मण्यष्टिचूर्णं ॥

निहन्ति सद्यः कुसुमं सलोध्नं  
 स्त्रीणामसृग्दाहमतिप्रवृद्धम् ॥ १२ ॥  
 पारदं टंकणं गंधं पृथग्भागं समाहरेत् ॥  
 शुष्कं कमलिनीकंदं वेदभागं विमर्दयेत् ॥  
 लिङ्गीरसेन तत्सर्वं दिवसत्रितयं बुधः ॥  
 मधुना भावितं पश्चात् खादेद्वल्लचतुष्टयम् ।  
 सिताकर्प्यं क्षीरपलमनुपानं पिवेदनु ॥  
 प्रदरं योनिगूलं च रक्तातीसारमुल्बणम् ॥  
 रक्तमेहं मूत्रकृच्छ्रं त्रिदिनाच्चाशयेद्भुवम् ॥  
 इति गुह्यरोगारिः कल्पतरोः ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां प्रदरचिकित्सानामचतुः-  
 सप्ततितमस्तरंगः ॥७४॥

पञ्चसप्ततितमस्तरंगः ।

अथ गर्भस्थितिः ॥

ऋतोः समहेनि सुतो विंपमे च सुता मता ॥  
 अतः समदिने गच्छेत्पुत्रकामो वराङ्गनाम् ॥१॥  
 क्षीरेण श्वेतवृहतीमूलं नासापुटे पिवेत् ॥  
 पुत्रार्थं दक्षिणा नासा वामा सा कन्यकाप्रदा ॥ २ ॥  
 पयसा लक्ष्मणामूलं पुत्रोत्पत्तिस्थितिप्रदम् ॥  
 नासयास्येन वा पीतं वटशुङ्गाष्टकं नवम् ॥  
 वारिणा शुक्लपक्षेहि पुण्येण तु समाहृतम् ॥ ३ ॥  
 वाग्भटात् ॥

एरंडस्य च बीजानि मातुलुङ्गस्य चैव हि ॥

सर्पिषा परिपिष्टानि पिवेद्गर्भप्रदानि तु ॥ ४ ॥

चक्रदत्तात् ॥

गोघृतेन सह नागकेसरं श्लक्ष्णचूर्णितमृतौ नितंविनी ॥  
गव्यदुग्धनिरता पिवेद्यदा सा तदा नियतमेववीरसूः ॥ ५ ॥

लिङ्गाकारं लक्ष्मणायाश्च मूलं  
योगे लब्धं सर्पिषा नस्ययोगात् ॥

पीत्वा सूते पुत्रमत्यंतवीर्यं

पश्चादन्यानप्यमंदांगयष्टिः ॥ ६ ॥

वस्तमूत्रं च सघृतं नवनीतं च माहिषम् ॥

पलत्रयं पिवेन्नारी बंध्या सूते सुतोत्तमम् ॥ ७ ॥

इति गर्भस्थितिः ॥

तैलाविलं सैधवखंडमादौ-

निधाय रंडा निजयोनिमध्ये ॥

नरेण सार्द्धं रतमातनोति या

सा नैव गर्भं लभते कदाचित् ॥ ८ ॥

धतूरमूलिकापुष्पे गृहीत्वा कटिसंस्थिता ॥

गर्भं निवारयत्येव रंडावेश्यादियोपिताम् ॥ ९ ॥

तंदुलीयकमूलानि पिष्ट्वा तंदुलवारिणा ॥

ऋत्वंते तु त्र्यहं पीत्वा बंध्याः कुर्यति योपितः ॥ १० ॥

धूपिते योनिरंध्रे च निवकाष्ठेन युक्तितः ॥

ऋत्वंते रमते या स्त्री न सा गर्भमवाप्नुयात् ॥ ११ ॥

गूंर्जनवीजं टंकत्रितयं नावच्च दाडिमीमूलम् ॥

तुवरीटंकद्वितयं सिद्धं टंकयुगलं च ॥ १२ ॥

संमर्द्य खल्वमध्ये तोयेनैतन्निपीय गर्भवती ॥

रंडा योषिद्वर्भं वेश्या वा पातयत्याशु ॥ १३ ॥

पलाशबीजमध्वाज्यलेपात्सामर्थ्ययोगतः ॥

योनिमध्ये ऋतौ गर्भं न धत्ते स्त्री कदाचन ॥ १४ ॥

तालीसगैरिके पीते विडालपदमात्रके ॥

शीतांबुना चतुर्थेऽह्नि बंध्या नारी प्रजायते ॥ १५ ॥

इति गर्भनिवारणम् ॥

मधुकं शोकवीजं च पयसा सुरदारुकम् ॥

अश्मेतकः कृष्णतिलास्ताम्रवल्ली शतावरी ॥ १६ ॥

बृक्षादेनी वयस्या च तथैवोत्पलसारिवा ॥

अनंता सारिवा कृष्णा पद्मा मधुकमेव च ॥ १७ ॥

बृहतीद्वयकाश्मर्यः क्षीरभृंगात्वचो घृतम् ॥

पृथक्पर्णीविलाशि शुश्रुवदंष्ट्रामधुयष्टिकाः ॥ १८ ॥

शृंगाटकं विसं द्राक्षा कशेरुर्मधुकं सिता ॥

वत्सैते सप्त योगाः स्युरर्द्धश्लोकसमापनाः ॥ १९ ॥

यैधाक्रमं प्रयोक्तव्या गर्भस्त्रावे पयोयुताः ॥

कपित्थविल्वबृहतीपटोलं च निदिग्धिका ॥ २० ॥

मूलानि क्षीरसिद्धानि दापयेद्विपगष्टमे ॥

नवमे मधुकानंतापयस्याशारिवाः पिवेत् ॥ २१ ॥

शोजपेदशमे मासि क्षीरं सिद्धं पयस्यया ॥

लज्जालुयातकीपुष्पमुत्पलं मधुलोघ्रकम् ॥ २२ ॥

जलस्थया स्त्रिया पीतं गर्भपातं निवारयेत् ॥

पतंतं स्तंभयेद्वर्भं कुलालकरमृत्तिका ॥ २३ ॥

मधुच्छागीपयःपीता किंवा श्वेताद्रिकर्णिका ॥

पारावतमलं पीतं त्र्यहं तंडुलवारिणा ॥

गर्भिणीगर्भतो रक्तं स्तंभयेन्निपंतद्भुतम् ॥ २४ ॥

शर्कराविसतिलं समांशकं माक्षिकेण सह भक्ष्यते यथा ॥

नास्ति गर्भपतनोद्भवं भयं पापभीतिरिव तीर्थसेवया २५

गुंगाटकं विसं द्राक्षा कशेरुर्मधुकं सिता ॥

निवारयंत्यमी गर्भं पीताः परमवेदनम् ॥ २६ ॥

कंकर्तीमूलमावहं कुमारीसूत्रकैर्दृढम् ॥

कटिदेशे नितं विन्या गर्भं स्तंभयते ध्रुवम् ॥ २७ ॥

कशेरुगुंगाटकजीवनीयपद्मोत्पलैरंडशतावरीभिः ॥

सिद्धं पयः शर्करया समेतं संस्थापयेद्गर्भमुदीर्णगूलम् २८

कुशकाशेरुवूकाणां मूलैर्गोक्षुरकस्य च ॥

गूतं दुग्धं सितायुक्तं गर्भिण्याः गूलनुत्परम् ॥ २९ ॥

इति गर्भसंरक्षणम् ॥

उन्नते दक्षिणे कुक्षौ गर्भे च परिमंडले ॥

पुत्रं प्रसूयते वामे कन्यां क्लीवं समेऽगना ॥ ३० ॥

प्रत्यक्पुण्याः पारिभद्रस्य यद्वा

मूलं यद्वा काकजंघासमुत्थम् ॥

कट्यां वद्धं योपितां सत्प्रसूर्ति

योगे युक्त्या संदृतं साधु कुर्यात् ॥ ३१ ॥

मूलं प्रत्यक्पुण्याः पाठाया वा निवेशितं तु सुखे ॥

स्त्रीणां दुःप्रसवानां प्रसवं कुरुते सुखेनैव ॥ ३२ ॥

यदि तत्प्रत्यक्पुण्याद्युद्यति मूलं तदर्धमुद्धरता ॥

कन्या भवति तदानीमनुदिते तत्र पुत्रः स्यात् ॥ ३३ ॥

पुटदग्धभुजगकंचुककज्जलमधुपूरितेक्षणद्वंदा ॥

सद्यो भवति विशल्या विमूढगर्भापि गर्भवती ॥ ३४ ॥

इति राजमार्तडात् ॥

पाठांसुरससिंहास्यमयूरकजटाः पृथक् ॥

नाभिवस्तिभगे लिप्ताः सुखं नारी प्रसूयते ॥ ३५ ॥

हिमवदक्षिणे पार्श्वे सुरसा नाम यक्षिणी ॥

तस्या नूपुरशब्देन विशल्या भव गर्भिणि ॥ ३६ ॥

मुक्ताः पाशा विपाशाश्च मुक्ताः सूर्यस्य रश्मयः ॥

मुक्तः सर्वभयाद्गर्भं एहि माचिर माचिर स्वाहा ॥ ३७ ॥

इहामृतं च सोमश्च चित्रभानुश्च भामिनि ॥

उच्चैःश्रवाश्च तुरगो मंदिरे निविशंतु ते ॥ ३८ ॥

इत्यक्षतान्क्षिपेत् ॥

इदममृतमपां समुद्धृतं वै

तव लघुगर्भविमोक्षणाय देवि ॥

तदनलपवनार्कबोसवास्ते

सह लवणांबुधरैर्दिशंतु शांतिम् ॥ ३९ ॥

जलं ध्यावनमंत्रेण सप्तवाराभिमंत्रितम् ॥

पीत्वा प्रसूयते नारी दृष्ट्वा वा चक्रवर्धनम् ॥ ४० ॥

कलापक्षार्कऋतुदिङ्मन्वष्टाष्टादशांबुधीन् ॥

विलिखेन्नवकोष्ठेषु त्रिंशाख्यं यंत्रमुत्तमम् ॥ ४१ ॥

|    |    |    |
|----|----|----|
| १६ | २  | १२ |
| ६  | १० | १४ |
| ८  | १८ | ४  |



गुंजामूलस्य खंडानि सप्तसप्तदलानि च ॥  
 खंडितानि कटिस्थानि सुप्रसूतं प्रकुर्वते ॥  
 बाणपुंखा जटा वाथ विशल्यां कुरुते गताम् ॥ ४२ ॥

इति मूढगर्भचिकित्सा ॥

आर्द्रहेमफलं पिष्ट्वा कटुतैलं चतुर्गुणम् ॥  
 विपचेद्वटिकायुग्मं तत्तैलं हेमसुंदरम् ॥  
 दुष्टप्रस्वेदशमनं सूनिकादोपनाशनम् ॥ ४३ ॥  
 इति हेमसुंदरं तैलम् ॥

रसे कनकसंभवे कटुकतैलमापाचये-  
 द्वचाकंनकदुग्धिकारजनिनागरैः कल्कितैः ॥  
 इदं कनकसुंदरं भवति दुष्टसंस्वेदजित्  
 समस्तपवनामयप्रणुदनल्पकांतिप्रदम् ॥ ४४ ॥  
 इति कनकसुंदरं तैलम् ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यं शुंठीपवानिका ॥  
 जीरके द्वे हरिद्रे द्वे विडं सौवर्चलं तथा ॥ ४५ ॥  
 एतैरेवौषधैः पिष्टैरारनालं विपाचयेत् ॥  
 आमवातहरं वृष्यं कफघ्नं बद्धिदीपनम् ॥ ४६ ॥  
 कांजिकं वज्रकं नाम बलवर्णाग्निदीपनम् ॥  
 मक्कलं गूलशमनं परं क्षीराभिषर्धनम् ॥ ४७ ॥

इति वज्रकांजिकम् ॥

आज्यस्यांजलियुग्ममत्र पयसः कंसं तुलार्द्धं तथा  
 खंडस्यापि पचेद्विचूर्णितमिदं विश्वौषधं निक्षिपेत्  
 अस्यार्द्धं गुडबद्धिपाच्य विधिना मुष्टित्रयं धान्यकं  
 मिस्याः पंचपलं पलं रुमिरिपोः साजाजि जीरं तथा ॥ ४८ ॥

व्योषांभोददंलोरगद्रविडिका भृंगस्य च प्रक्षिपे-  
चूट्कासज्वरपांडुरोगशमनं विड्भेदविध्वंसनम् ॥  
गूलारोचकनाशतनं रुमिहरं मंदाग्निसंदीपनं ॥  
सूतीनां खलुखंडनागरमिदं सौभाग्यदं सेवितम् ॥ ४९ ॥

इति सौभाग्यगुंठी ॥

दशमूलीगृतं तोयं कबोष्णं पिप्पलीयुतम् ॥  
पीतं तत्सूतिकारोगमुदग्रमपि कृतंति ॥ ५० ॥

इति दशमूलादिः ॥

सहचरकुलत्थपुष्करदारुनिशादारुवेरसकाथः ॥  
पीतः सर्हिगुलवणः शमयति गूलज्वरौ सूत्याः ॥ ५१ ॥

इति सहचरादिः काथः ॥

संयोजितो दलितया कणया कबोष्णो  
निर्गुडिकालगुननागरजः कपायः ॥  
पीतो निहंति कफमारुतपित्तजातं  
सूत्यामयं सकलमेव सुदुस्तरं च ॥ ५२ ॥

इति निर्गुड्यादिः ॥

देवदारु वचा कुष्ठं पिप्पली विश्वभेषजम् ॥  
भूर्निवः कट्फलं मुस्तं तिक्ता धान्यं हरीतकी ॥ ५३ ॥  
गजकृष्णा सुदुःस्पर्शा मोक्षुरुर्ध्वन्यासकः ॥  
वृहत्यतिविपाच्छिन्ना पर्यटः कृष्णजीरकम् ॥ ५४ ॥  
समभागानि सर्वाणि सिंधुरामठसंयुतम् ॥  
पिवेदष्टावशेषं तु प्रसूतां पाययेत्स्त्रियम् ॥ ५५ ॥  
सहितानुल्वणस्वेदज्वरगूलशिरोर्त्तिभिः ॥  
निहंति सूतिकारोगान्वातपित्तकफोद्भवान् ॥ ५६ ॥

नागरस्य पलान्यष्टौ घृतस्य पलविंशतिः ॥  
 क्षीराढकेन संयुक्तां खंडस्यार्धतुलं पचेत् ॥ ५७ ॥  
 शताह्वाजीरकव्योषत्रिसुगंधियवानिकाः ॥  
 ग्रंथिकं कृष्णजीरं च मधुकं च विडंगकम् ॥ ५८ ॥  
 लवंगं धान्यकं मांसी तालीसं नागकेसरम् ॥  
 कारवीमिसिचव्याग्निमुस्तानां च पलंपलम् ॥ ५९ ॥  
 लैहीभूतमिदं मिदं घृतभांडे निधापयेत् ॥  
 तद्यथाग्निबलं स्वादेत्सूतिका तु विशेषतः ॥ ६० ॥  
 वल्यं वर्ण्यं तथायुष्यं वलीपलितनाशनम् ॥  
 वयसः स्थापनं हृद्यं मंदाग्नेर्दीपनं परम् ॥ ६१ ॥  
 आमवातप्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम् ॥  
 मक्कलगूलशमनं सूतिकारोगनाशनम् ॥ ६२ ॥  
 इति सौभाग्यगुंठी अनुभूता वाग्भटात् ॥  
 सूताभ्रगंधोपणलोहशंख-  
 वन्योपलाभस्मविषं सुपिष्टम् ॥  
 एकंदुचंद्रानलवार्द्धिकुंभि-  
 कलैकभागैः क्रमशो विवृद्धम् ॥ ६३ ॥  
 प्रसूतिवातानिलदंतबंध-  
 माद्रायुना घोरसुसंनिपाते ॥  
 निजानुपानैर्भिजपध्ययोगैः  
 सर्वातिसारग्रहणीगदेषु ॥  
 प्रतापलंकेश्वरनामधेयो  
 रसः प्रयुक्तो गिरिराजपुत्र्या ॥ ६४ ॥  
 इति प्रतापलंकेश्वररसः ॥

अमृतानागरसहचरभेद्रोत्कटपंचमूलजलदजलम् ॥  
 गृतशीतं मधुसहितं हरति परं सूतिकाशूलम् ॥ ६५ ॥

इति योगतरंगिण्यां सूतिकाचिकित्सानाम्  
 पञ्चसप्ततितम स्तरंगः ॥

षट्सप्ततितमस्तरंगः ।

संयोजितं पल्लवपंचकेन  
 जातीप्रसूनैर्मधुकान्वितैश्च ॥  
 सूर्याशुतप्तं घृतमंगनाना-  
 मभ्यंगतो हन्ति वरांगगंधम् ॥ १ ॥

मृणालपद्मोत्पलबीजयुक्तं  
 तैलं तथोशीरयुतं विषकम् ॥  
 पैच्छिल्यशैथिल्यविगंधितानां  
 नाशं करोति स्मरमंदिरस्य ॥ २ ॥

हरितालभागपंचकमेको भागः पलाशभस्मभवः ॥  
 भागश्च यवक्षारः स्याद्वेपाद्योनिलोमहरः ॥ ३ ॥

इति राजमार्तडात् ॥

दग्ध्वा शंखं क्षिपेद्रंभारसेन क्षारयोजितम् ॥  
 तुल्यांशं लेपितं हन्ति लोमं गुह्यगतं ध्रुवम् ॥ ४ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां स्त्रीरोगचिकित्सानाम्  
 षट्सप्ततितमस्तरंगः ॥

सप्तसप्ततितमस्तरंगः ।

अथ बालकरोगाः ॥

त्रिविधः कथितो बालः क्षीराब्जोभयवर्त्तनः ॥  
 स्वास्थ्यं ताभ्यामदुष्टाभ्यां दुष्टाभ्यां रोगसंभवः ॥ १ ॥

कुष्ठं वचाभयाभांगी कैतकं क्षौद्रसर्पिषा ॥  
 वर्णायुःकांतिजननो लेहो वालस्य सर्वथा ॥ २ ॥  
 स्तन्याभावे पयश्छागं गव्यं वा तद्गुणं पिबेत् ॥  
 मूर्त्तिपडेनाग्नितप्तेन क्षीरसिक्तेन सोष्मणा ॥ ३ ॥  
 स्वेदयेदुत्थितां नाभिं शीथस्तेनोपशाम्यति ॥  
 नाभिपाके निशालोध्रप्रियंगुमधुकैः शृतम् ॥ ४ ॥  
 तैलमभ्यंजने शस्तमेभिर्वाप्यथ चूर्णकम् ॥ ५ ॥

वचाकुष्ठशंखाब्जलोहैः शिशूनां  
 शरीरे धृतैर्याति रक्षांसि नाशम् ॥  
 कुनट्यर्कदुग्धाज्यविश्वैः सकुष्ठैः  
 प्रलेपोथ वा नित्यमेपां विधेयः ॥ ६ ॥  
 प्राचीगतं पांडुरासिदुर्वार-  
 मूलं शिशूनां गलके निबद्धम् ॥  
 करोति दंतोद्भववेदनाया  
 निःसंशयं नाशमकांड एव ॥ ७ ॥  
 सप्तच्छदार्कच्छदनक्तमाल-  
 मूलैस्तुरंगारिजटासमेतैः ॥  
 उत्सादितांगः पशुमूत्रपिष्टै-  
 र्ब्रूविरेमुंडीसलिलाभिषिक्तः ॥  
 दिने दिने याति शिशुः प्रवृद्धिं  
 पतिर्निशानामिव शुक्लपक्षे ॥ ८ ॥

इति राजमार्तडात् ॥

हरिद्राद्वयपट्ट्याह्वसहीशक्रयवैः कृतम् ॥

शिशोर्ज्वरातिसारघ्नं कापेयं सर्वरोगजित् ॥ ९ ॥

पृष्टिपर्णी शताह्वा च लीढा माक्षिकसर्पिषा ॥

ग्राहिणी दीपनी हन्ति मारुताति सकामलाम् ॥ १० ॥

ज्वरातिसारपांडुघ्नी वालानां सर्वरोगनुत् ॥

मूर्वानिशासर्पपरामसेनशिवासंभंगांबुदकारवीणाम् ११ ॥

छागीपयोभिः सह पेपिताना-

मुद्वर्तनं स्याज्ज्वरहं शिशूनाम् ॥

शृंगीं सरुष्णाब्दविषां विचूर्ण्य

लेहं विदध्यान्मधुना शिशूनाम् ॥ १२ ॥

कासज्वरच्छर्दिभिरर्दितानां

समाक्षिकां वातिविषामथैकाम् ॥ १३ ॥

द्विवातीकीफलरसं पंचकोलं च लेहयेत् ॥

एकद्वित्राणि घस्त्राणि वातपित्तकफज्वरे ॥ १४ ॥

विल्वं च पुष्पाणि च धातकीनां

जलं च रोध्रं गजपिप्पली च ॥

काथावलेहौ मधुना विमिश्रौ

बालेषु योज्यावतिसारितेषु ॥ १५ ॥

नागरातिविषामुस्ताबालकेंद्रयवैः शृतम् ॥

बालकं पाययेत्प्रातः सर्वातीसारनाशनम् ॥ १६ ॥

कल्कः प्रियंगुकोलास्थिमध्यमुस्तरसांजनैः ॥

क्षौद्रालीढः कुमारस्य च्छर्दितृष्णातिसारनुत् ॥ १७ ॥

यस्ताम्रचूडविहगोभयपार्श्वपक्ष-

पुच्छैर्गवाज्यसहितैः कृतधूपकोणे ॥

आरभ्य जन्मदिवसादिनसप्तकं हि  
बालस्य तस्य न कुतश्चन भीतिरेति ॥ १८ ॥

इति राजमार्तडात् ॥

लेहस्तैलसिताक्षौद्रतिलयष्ट्याह्वकलिकतः ॥

बालस्य रुंध्यान्नियतं रक्तस्रावं प्रवाहिकाम् ॥ १९ ॥

हरीतकीवचाकुष्ठकल्कं माक्षिकसंयुतम् ॥

पीत्वा कुमारः स्तन्येन मुच्यते तालुकण्टकात् ॥ २० ॥

गृहधूमनिशाकुष्ठरात्रिकेंद्रयवैः शिशोः ॥

लेपस्तक्रेण हंत्याशु सिध्मापामाविचर्चिकाः ॥ २१ ॥

पंचमूलीकषायेण सघृतेन पयः शृतम् ॥

सगुंग्वेरं सगुडं शीतं हिक्कादितः पिवेत् ॥ २२ ॥

द्राक्षायासाभयारुण्णाचूर्णं तक्षौद्रसर्पिषा ॥

लीढं श्वासं निहंत्याशु कासं च तमकं तथा ॥ २३ ॥

भेषजं पूर्वमुद्दिष्टं महातापज्वरादिषु ॥

कार्यं तदेव बालानां तेषु दाहादिकं विना ॥ २४ ॥

त एव दोषा दुष्यास्ते ज्वराद्या व्याधयश्च ते ॥

अतस्तदेव भैषज्यं किंतु मात्रा कनीयसी ॥ २५ ॥

अतसीकारवीमुस्तासर्पपैः सपयोधरैः ॥

दार्वाभूर्निवमूर्वाकंहारिद्राभिश्च लेपकः ॥

ज्वरं निहन्ति बालस्य महान्तमपि वासरैः ॥ २६ ॥

गंधकमेको भागो भागद्वितयं च जातिफलम्

जातीपत्रं तावद्भागत्रितयं च खदिरस्य ॥ २७ ॥

वल्कलजातैः क्वाथैः सं मिलितं कांचनारस्य ॥

पीतः स्तन्यविमिश्रो नाशयति शिशोर्ज्वरं तं च ॥ २८ ॥

जिह्वापिडिकापाकं गुदपाकं लेपनाच्च पानाच्च ॥

धावनतस्ततोपैर्नश्यन्ति शिशोर्गुदे रोगाः ॥ २९ ॥

सर्पत्वग्लशुनं मूर्वा सर्पपारिष्टपल्लवाः ॥

विडालविडजालोम मेषशृङ्गी वचा मधु ॥ ३० ॥

धूपः शिशोर्ज्वरघ्नोयं सर्वग्रहनिवारणः ॥ ३१ ॥

क्षणादुद्विजते बालः क्षणाद्वमति रोदिति ॥

नखैर्दतैर्दारयति धात्रीमात्मानमेव च ॥ ३२ ॥

ऊर्ध्वं निरीक्षते दन्तान्वादेत्कूजति जृम्भते ॥

भ्रूवौ क्षिपति दन्तौष्ठं फेनं वमति चासकृत् ॥ ३३ ॥

क्षामोतिनिशि जागर्ति शून्याङ्गो भिन्नविट्स्वरः ॥

मत्स्यशोणितगन्धश्च न चाश्नाति यथापुरा ॥ ३४ ॥

सामान्यं ग्रहजुष्टानां लक्षणं समुदाहृतम् ॥

वचाकुष्ठं तथा ब्राह्मी सिद्धार्थकमथापि वा ॥ ३५ ॥

सारिषा सैन्धवं चैव पिप्पली घृतमष्टमम् ॥

मेध्यं घृतमिदं सिद्धं पातव्यं च दिने दिने ॥ ३६ ॥

दृढस्मृतिः क्षिप्रमेधा कुमारो बुद्धिमान्भवेत् ॥

न पिशाचा न रक्षांसि न भूतानि न मातरः ॥

प्रद्ववंति कुमाराणां पिवतामष्टमंगलम् ॥ ३७ ॥

इत्यष्टमंगलं घृतम् ॥

सटीकिरातसिद्धार्थमूर्वामुस्तोपकुचिकाः ॥

श्वेताशिरीष इत्येषां छागीक्षीरेण लेपनम् ॥ ३८ ॥

ज्वरदाहवर्मास्तिरक्ष्मातृदूनाशनं शिशोः ॥

इति वैद्यालंकारात् अष्टमंगलमुद्धर्तनम् ॥

पादकल्केऽश्वगंधायाः क्षीरेष्टगुणिते पचेत् ॥

घृतं देयं कुमाराणां पुष्टिरुद्वलवर्द्धनम् ॥ ३९ ॥

इत्यश्वगंधादिघृतम् ॥



लाक्षारससमं सिद्धं तैलं मस्तु चतुर्गुणम् ॥

रास्नाचंदनकुष्ठाब्दावाजिगंधानिंशायुतैः ॥४०॥

शताह्लादारुषष्ट्याहमूर्वातिक्ताहरेणुभिः ॥

वालानां ज्वररक्षोघ्नमभ्यंगाद्वलवर्णकृत् ॥४१॥

इति लाक्षादितैलं वृंदात् ॥

अथ ग्रहजुष्टप्रतीकारः ॥

प्रथमे दिवसे मासे वर्षे नंदा शिशोर्ग्रहः ॥

तथा गृहीतमात्रस्य प्रथमं भवति ज्वरः ॥

कुपत्यनेकधा रोगाद्विकारं कुरुतेपि च ॥१॥

द्वितीये दिवसे मासे वर्षे सुनंदा तद्गृहीतःस्तन्यं न गृह्णाति

तृतीयेदिवसेमासे वर्षे पूतना ॥३॥

चतुर्थे दिवसे मासे वर्षे मंडितकानाम् ॥४॥

पंचमे दिवसे मासे वर्षे पूतनानाम् ॥५॥

षष्ठे दिवसे मासे वर्षे शकुनिनाम् ॥६॥

सप्तमे दिवसे मासे वर्षे शुकरेष्वतीनाम् मातृका ॥७॥

अष्टमे दिवसे वर्षे आर्यकानाम् ग्रहः ॥८॥

नवमे दिवसे मासे वर्षे मृतिकानाम् ॥९॥

दशमे दिवसे मासे वर्षे निऋतिनाम् ॥१०॥

एकादशे दिवसे मासे वर्षे पिल्डिपिल्डिकानाम् ॥११॥

द्वादशे दिवसे मासे वर्षे कामुकानाम् घालग्रहः ॥१२॥

नदीतीरे द्यारुष्टमहादेवास्वरूपकम् ॥

रुत्वा पूजा च कर्तव्या गुणभृषादिभिस्तथा ॥१३॥

देवा मूर्तानिमावाय संकल्पं रुत्वा अमुकगोत्रन्नरस्यैतस्य

घालस्य शरीरग्नितत्त्वस्यैवार्थं सर्वयद्घालं कार्त्तिक्यं

तत्र नामनेन पूजा कुर्यात् ॥ ॐ हुं रुद्र स्वाहा ॥ इति

मंत्रेण स्नानवस्त्रचन्दनाक्षतधूपदीपनैवेद्यसप्तपताकासप्त-  
 दीपादिकं विधाय ॥ ततो गुंडोदकमत्स्यमांससुरावटकान्न-  
 स्विन्नगोधूमादि तदग्रे परिवेष्य ॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय  
 सत्यसुवसत्यसुवहुंफट्स्वाहा ॥ इति मंत्रं पठित्वा बालकेन  
 मुष्टिमात्रमन्नं संग्राह्यम् पूर्वपरिवेपितान्ते त्याजयेत् ॥  
 ततो न्यतः मुष्टिमात्रमन्नं मंत्रेण क्षिपेत् ॥ ॐ फट् वैनतेया-  
 य नमः ॥ ततो न्यमपि ॥ हां हां क्षः ॥ इति त्रिवारं वल्लि द-  
 त्वा बालप्रमाणपुष्पमालां गृहीत्वा बालोपरि त्रिःपरिभ्रा-  
 म्य ॥ ॥ ॐ कारिणिस्वर्णपक्ष बालकं रक्षरक्ष स्वाहा ॥  
 इति मंत्रेण तां कंठेऽर्पयेत् ॥ ततस्तत्सर्वं रात्रौ चतुष्पथे  
 स्थापयित्वा पश्चादपश्यन्नेव गृहमागच्छेत् ॥ ततो गृहमा-  
 गत्य शान्त्युक्तेन अश्वत्थपत्रेण बालमभिर्पिचेत् ॥ शान्-  
 तिरस्तु पुष्टिरस्तु तुष्टिरस्तु यच्छ्रेयस्तदस्तु ॥ इत्यभिर्पि-  
 चेत् ॥ ततो माहेश्वरधूपेन बालं धूपयेत् ॥ स यथा ॥  
 कर्पासास्थिमयूरपिच्छवृहतीनिर्माल्यर्पिणीतक-  
 त्वङ्मांसीवृषदंशविड्मखकणाकेशाहिनिर्मोकैः ॥  
 नागैर्द्रविजर्हिगुशुंगमरिचैस्तुल्यैः कृतं धूपनं  
 कृत्योन्मादपिशाचराक्षससुरावेशग्रहघ्नं परम् ॥

इति धूपः ॥ अथ मंत्रः ॥ ॐ नमो रावणाय हन  
 हन मुंचमुंच स्वाहा ॥ एवं दिनत्रयं कार्यं चतुर्थेऽन्दि  
 चतुरो विप्रान्भोजयेत् ॥ सुवर्णदानं शुभं भवति ।  
 बालो योऽचिरजातः स्तन्यं न गृह्णाति तर्हि वै तस्य ॥  
 सैधवधात्रीमधुघृतपध्याकल्केन धर्पयेज्जिह्वां ॥  
 बालानां ज्वरवांतिरेककसनश्वासेषु अंगीविषा-  
 रुष्णाब्दं मधुयुक्तधार्द्रिपदुर्हग्बेलाज्यमानाहके ॥

कृच्छ्रे मस्तुयुता त्रुटिर्द्विजगदे दंष्ट्रा शुनः शस्यते  
कार्श्ये क्षरिषिदारिकासृतघृतं दांषादिके नीलका ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां वालरोगचिकित्सानाम्  
सप्तसप्ततितमस्तरंगः ॥

अष्टसप्ततितमस्तरंगः ।

अथ विषम् ॥

स्थावरं जंगमं चैव द्विविधं विषमुच्यते ॥

स्थावरं वत्सनाभादिसर्पादीनां तु जंगमम् ॥ १ ॥

यः पिबति पुष्पदिवसे जलपिष्टसितपुनर्नवामूलम् ॥

तत्संनिधौ न वर्षं वृश्चिकभुजगाः प्रसर्पति ॥ २ ॥

मसूरीं निवपत्राभ्यां स्वादेन्मेपगते रवौ ॥

अब्दमेकं न भीतिः स्याद्विपार्त्तस्य न संशयः ॥ ३ ॥

तंडुलीयकमूलं तु पीतं तंडुलवारिणा ॥

तक्षकेणापि दष्टं हि निर्विषं कुरुते नरम् ॥ ४ ॥

शिरीषपुष्पस्वरसे सप्ताहं मरिचं सितम् ॥

भावितं सर्पदष्टानां पाननस्यांजने हितम् ॥ ५ ॥

दंशोपरि निवर्ध्यात्तक्षणाच्चतुरंगुलम् ॥

क्षौमादिभिर्वैणिकया सिद्धैर्मंत्रैश्च मंत्रयेत् ॥ ६ ॥

अंबुवत्सेतुबंधेन स्तंभ्यते विषमं विषम् ॥

नक्तमालफलव्योपवित्त्वमूलनिशाद्वयम् ॥ ७ ॥

सौरस्तं पुष्पमाजं वा मूत्रं बोधनमंजनम् ॥

बंध्याकर्कोटिकीमूलं छागमूत्रेण भावितम् ॥ ८ ॥

नस्यं कांजिकसंपिष्टं विषोपहतचेतसः ॥

इति सर्पविषम् ॥

अजाक्षरेण संपिष्टा शिरीषफलमिश्रिता ॥

उपकुल्या विषं हन्ति वृश्चिकस्य प्रलेपतः ॥ ९ ॥

काष्पीसपत्रैः संपिष्टैः साज्ज्यैर्लेपो विषापहः ॥

वृश्चिकस्याथवा वत्सनाभलेपः प्रशस्यते ॥ १० ॥

मनःशिलाकुष्ठकरंजवीज-

शिरीषकाश्मीरभवैः समांशैः ॥

विनिर्मितास्ये विधृतावलिता

संहारिणी वृश्चिकवैकृतस्य ॥ ११ ॥

अवतारयत्यधोनीतमूर्द्धमारोपितं तु वर्द्धयति ॥

वृश्चिकगरलं विधिवत्सायकपुंखाभवं मूलम् ॥ १२ ॥

द्विरदपुरीपसमुत्थच्छत्रकवद्भुवारफलकृता गुटिका ॥

वृश्चिकविषस्य कुरुते संक्रमणमाशु करे विधृता ॥ १३ ॥

अथ मंत्रोलिख्यते ॥

ॐ आदित्य रथवेगेन विष्णुवाहुवलेन च ॥

सुपर्णपक्षवातेन भूम्यां गच्छ महाविष ॥ १४ ॥

ॐ पक्षयोगिपादाज्ञाश्रीशिवोत्तमप्रभु-

पादाज्ञा भूम्यां गच्छ महाविष ॥ १५ ॥

इति मंत्रं वृश्चिकविषस्य कर्णे जपेत् एकविंशतिवारं

रं वंशं स्पृष्ट्वैकविंशतिवारं चाभिमंत्रयेन्निर्विषो भवतितरां

इति वृश्चिकविषम् ॥

अंकोलमूलनिःकायं फाणितं सघृतं लिहेत् ॥

तैलाक्तश्चित्रनानांशगरदोषविषापहः ॥ १७ ॥

शर्कराचूर्णसंयुक्तं चूर्णं ताप्यसुवर्णयोः ॥

लेहः प्रशमयत्युग्रं नानायोगकृतं विषम् ॥ १८ ॥

इति कृत्रिमविषम् ॥

काकोदुंवरिकामूलं धत्तूरकफलान्वितम् ॥

पीतं तंडुलतोयेन सारमेयविपांपहम् ॥ १९ ॥

इति श्वानविपापहम् ॥

पिचुमंदशमीवटकल्कयुतं

क्वथितं जलमाशु विलेपनतः ॥

नखदंतविपाणि निहंति नृणां

विपमान्यखिलान्यपि सत्यमिदम् ॥ २० ॥

सोमैवल्कोश्वैकर्णश्च गोजिह्वा हंसपद्यापि ॥

रज्ज्व्यौ सौरिकं लेपः पिडिकामक्षिकाविये ॥ २१ ॥

इति पिडिकामक्षिकावियम् ॥

मरिचं नागरोपेतं सिंधुसौवर्चलान्वितम् ॥

नागवल्लीरसो हन्यालेपनाद्वरटीविपम् ॥ २२ ॥

इति वरटीविपम् ॥

नागरं गृहकपोतपुरीषं बीजपूरकरसो हरितालम् ॥

सैधवं च विनिहंति विलेपादाशु भृंगजनितं विपमेतत् ॥

इति ध्रमराविपम् ॥

आगारधूममंजिष्ठा रजनीलवणोत्तमैः ॥

लेपो जयत्याखुविषं कोशातक्यथवा सिता ॥ २४ ॥

इति मूषकाविपम् ॥

शिरीषबीजैः कुलिशदुमस्य क्षीरेण पिष्टैः कृतलेपनानां ॥

विषं विनाशं व्रजति क्षणेन मंडूकदंशप्रभवं नराणां ॥ २५ ॥

इति मंडूकाविपम् ॥

शनौ निर्मम्य यष्टिं च पूर्वपुष्करिणीस्थिताम् ॥

खौ प्रातस्तत्र गत्वा विद्वान्संयतमानसः ॥ २६ ॥

तडागसंस्थितस्तंभात्काष्ठमानीय खंडशः ॥

पिवेद्बद्धः प्रमुच्येत नार्या बद्धेन्द्रियोपि च ॥ २७ ॥

इति स्त्रीवद्धविषम् ॥

कृष्णवेत्रस्य निःकाथः कल्को घृतविमिश्रितः ॥

शृंगिमत्स्यविषं हन्ति बर्हिपक्षेण धूपनम् ॥ २८ ॥

इति शृंगिमत्स्यविषचिकित्सा ॥

पिपीलिकाभिर्दृष्टानां मक्षिकामशकैस्तथा ॥

गोमूत्रेण वरांलेपः कृष्णवल्मीकमृत्कृतः ॥ २९ ॥

इति पिपीलिकाविषम् ॥

लेपः प्रदीपतैलस्य खर्जूरविषनाशनः ॥

हरिद्रादयलेपो वा सगैरिकमनःशिलः ॥ ३० ॥

इति शतपदीविषम् ॥

कटभ्यर्जुनशैरीषसेलुक्षीरद्रुमत्वचः ॥

कषायकल्कचूर्णाः स्युः कीटलूतात्रणापहाः ॥ ३१ ॥

रजनीद्वयमंजिष्ठापतंगजकेसरैः ॥

शीतांबुपिष्टैरालेपः सद्योलूताविषापहः ॥ ३२ ॥

गिरिकर्णीद्वयं सेलुः पाटला द्वे पुनर्नवे ॥

कपित्थश्च शरीषश्च लेपो लूताविषापहः ॥ ३३ ॥

इति लूताविषम् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां विषचिकित्सानामा

ष्टसप्ततितमस्तरंगः ॥

एकोनाशीतितमस्तरंगः ।

अथ रसायनम् ॥

यज्जराव्याधिशमनं भेषजं तद्रसायनम् ॥

पूर्वं वयसि मध्ये वा शुद्धकायः समाचरेत् ॥ १ ॥

अविशुद्धशरीरस्य युक्तो रसायनो विधिः ॥

न भाति वाससि क्लिष्टे रंगयोग इवार्पितः ॥ २ ॥

सिंधूत्थशर्कराशुंठीकणामधुगुडैः क्रमात् ॥

वर्षादिष्वभया सेव्या रसायनगुणौषिणा ॥ ३ ॥

मंडूकपर्ण्याः स्वरसः प्रयोज्यः

क्षरिण यष्टीमधुकस्य चूर्णम् ॥

रसो गुडूच्यास्तु समूलपुष्प्याः

कटकः प्रयोज्यः खलु शंखपुष्प्याः ॥ ४ ॥

आयुःप्रदान्यामयनाशनानि

बलाग्निषर्णस्वरवर्द्धनानि ॥

मेध्यानि चैतानि रसायनानि

सेव्या विशेषेण तु शंखपुष्पी ॥ ५ ॥

यः कुष्ठचूर्णं रजनीपिरामे

मध्याज्यसन्मिश्रितमस्ति नित्यम् ॥

समत्तमातंगवलः सुगंधि-

र्वाग्मी चिरायुश्च भवेन्मनुष्यः ॥ ६ ॥

शिशिरे योश्वगंधायाः कंदचूर्णं पलोन्मितम् ॥

मास्तमस्ति सप्तमध्याज्यं स वृद्धोऽपि युक्त भवेत् ॥ ७ ॥

घृतामलकशर्करातिलपलाशबीजानि यः

समानि शयनस्थितो मधुयुतानि स्वादेन्निशि ॥

बलीपलितवर्जितस्तरुणनागनुत्प्यो बली

वृहस्पतिसमः पुमान्भवति सोऽचिरेण ध्रुवम् ॥ ८ ॥

इति राजमार्तढान् ॥

ये मासमेकं स्वरसं पिवन्ति दिनेदिने भृंगसमुत्थमत्र ॥  
 क्षीराशिनस्ते वलवर्णयुक्ताः समाशतं जीवितमाप्नुवन्ति  
 असिततिलविमिश्रान्पल्लवान्भक्षयेद्यः  
 ससुरभिपयसो वै भृंगराजस्य मासम् ॥  
 भवति च चिरजीवी व्याधिभिर्निर्विमुक्तो  
 भ्रमरसदृशकेशः कामचारी मनुष्यः ॥ १० ॥

पीताश्वगंधा पयसार्द्धमासं  
 घृतेन तैलेन सुखांबुना वा ॥  
 रुशस्य पुष्टिं वपुषो विभर्ति  
 नरस्य सस्यस्य यथांबुवृष्टिः ॥ ११ ॥

इति वृंदात् ॥

सततमंरुष्करपिप्पलिवृद्धि-  
 र्वपुषि निरामयतां विदधाति ॥  
 कनकशिलाजनुगुगुलुधात्री-  
 फललशुनत्रिफलामययोगः ॥ १२ ॥  
 घृतदधिमधुरपयोदधिमंडै-  
 रुपसि रुतः करिकर्णपलाशः ॥  
 स्थगयति हि स्थिरतां स्थविराणां  
 विदधाति वपुर्वलवत्ताम् ॥ १३ ॥  
 एरंडतैलमथ निवफलाद्वितैल-  
 मेतद्रसायनमनामयकायकारि ॥  
 ज्योतिष्मतीफलपलाशफलोद्भवं वा  
 तैलं बलीपलितहारि भिषक्प्रदिष्टम् ॥ १४ ॥



धात्रीफलानि पयसांपतिवारिणा वा  
 स्विन्नानि यः शिशिरकालसमुद्भवानि ॥  
 निष्क्रेवलान्यथ तिलैरसितैः समानि  
 खादेदनामयवपुः स पुमाञ्छतायुः ॥ १५ ॥  
 ससितया वचयामलकैरथ  
 त्रिफलया त्वथवा घृतमिश्रया ॥  
 कनकलोहरजः सदलंकृतं  
 परमिदं हि रसायनमुच्यते ॥ १६ ॥

इति कलिकातः ॥

अंभसां प्रमृतीरष्टौ र्वावनुदिते पिवेत् ॥  
 वातपित्तकफाजित्वा जीवेद्वर्षशतं दृढम् ॥ १७ ॥  
 व्यंगवलीपलितघ्नं पीनसवैस्वर्यकासशोषघ्नम् ॥  
 रजनीक्षयेषुनस्यं रसायनं दृष्टिजननं च ॥ १८ ॥  
 मलकंचुकपरिमुक्तः पूतः पद्मगुणगंधकजारितः सूतः ॥  
 निजसेवकजननूतनकल्पः सुरताविधौ दलितोत्तमतल्पः ॥  
 सिंदूराख्यः सूतो वरया प्रातर्जग्धो घृतमधुरया ॥  
 वितरति तरुणिमरूपमुदारं बृद्धस्यापि विमोहति दारम् ॥  
 बलिरेको घृतमरिचनियुक्तः पलितबलिघ्नः प्रातर्भुक्तः ॥  
 तद्गन्धारितमध्रं सत्त्वं किमपरमास्ति रसायनतत्त्वं ॥ २१ ॥

इति चर्पटितः ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां रसायनाधिकारोनाम

एकोनाशीतितमस्तरंगः ॥

अशीतितमस्तरंगः ॥

अथ बाजीकरणम् ॥

अतिव्यवायशीलो वा न च बाजीक्रियारतः ॥

ध्वजभंगमवाप्नोति स शुक्रक्षयहेतुकं ॥ १ ॥  
 प्रसाध्यं सहजं क्लेब्यं मर्मच्छेदाच्च जायते ॥  
 साध्यानामवशिष्टानां कार्यौ वाजीकरो विधिः ॥ २ ॥  
 पिप्पलीलवणोपेतौ वस्तांडौ क्षीरसर्पिषा ॥  
 साधितौ भक्षयेद्यस्तौ स गच्छेत्प्रमदाशतम् ॥ ३ ॥  
 वस्तांडसिद्धे पयसि भावितानसकृत्तिलान् ॥  
 यः खादेत्स पुमान्गच्छेत्स्त्रिणां शतमपूर्ववत् ॥ ४ ॥  
 मृतं नागाभ्रकं तीक्ष्णं समं खल्वे विमर्दयेत् ॥  
 धतूरबीजं विजया शाल्मली मधुकेन च ॥ ५ ॥  
 नागवल्लीद्रवैर्भाव्यं त्रिवारं चार्कशोपितम् ॥  
 चतुर्गुजामितं खादेच्छर्कराघृतसंयुतम् ॥ ६ ॥  
 पंडत्वमग्निमाद्यं च प्रमेहविशर्ति तथा ॥  
 हरते कुरुते वीर्यं पुष्पधन्वा रसो नृणाम् ॥ ७ ॥  
 चूर्णं विदार्याः सुकृतं स्वरसेनैव भावितम् ॥  
 शर्करामधुसर्पिर्भ्यां युक्तं लीढ्वा पयः पिवेत् ॥ ८ ॥  
 एतेनाशीतिवर्षोपि युवेव परिदृश्यति ॥  
 विदारीकंदचूर्णं तु घृतेन पयसा नरः ॥ ९ ॥  
 उदुंबरसमं खादेद्दृढोपि तरुणायते ॥  
 गोक्षुरुकः क्षुरकः शतमूली वानरिनागवलातिवला च ॥  
 चूर्णमिदं पयसानिशिपेयं यस्य गृहे प्रमदाशतमस्ति १०  
 इति वृंदात् ॥

शतावरीनागवलाविदारिका-  
 त्रिकंटकैरामलकीफलान्वितैः ॥  
 विचूर्णितैः पंचभिरेकशः पृथक्  
 प्रकल्पितैर्वा घृतमाक्षिकप्लुतैः ॥ ११ ॥

इति प्रयोगाः षडिमे भिषग्वरै-  
 रुद्धीरिताः शर्करया समन्विताः ॥  
 नृणामनेकप्रमदोपसर्पिणां  
 प्रधानधातोरतिरेककारणाः ॥ १२ ॥  
 सघृतमधुवलात्रयस्य चूर्णं  
 समधुसिताघृतमुच्चैरोद्भवं वा ॥  
 समधुकमथ मापमुद्वपण्यो-  
 रमृतलतामलकत्रिकंटकं वा ॥ १३ ॥  
 इति कथितमिदं हि पुष्पिताग्रा-  
 चरणचतुष्टयवेष्टनेन शिष्टैः ॥  
 अभिमतमसरुद्धवायभाजा-  
 मिह खलु योगचतुष्कमाविकल्प्य ॥ १४ ॥  
 पिवति यः पयसा कृतशोधन-  
 त्रिकंटकं मधुकं धड्डुपुत्रिकाम् ॥  
 अतिवलामथ नागवलां वला-  
 मिह हि नागवलः स पुमान्भवेत् ॥ १५ ॥

इति चिकित्सातः ॥

कुष्ठं कट्फलसैन्धवं त्रिकटुकं मेथीयवानीद्वयं  
 वासा मोचरसं विदारिमुशली ज्ञातीफलं चित्रकम् ॥  
 जीरं चापरजीरकं गजकणा द्राक्षाभया वानरी  
 तालीसं त्रिसुगंधिकं त्रिलवणं वैभीतकं गुंगिका ॥ १६ ॥  
 रंभा कंदशतावरीद्वयसर्पटायुष्टीप्रियालामृता  
 जातीपत्रलवंगकेसरजलं गोक्षूरकं शाल्मली ॥  
 धात्रीमापपुनर्नवाञ्च कनकं गुंगाटकं मस्तकी

मांसी चापि वलात्रयं च नलदं भांगीभकर्णस्तिलाः १७  
 कंकोलं करहाटकं च विजया श्रीरुग्रगंधा कुहू-  
 र्मज्जापद्मजवीजभेदमखिलं चूर्णीकृतं स्निग्धकम् ॥  
 एतत्कर्पमितं पृथक् पृथगथो तुर्यांशतुल्यां जयां  
 तस्याद्वीशमितं मृताभ्रकमहिर्वगं तदर्थं क्षिपेत् ॥ १५ ॥  
 लोहं भारितमेतदर्थममलं सूतं तदर्थं मृतं  
 सर्वभ्यो द्विगुणा सिताथ मधुना चाज्येन संमिश्रयेत् ॥  
 कार्यास्तस्य पलप्रमाणवटिकाः खादेद्यथाग्निं प्रगे  
 नक्तं वेति जराविपत्तिशमनीमेकां च दुग्धं पिवेत् ॥ १९ ॥  
 एषा सौगतसिंहनामभिपजा लोके प्रकाशीकृता  
 हर्मीराय महीभुजे शतवधूसंभोगभाजे भूशम् ॥  
 एषा वीर्यकरी महामयहरी क्षुद्रोधतेजस्करी  
 कान्तिस्थौल्यमतिप्रकाशजननी चिंतामयध्वंतिनी २० ॥  
 तारुण्योद्धतकामिनीजनमहादर्पद्विपानां महा-  
 सिंही सर्वमनोविनोदनकरी श्रीकामदेवाभिधा ॥ २१ ॥

इति कामदेववटी ॥

कर्पूरागुरुचोचबोलंनलिकालाक्षासटीधातकी-  
 पुष्पैः सप्तदलैलवालुसुरसाशैलेयमांसीप्लवैः ॥  
 एलाकुंकुमरोचनादमनकश्रीवासजातीफलैः  
 कंकोलक्रमुकाजटामदमुराकौंतीलवंगामयैः ॥ २२ ॥  
 बालोशीरमृणालजातिकुसुमस्थौणेयचंडानसै-  
 र्जातीपत्रकुलीरपद्मरुयुतैः स्पृक्षान्वितैः पालिकैः ॥  
 लाक्षायोजनवडिलोघ्रसलिलैस्तैलं विषाण्डकं  
 तेनाभ्यज्य तनुं जरन्नापि भवेत्स्त्रीणां परं कथम् ॥ २३ ॥

गुक्राढ्यो द्युतिमानल्पतनयः पंडोपि रत्युत्सुको  
 बंध्या गर्भवती भवेदपि तथा वृद्धापि सूते सुतम् ॥  
 कंदूस्वेदविचर्चिकामलहरं दौर्गन्ध्यकुष्ठापहं  
 दस्त्राभ्यां परिकीर्तितं बहुगुणं तैलं सुगंधाभिधम् ॥२४॥  
 इति महासुगंधितैलम् ॥

पलं गोक्षुरबीजस्य द्विपलं कपिकच्छुकम् ॥  
 पलं नागबलाबीजं पलमेकं शतावरी ॥ २५ ॥  
 विदारीकंदचूर्णस्य पलद्वयमथापरम् ॥  
 द्विपलं त्रपुसीबीजं वाजिगंधापलत्रयम् ॥ २६ ॥  
 वास्ता च तालमूली च गुडूची रक्तचन्दनम् ॥  
 त्रिसुगंधकणाधात्रीलवंगं नागकेसरम् ॥ २७ ॥  
 एतानि कर्पमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥  
 बालशालमलिमूलं च भावयेदेकविंशतिः ॥ २८ ॥  
 कशकाशशिफासप्तशर्करासमयोजितम् ॥  
 दुष्टं शुक्रं क्षीर्यहार्नि मूत्ररुच्छ्राणि यानि च ॥ २९ ॥  
 मूत्रायातं मूत्रदोषं जयेच्छुक्रविवर्धनम् ॥  
 शतं गच्छति च स्त्रीणां हयतुल्यपराक्रमः ॥ ३० ॥  
 बंध्या पुत्रमवाप्नोति भुक्त्वा चूर्णमिदं कृमात् ॥  
 कामदेवाभिधं चूर्णं धन्यंतरिनिरूपितम् ॥ ३१ ॥  
 इति कामदेवचूर्णम् ॥

अश्वगंधाप्रस्थमेकमजाक्षीरे चतुर्गुणे ॥  
 घृतस्य प्रस्थमादाय खंडप्रस्थत्रयं तथा ॥ ३२ ॥  
 प्रस्थार्द्धाश्रतिलान्मापान्पाचयेन्मृदुबहिना ॥  
 व्योपत्रिजातहपुषाशताह्वाशतमूलिका ॥ ३३ ॥  
 दीप्यपौष्करकौ जाती सटी गोक्षुरकंपला ॥

यवानी ग्रंथिकं लोहं नागं शुल्बं पलंपलम् ॥ ३४ ॥

क्त्वा सिद्धेऽत्र विधिवत्प्रातः स्वादेद्यथावलम् ॥

सर्ववातामयान्हन्ति कटिपृष्ठिगुदस्थितान् ॥ ३५ ॥

अस्थिभंगं तथा शोफं संधिवातं सुदारुणम् ॥

व्रणद्वद्रोगगुल्मार्शःश्वासकासप्रमेहनुत् ॥

अश्विभ्यां विहितो योगो बाजीकरणमुत्तमम् ॥ ३६ ॥

इत्यश्वगंधापाकः वृंदात् ॥

चत्वारो व्योमभागास्तदनु निगदितं भागयुग्मं च वंगं  
भागैकं शंभुबीजं त्रितयमपि मृतं तत्समा सिद्धमूली ॥

चातुर्जातं सजातीफलमरिचकणानागरं देवपुष्पं

जातीपत्रं च भागद्वितयमथ पृथक्सर्वमेकत्र चूर्ण्यम् ३७

सर्वशंशा सिता स्याद्द्वनमधुसहितासोदकीकृत्य चैतत्

स्वादेर्वाग्निं समीक्ष्य प्रसभमभिनयानंदसंबर्द्धनाय ॥

योगो बाजीकराख्योऽयमिह निगदितो भैरवानंदनाम्ना

निःशेषव्याधिहंता दलितबहुवधूदामकंदर्पदर्पः ॥ ३८ ॥

इति मदनमंजरीवटिका ॥

.....लागुताग्रहापटवास्तकः ॥

प्रत्येकं कुडवं त्वेतदश्वगंधापलाष्टकम् ॥ ३९ ॥

क्षीरपंचाढके पक्त्वा घृतप्रस्थेन पाचयेत् ॥

आत्मगुप्ताग्रस्थमेकमश्वगंधासशीलकम् ॥ ४० ॥

सुगोते शर्कराग्रस्थत्रयमात्रं विनिक्षिपेत् ॥

चातुर्जातं त्रिकदु च जातीपत्रीकुवेरकम् ॥ ४१ ॥

जातीफलं लवंगं त्वक्तगरं मुशली मिशिः ॥

आकल्पधान्याजीराब्धिनिम्बमांशीपलत्रयम् ॥ ४२ ॥

हपुषापुष्करं दीप्यं प्रत्येकं चूर्णितं पलम् ॥

तुगालोहाभ्रवंगेभ्यः प्रत्येकं द्विपलं क्षिपेत् ॥ ४३ ॥

पलं पारदताम्रं तु अहिफेनपलं तथा ॥

विजयाष्टपलं शुद्धं मुक्ता चार्द्धपलं भवेत् ॥ ४४ ॥

विंशान् मेहान्श्वासकासं पांडुहर्षवलक्षयम् ॥

वातव्याधिमुस्तंभं हिक्काशोफकटिग्रहम् ॥

शूलहृद्रोगमंदाग्निक्षयपीनसनाशनः ॥ ४५ ॥

इति कपिकच्छुपाकः

कूष्मांडस्य तुलां विधाय विधिवत्स्विन्नां प्रविष्टां पुन-  
र्युक्तां कर्षमितैः सुचूर्णिततमैर्व्योषाम्लजीराग्निभिः ।

चातुर्जातवरावलात्रयवरीनालीसमेथीत्रिवृ-

दंतीवारणपिप्पलीक्षुरतिलाद्राक्षत्रिकंटांशुदैः ॥ ४६ ॥

चव्याश्वाभयचारवानरिसटीयष्टीतुगापिप्पली-

मूलाजैः सलवंगशालमलिजयाकंकोलजातीफलैः ॥

जातीकोशविदारिर्तिथुमुशलीगुंगाटकैः सर्पियः ।

प्रस्थेनाभ्रपलेन वापि सितया सार्द्धं तुलामानया ४७।

युक्तया साधु विपाच्य भाजनगतं कृत्वा यथाग्निं प्रगे

कूष्मांडस्य रसायनं सुललितं शुद्धो नरः शीलयेत् ॥

वृष्यं वृंहणमग्निदीपनकरं यक्ष्माक्षुपित्तापहं

पांडुश्वासजितं च पित्तशमनं मेहादिरोगप्रणुत् ॥ ४८ ॥

एतेनातिवली वलीविरहितः स्त्रीणां युवेव व्रजे

हृद्वाहृद्भूतरो नरोतिललितः प्रज्ञासभापूजितः ॥ ४९ ॥

इति कुष्मांडपाकः ॥

प्रस्थं गोक्षुरसूक्ष्मचूर्णमुदितं दुग्धाढके पाचितं

गायत्रीसलवंगलोहमरिचं कर्पूरमन्दारकम् ॥

अन्धेः शोषमजाजियुग्मरजनीधात्रीकणाकेसरं  
जातीकोशफले सदीप्यनलदं गुंठी कुवेराक्षकम् ॥ ५० ॥

गुल्यं शर्करया तदर्द्धविजया प्रस्थादकं गोघृतं  
वैद्यवरेण निर्मितमिदं प्रौढांगनादर्पनुत् ॥

वीर्यस्तंभकरं च पुष्टिजनकं बाजीकरं कामिनां  
भुंक्तो गोक्षुरपाक एष हरिणीनेत्राविलासास्पदम् ॥ ५१ ॥

इति गोक्षुरपाकः ॥

अथ वीर्यस्तंभनम् ॥

कुल्लथबीजानि विचूर्णितानि

तनूनपात्पत्रबधूपयोभिः ॥

छायांसु सम्यक्षु निशो विभाव्य

तैलं ततः पुष्करतो गृहीत्वा ॥ ५२ ॥

तेन मर्दितमिदं शिवबीजं गुंजया परिमितं परितोल्य ॥

भक्षितं पलितनाशनं भवेद्दीर्यरोधकरमेव सत्यता ५३ ॥

सहहिफेनविमर्दितपारदे कनकबीजरसेन विमर्दिते ॥

समसिताविजये यदि भक्षिते न रजनी न दिवा न दिवाकरः

जातीफलार्ककरहाटलवंगगुंठी-

कंकालकेसरकणाहरिचंदनं च ॥

एतत्समानमहिफेनमचंद्रमभ्रं

सर्वैः समं न सहते रतिर्विदुपातम् ॥ ५५ ॥

सर्वैः समांशा खलु शर्करा तु

देया भिषग्भिरखिलार्थविद्धिः ॥

घृतेन साकं मधुना च सार्द्धं ॥

कृत्वा बटी टंकमितां च दद्यात् ॥ ५६ ॥



लोहं ताम्राध्रसूतं सुरकुसुमजलं चंद्रसंजातिपत्रं  
 पत्रं जाती फलैलासमरिचकरहांटाजमोदाहिफेनम् ॥  
 सामुद्रौ सिंधुशोषावपि घृतमधुनी मर्दयित्वास्य टंकं  
 खादेदन्नेतिर्जीर्णं नियतमिहरता स्तंभनं रेतसः स्यात् ॥  
 खसफलशुंठीकाथः पोडशशोपेण गुडेन निशि पीतः ॥  
 कुरुते रते न पुंसो रेतःपतनं विनाम्लेन ॥ ५८ ॥  
 चटकांडं तु संगृह्य नवनीतेन पेपयेत् ॥  
 तेन प्रलिप्तपादस्य शुक्रस्तंभः प्रजायते ॥  
 यावन्न स्पृशते भूमिं तावत्स्यान्नात्र संशयः ॥ ५९ ॥  
 खसतिलपलमेकं शुंठीकर्पं सितापलद्वंद्वम् ॥  
 एतच्चूर्णं पयसा पीतं रेतोरयं ध्रुवंधत्ते ॥ ६० ॥  
 पारदगंधकचंपकैकेशरसुरकुसुमकरहाटाः ॥  
 अजमोदांबुधिशोषौ जातीपत्रं च जातिफलम् ॥ ६१ ॥  
 प्रत्येकं भागैकं भागद्वितयं च शुद्धमहिफेनम् ॥  
 तेन वदरसदृशगुटिकाः कार्या मधुनाथ भक्षयेदेकाम् ॥ ६२ ॥  
 यामेतीते ललनां सविधे स्थित्वा जवानिकाकर्पं ॥  
 तैलार्द्रं भुंजीयादनुपानं चैतदेतस्य ॥ ६३ ॥  
 लिंगं कठिनतरं स्याद्दीर्घं संस्तंभयेद्यामम् ॥  
 एषा सौगतागुटिका सत्यं सत्यं च शुक्ररोधकरी ॥ ६४ ॥  
 इति सौगतागुटिका ॥  
 कर्पूरं टंकणं सूतं तुल्यं मुनिरसं मधु ॥  
 संमर्द्य लेपमेल्लिंगं स्थित्वा यामं तथैव च ॥ ६५ ॥  
 ततः प्रक्षाल्य रमयेद्वनितानां शतं सुखम् ॥

वीर्यस्तंभकरं पुंसां सम्यङ्नागार्जुनोदितम् ॥ ६६ ॥

इति चक्रदत्तात् ॥

अहिफेनं दुग्धशुद्धं रक्तिकात्रितयोन्मितम् ॥

विंदुवेगं ध्रुवं धत्ते सितया निशि भक्षितम् ॥ ६७ ॥

जातीफलं टंकमितमहिफेनं च टंककम् ॥

अजमोदा चैकटंका चंद्रसं चैकटंककम् ॥ ६८ ॥

सितोपला त्रिटंका स्यात्पंचटंको गुडो मतः ॥

बुद्ध्या संमेल्य वटिकाः कार्या द्वादश तुल्यशः ॥ ६९ ॥

तत्रैकां भक्षयेद्भीमान् शुक्रं स्तंभयति ध्रुवम् ॥

टंकं पतंगचूर्णस्य जातीपत्रस्य टंककम् ॥ ७० ॥

अहिफेनस्य टंकं हि दरदं टंकयुग्मकम् ॥

अर्द्धं वाप्यथ वा सर्वं चूर्णं स्वादेद्यथावलम् ॥ ७१ ॥

पिबेदनु पयः स्वल्पं वीर्यस्तंभं करोति हि ॥

महायोगोऽयमुदितः शुक्रस्तंभकरः परः ॥ ७२ ॥

इति महायोगः ॥

करवीरजटालेपं यः करोति नरो मणौ ॥

वीर्यस्तंभं स लभते कार्णाटीसुरतेष्वपि ॥ ७३ ॥

सूतोऽप्यप्यमितः स्वदोषरहितस्तनूर्यभरणो नृत्ति-

स्तन्मानस्तु भुजंगफेन उदितः क्षुद्राफलस्यांबुना ॥

एतद्गोलकमाकलय्य विपचेत्क्षुद्राफले हेमगे ॥

लावैरष्टमितैर्भवेदिति रसः श्रीकामदेवाभिधः ॥ ७४ ॥

मात्रा सूर्योदये गुंजामेकं यामचतुष्टये ॥

गुंजाचतुष्टयं देयं नागवल्लीदलान्वितम् ॥

दुग्धौदनमलवणं रात्रौ क्षीरं यथेच्छया ॥ ७५ ॥

नागाहिफेनं फलिनीविपमुष्टिदिग्धे  
 वस्त्रे निवध्य रसगंधकखंपराणि ॥  
 गौर्या पचेत्तदनु लावणुटैः शतेन  
 सौवर्णवीजजठरे विनियोजितानि ॥ ७६ ॥  
 निष्पेपयेदशदशांतरतश्च तेषां  
 तोयैरपूपमुपकल्प्य विशुष्कमर्कैः ॥  
 तत्कर्दमैः प्रतिपुटं प्रविधाय दिग्ध-  
 मेवं पुटे दधिशातं रसरज एषः ॥ ७७ ॥

रेतःस्तंभं विधत्ते वपुषि च घनतामग्निमांशं निहन्या-  
 द्यक्षमाणं च क्षणेन क्षपयति सहसा पौरुषं व्यातनोति ॥  
 उच्चैः शूलप्रमेहानिलकफगदहृद्रोगपांडुप्रतिश्या-  
 कासश्वासोदराक्षिश्रवणमुखगदानाशु स्वादत्यवश्यम् ॥  
 इति रसरजविधिः ॥ पाठांतरेण स एव लिख्यते ॥

पलं मृदुस्वर्णदलं रसेन्द्रः पलाष्टकं षोडशगन्धकस्य ॥  
 शोणैः सुकर्पातभवप्रसूनैः सर्वं विमर्द्याथ कुमारिकाङ्गिः ॥  
 तत्काचकुंभे निहितं सुगाढे मृत्कर्पटैस्तद्विवस्त्रयं च ॥  
 पचेत्कमाग्री सिकतारूप्यपत्रे ततो रजः पञ्चवरागरम्यं ॥  
 निगृह्य चैतस्य पलं पलानि चत्वारि कर्पूररजस्तथैव ॥  
 जातीफलं सोपणमिन्द्रपुष्पं कस्तुरिकाया इहशाण एकः ॥

चंद्रोदयोयं कथितोस्य मायो

भुक्तो हि बह्नीदलमध्यवर्ती ॥

मदोन्मदानां प्रमदाशतानां ॥

गर्वाधिकत्वं श्लथयत्यकाडि ॥ ८२ ॥

शृतं घनीभूतमजीवदुग्धं

मृदूनि मांसानि समंडकानि ॥

माषान्नपिष्टानि भवन्ति पथ्या-

न्यानंददायीन्यपराणि चात्र ॥ ८३ ॥

वलीपालितनाशनस्तनुभृतां वयःस्तंभनः

समस्तगदखंडनः प्रचुरयोगपश्चाननः ॥

गृहेषु रसराम्यं भवति यस्य चंद्रोदयः

स पंचशरदर्पितो मृगदृशां भवेद्वह्मभः ॥ ८४ ॥

इति चंद्रोदयो रसः रसरत्नप्रदीपात् रसमंजर्या-

मस्यमकरध्वज इति नाम ॥

नागाहिफेनफलिनीविषमुष्टिबिलेपिते ॥

बस्त्रे निबध्य विधिवद्रसगंधकखर्परी ॥ ८५ ॥

गौर्या पचेल्लावपुटैः शतेन विनियोजयेत् ॥

ऊर्ध्वाधो हेमवीजानि पेपयेद्दशतः क्रमात् ॥ ८६ ॥

तेषां तौर्यैः पुनः कृत्वा पूषिकामर्कशोपिताम् ॥

तत्कर्दमैः प्रतिपुटं दिग्धां कृत्वा पुटेच्छतम् ॥ ८७ ॥

रसराम्यो भवत्येष सर्वरोगहरो रसः ॥

जंबुवर्णांतिकठिनो रूक्षो जीर्णवलिर्भवेत् ॥ ८८ ॥

जातीफललवंगाभ्यां रतौ वीर्यं निरोधयेत् ॥

पटुर्दाप्यग्निवाविश्वैर्वैश्वानरविबर्द्धनः ॥ ८९ ॥

क्षयघ्नस्तु रयाशोघ्नस्तकरुष्णाभयान्वितः ॥

गृहिण्यां जातिकोशेन रेके कुटजवारिणा ॥ ९० ॥

प्रमेहे शाल्मलीद्रवैर्वैदर्याक्षिगदे हितः ॥

सामे वापि निरामे वा समे वा विषमे ज्वरे ॥ ९१ ॥

देयो नताब्दकदुकावारिविश्वशूतेन वै ॥

राम्नांभसा वातरोगे पित्तरोगे सिता त्रुटिः ॥ ९२ ॥

अक्षत्वचाकफव्याधौ पांडुरोगेऽजमूत्रकैः ॥  
 अश्मर्यामश्मभेदेन कुष्ठे वल्गुर्जवायसैः ॥ ९३ ॥  
 भगंदरे गुडेनैव त्रणे पुरुंवरायुतः ॥  
 मेदो रोगेषु मधुना प्रदरेऽशोकवारिभिः ॥ ९४ ॥  
 शूले हिङ्गकुरंजाभ्यामरुचौ रुचकेन च ॥  
 छर्द्या धात्रीरसेनैव क्षैण्ये पर्णेन दापयेत् ॥ ९५ ॥  
 द्राक्षारसेन शोषे च संज्ञानाशे किरातकैः ॥  
 मूच्छायां चंदनांभोभिर्विद्रधौ वरणां वुना ॥  
 सर्वेष्वन्येषु रोगेषु तांबुलीपर्णयोगतः ॥ ९६ ॥  
 इत्यपरो रसरजः ॥

काथं पिवेद्वा खसवल्कलानां सर्पिर्ज्वानीगुडमिश्रितं य  
 लभेत दाढर्यं सुरतेषु भूयो भवेद्रिरंतुः कंलविवत्सः ९७  
 सकर्पूरोरसः क्षौद्रजातीरसविमर्दितः ॥  
 लिङ्गलेपात्करोत्येष द्रावणं हरिणीदृशाम् ॥ ९८ ॥  
 लिङ्गनाडीषु कर्पूरं पातयित्वा विमर्दयेत् ॥  
 महिषीनिवनीतेन तद्भवेत्स्वरलिङ्गवत् ॥ ९९ ॥  
 श्वेताश्वमारमूलत्वक्कैरहाटाजमोदकम् ॥  
 रुष्णधनूरवीजानि सम्यग् जातीफलं तथा ॥  
 एतेषां पारिषिष्टानां गुटिकामरिचोन्मिता ॥ १०० ॥  
 एकया मणिलेपो हि नरमूत्रनिघृष्टया ॥  
 वीर्यं संस्तंभयत्येव सत्यमेतन्न संशयः ॥ १०१ ॥  
 इति लेपवटी ॥

किरिनं व्यवसापूर्णे कूर्मखर्परके धिया ॥

रक्तकार्पासिकावर्त्यादीपः शुक्लनिरोधकः १०२ ॥

अथ ध्वजवृद्धिकरणम्

भञ्जातकास्थिजलशूकमथाञ्जपत्र-

मन्तैर्विदस्य मतिमान्सह सैन्धवेन ॥

एतद्विरूढवृहतीफलतोयपिष्ट-

मालपयेन्महिषविद्धिमलीकृतेगे ॥ १०३ ॥

स्थूलं महत्स्वरतुरंगमतुल्यमाशु

शोषं करोत्यभिमतं न हि संशयोस्ति ॥ १०४ ॥

इति स्थूलीकरणम् ॥

कासीसतुरगगंधासारिवागजपिप्पलीविपक्वेन ॥

तैलेन यांति वृद्धिं स्तनकर्णवरांगलिंगानि ॥ १०५ ॥

शैवालैः सैधसरोरुहिणीदलानि ॥

भञ्जातकानि च फलानि च कंटकार्याः ॥

हैयंगवीनमपि माहिषमश्वगंधा-

कंदः सुधीः प्रणिदधीत दिनानि सप्त ॥ १०६ ॥

तैरुद्धतैस्तदनु यन्महिषीमलेन

चोद्धृत्य लिंगमुपलेप्य तमादरेण ॥

तस्याग्रतः स्वरतुरंगमंतंगजानां

लिंगानि लाघवपदं परमं प्रयांति ॥ १०७ ॥

अथवा ॥

उन्मत्तकस्वरसपेयितवाजिगंधा-

कंदोपगूढमहिषीनवनीतमादौ ॥

धार्य फले वृषभवाहनवल्लभस्य-

निःशेषबीजरहिते कतिचिदिनानि ॥ १०८ ॥

उद्धर्तितं तदनु यन्महिर्पीपुरीपै-

र्धनूरकांबुनवनीतविलेपितं च ॥

तत्साधनं निधुवनप्रणयोद्धतानां

नारीवरांगदलनक्षमतां दधाति ॥ १०९ ॥

इति ध्वजवृद्धिकरणम् ॥

क्षौद्रं क्षुद्रातगरमरिचैः पिप्पलीसैधवाभ्यां

प्रत्यक्पुष्पीयवतिलगुडश्वेतसिद्धार्थमापैः ॥

श्लक्ष्णीभूतैर्भवति मिलितं वाजिर्गन्धासनाथैः

श्रोणीश्रोत्रस्तनयुगशिरःशोफसंवृद्धिकारि ॥ ११० ॥

इति राजमार्तडात् ॥

उत्पलानि सपद्मानि क्षीरेणाज्येन पेपयेत् ॥

गुटिकां सुकृशां कृत्वा नारीयोनौ प्रवेशयेत् ॥

दशवारप्रसूतापि पुनर्भवति कन्यका ॥ १११ ॥

भंगापोटलिका दत्ता प्रहरं काममन्दिरे ॥

नितंविन्याः करोत्येषा कुमारीभगवद्भगम् ॥ ११२ ॥

जातीफलमहिफेनं दावीं चेति त्रिभिः समा भंगा ॥

परटीछत्रसमासौ गुटिकासंकोचनी योनेः ॥ ११३ ॥

इति योनिसंकोचनम् ॥

शुक्तिशंवूकशंखानां दीर्घवृंतात्समुष्णिकात् ॥

दग्ध्वा क्षारं समादाय स्वरमूत्रेण गालयेत् ॥ ११४ ॥

क्षाराष्टभागं विषयेत्तैलं सार्पपकं बुधः ॥

इदमन्तःपुरे देयं तैलमात्रेयभाषितम् ॥ ११५ ॥

विदुरेकः पतेद्यत्र तत्र रोमाभवः पुनः ॥

ग्रणार्शःकुष्ठषामामुददुर्गहहरंमतम् ॥ ११६ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां वाजीकरणचिकित्साशुक्रस्तंभ-  
योनिसंकोचनाधिकारो नामाशीतितमस्तरंगः ॥

एकाशीतितमस्तरंगः ।

मल्लीवल्लीसमूहे समुदितकुसुमामोदमत्तालिमाला-  
मूर्च्छज्झंकारनादाकुलवकुलकुलव्याकुलप्रोपितासु ॥  
माकंदास्वादमाद्यन्मधुरापिकंकुलालापदृष्यन्मनोज्ञः  
प्राप्तः कांतो वसंतस्त्रिभुवनविजयीप्राणबंधुः स्मरस्य ॥  
क्षौद्रेणार्द्रं विधाय प्रकृतमभयजं चूर्णमभ्यर्णसिद्धयै  
प्राश्नीयादुष्णरश्मिप्रतपनसहनः पंचकर्मैककर्मा ॥  
कुर्याद्वार्यः शिवाय भ्रमणमनुदिनं तोयपानं तटिन्याः  
शाल्यन्नं सिद्धमुद्रं कफमलहरणं पथ्यमेतद्वसंते ॥ २ ॥  
ग्रीष्मे गृह्णन्मयूखैरखिलरसमयं चंडधामातिकामा-  
न्नित्यंदाहोपशान्त्यै प्रभवति चविधुः खिन्नजन्मासुजन्मा  
दंपत्योश्चंदनाद्यैरुपाचितवपुषोः शीतिकल्पे सुतल्पे  
कर्पूराभःसुसिक्तव्यजनपरिचयाद्वायुरायुःस्वरूपः ॥ ३ ॥  
ग्रीष्मे तुल्यगुडां सुसैधवयुतां मेघावनंदैःश्वरे -  
तुल्यां शर्करया शरद्यमलया गुंठया तुषारागमे ॥  
पिप्पल्या शिशिरे वसंतसमये क्षौद्रेण संयोजितां  
राजन्प्राप्य हरीतकीमिव रुजो नश्यंतु ते व्याधयः ॥४॥

इति षडृतुहरीतकी ॥

ज्येष्ठे श्रेष्ठं गुंडाम्लं मसृणमभयजं चूर्णमभ्यर्णसिद्धयै  
संसिक्तं शीतनोचैर्गृहमाधिशयनं स्वादुशीतांबुपानम् ॥  
न व्यायामो न रौक्ष्यं प्रतपनसहनं नैव पथ्यं कटूष्णं  
न क्षारो नारनालो न दिननिधुवनं स्वप्नभावः प्रशस्तः ॥



गर्जङ्गीमांबुवाहः क्षणरुचिरुचिरालोकचंचद्विगंतः  
 कामं कूजंतकलापी निशि तरुशिंखरद्योतिखद्योतपोतः॥  
 धारासंपातजातश्रवणसुखलसद्भेकभेरीनिनादः  
 प्रावृट्कालागमोऽयं कुसुमशरसुद्धृङ्गसंगीतसंगी ॥ ६ ॥  
 पेयं कूपजलं सुसैधवयुता भक्ष्याभया प्रावृषि  
 स्थेयं सौधतले सुखोष्णसलिलैः स्नानं मुहुर्मर्दनम् ॥  
 स्नेहैर्नातिविधीयते निधुवनं भोज्यं च योज्यं जनैः  
 साज्यं सामिपमापमीनमुचितं साम्लं सदध्यादिकमूढ॥  
 संशुण्यत्पंकसंया रविकिरणरुचा फुल्लराजीवराजी  
 राजत्कलहारवल्लीकुसुमचयमिलद्वासनावासिताशा ॥  
 दुग्धांभोधेस्तरंगद्युतिरिव विलसत्तत्काशपुष्पप्रकाशा  
 चंचच्चंद्रांगुशोभा सकलजनमुदे शारदीरीतिरास्ताम् ॥  
 खादेच्चूर्णं शिवायाः शरदि समसितं रेचनं रक्तमुक्ति-  
 स्तोयं पेयं विशुद्धं रविशशिकिरणैरुत्तमं वा सरोंबु ॥ १ ॥  
 शाल्यन्नं सिद्धमुद्रं सघृतमनुपयः पानकं शर्कराढ्यं  
 पथ्यं तिक्तं कषायं रतिरतिरहितासायमिदुर्हिताय ॥  
 आलिंग्यालिंग्यगाढं मुखशयनगतान्वल्लभान्भात्रयंत्य  
 सोत्कंठं कंठदेशे पुनरपि सुरते शक्तिमुद्रावयंति ॥ १ ॥  
 हेमन्ते शीतभित्तिव्यथिततनुरिति व्याजमुत्पाद्य सद्यः  
 प्रारब्धाकालवृष्टिध्वनितिमिरयहृद्वातविद्युत्पयोदे ॥  
 पेय्यायाः सूक्ष्मचूर्णं समगुणतुलितं नागेरणात्र भक्ष्यं  
 शाल्यन्नं भुक्तमुष्णं बहुविधरचितं मापमम्लार्द्रयोगैः १३  
 सर्पिर्मांसं तमीनं दधिलवणयुतं दुग्धमुष्णं च पथ्यं  
 वातश्लेष्मानुसारे हिमयति सततं सेवयेदग्निभानु ॥  
 मंदंमंदं दिनांते ज्वलति द्रुतमहे पृष्ठतो वाग्रतो वा

धन्योलोकस्तरुण्याःस्तनजघनपरीरंभसंभोगसंगी १२॥  
 उच्चैस्तूलीविधानं सुललितशयनं कापि तैलं सुगंधं  
 तांबूलं तप्ततोयं भजति सुखबहं वासरे शैशिरेऽस्मिन् ॥  
 हेमन्ते यद्यदुक्तं हितमिह भिषजा वासरे शैशिरेऽस्मिन्-  
 स्तत्तत्सर्वहितायप्रभवतिकरणात्प्राणिनां प्राणभूतम् १३  
 किंचाप्यन्यत्तत्तूलीशयनंमभिन्वाप्राणरामाभिरामा  
 श्रेयस्याःश्लक्ष्णचूर्णं सुचिरमगंधजायुक्तमुक्तानुपानम् १४  
 इति षट्पुचिकित्सा तारसंग्रहात् ॥

कर्कशः कश्मलः स्तब्धः कुग्रामी स्वयमागतः ॥  
 पंच वैद्या न पूज्यन्ते, धन्वंतरिसमा यदि ॥ १५ ॥  
 आतुरस्य पिता वैद्यः स्वस्थीभूतस्य वांधवः ॥  
 अतिस्वस्थतरे जाते न पिता न च वांधवः ॥ १६ ॥  
 स द्वैधास्ते न येऽसाध्या नारभन्ते चिकित्सितुम् ॥  
 कुवैद्ये जीविनां सिद्धिः स्याद्गुणाक्षरवत्कचित् ॥ १७ ॥  
 आयुर्हिताहितं व्याधिर्निदानं शमनं तथा ॥  
 विद्यते यत्र धीमद्भिः स आयुर्वेद उच्यते ॥ १८ ॥  
 ब्रह्मदक्षाश्विरुद्रेन्द्रभूचंद्रार्कानिलानलाः ॥  
 ऋषयः सौषधिग्रामा भूतसंघास्तुष्टांतु नः ॥ १९ ॥  
 स्वार्थं चापि परार्थमादरतया दृष्ट्वा चतुःपंचपान्  
 ग्रंथान्वैद्यकृतान्प्रसिद्धपयगान्भट्टैस्त्रिमल्लाभिधैः ॥  
 एषा योगतरंगिणीसमभिधा साध्वी कृता संहिता  
 संक्षिप्ता सरसा सुखेन सुचिरं जीयादनेकाः समाः २०॥  
 इति श्रीयोगतरंगिण्यां त्रिमल्लभट्टयथितायां वैद्यप्रशं  
 साग्रंथांतमंगलं नाम एकाशीतितमस्तरंगः ॥

## ❧ विक्रयार्थ पुस्तक ❧

भक्तिमाला आथवा हरिभक्तिप्रकाशिका

यह ग्रंथ वार्तिक सबलोगोंकी समझमें आसकै ऐसी हिन्दुस्थानीभाषामें हमारे यहां छापके तयार है इसमें २४ निष्ठा और अनेकभक्तोंकी कथा विस्तारपूर्वक वर्णनकरी है भगवतनामकीमहिमा गुरुमहिमा भक्तीकी महिमा भक्तीकास्वरूप भगवतभक्तोंकी महिमा भक्तिमाला बनानेकाकारण भक्तिमालाकीमहिमा रसभेद भगवद्भजनविमुखपुरुषोंका आख्यान मुक्तीके स्वरूप का आख्यान निर्गुणसगुणकावर्णन मुख्यचारसंप्रदायों के अंतर और इच्छानुसार परिणाम उनके एकहोनेका वृत्तांत स्मार्तोंके मार्गका वृत्तांत भगवतके अवतार लेना और इच्छानुसार चरित्र करनेका कारण कुसंगसे हानि और संतसंगसे लाभकावर्णन वहीतसी निष्ठा होनेकाकारण निम्बार्क माध्व श्रीरामानुजीय विष्णुस्वामिआदि सब संप्रदायोंका विस्तार पूर्वक वर्णन मूलवृक्ष तिलकमुद्रा आदिवर्णन कियागयाहै इसलिये हरिभक्त जनोको अवश्य रखने लायकहै इसलिये जिन महाशयोंको आपेक्षितहो हमें जल्दीलिखै क्योंकि वहीत पुस्तकें विक्रि गई है और बराबर विक्रीचली जाती है

मू० ४५० डाकम० १० आणा

भाषान्यायप्रकाश श्रीमत् चिद्धनानंद स्वामि कृत

पूर्वमें जो आत्मपुराणभाषा श्रीमद्भगवद्गीता गूढा-

थदीपिका सह टीका विचारसागर वृत्तिप्रभाकर आदि ग्रंथ महात्मा लोगोने किये है तिन ग्रंथोंके वहीत स्थलोमें भेदवादी नैयायकोंका मत लिखाहै कहीं खंडन करनेके लिये कहीं दृष्टांत रूपकरिकै परंतु तिनवेदांत ग्रंथोविषे नैयायकोंके पदार्थ विस्तार पूर्वक-लिखे न हों और वहीत स्थलोमें तिन पदार्थोंके नाममात्रही लिखे हैं इसलिये पठन करनेवालोंके समझमें आवे नहीं इसकारण वहीत लोगोंकीप्रार्थनासे श्रीस्वामीजी ने यह ग्रंथ रचकर तयार किया और इस ग्रंथमें कणादिमुनिप्रणीत वैशेषिक शास्त्रके द्रव्यादिक सप्त पदार्थोंका तथा गौतम मुनिप्रणीत न्याय शास्त्रके प्रमाणादिक षोडश पदार्थोंका विस्तार पूर्वक निरूपण किया है. और प्रसंग पायकै मीमांसा शास्त्रके मतका तथा वेदांतशास्त्रके मतका तथा बौद्धोंके मतका तथा चार्वाकोंके मतका तथा आर्हतजैनोंके मतका तथा अन्य भी वहीत मतों का निरूपण कियाहै तथा तिन मतों का यथा योग्य खण्डनभी किया है और इस ग्रंथ में द्रव्यादिक पदार्थों का लक्षण तथा अनुमान तथा वेद स्मृति आदि वाक्योंको ( ) ऐसे कोष्ठकांतर्गत यथावत लिखकर तिस्का भषामें विस्तार पूर्वक वर्णन कियाहै इसलिये ये ग्रंथ भाषा वेदांत शास्त्र तथा न्यायशास्त्र पठन करनेवालों के लिये अतिउपयोगी है इस लिये २०००० ग्रंथकी प्रगंसा कहांतक लिखे देखनेसे इच्छापूर्ण होगी मूल्य डांकव्ययसहित ८ रुपये

लोलिवराज-इस ग्रंथको वैद्यजीवनभी कहते हैं संस्कृ-

त मूल संस्कृतटीका व भाषाटीका सहित बहोत उत्तम-  
कागद मोटे अक्षरमें छापके तयार है. और इस ग्रंथको  
भाषाटीका बनानेको बहुत परिश्रम व द्रव्य खर्च हुवा है  
इसलिये रजिष्टर किया है मूल्य १ रु० ६ आणे

रागरत्नाकर—यह ग्रंथ गानेवाले रसिकोंको अवश्य  
लेने योग्य है. इसमें सब रागरागिणी लावनी, छंद, टप्पा,  
ठुमरी, रेखता, दोहा, खेमटा आदिक परमोत्तम संग्रह है  
इसका कागद और अक्षर परमोत्तम है किंमत १॥ रु०

चर्याचन्द्रोदय—भाषा टीका सह ( अर्थात् स्वस्थर  
रक्षण ) ग्रहस्थीमात्रको लेने योग्य किं० ट० मासूल  
सह १॥ रु०

बृहन्निघंटुरत्नाकरका—सचित्र शारीर भाग किंमत  
टपाल मासूल सह ३ रुपये ६ आणे  
बृहन्निघंटुरत्नाकरके—द्वितीयवर्षाका पुस्तक इसमें क्षा-  
रपाक, अग्निकर्म, जलौका वचारण, शोणित वर्णन  
दोषधातु मलक्षय वृद्धि विज्ञान वर्णन, दोषवर्णनीय,  
ऋतुचर्या, दिनचर्या, रात्रिचर्या, ओंका वर्णन परमोत्त-  
म है अर्थात् ऐसी ऋतुचर्या दिनचर्या और रात्रिचर्या  
अद्यावधि कहीं नहीं छपी फिर विशिखानुप्रवेशनीया-  
ध्याय, दूतपरिक्षा, शकुनपरिक्षा, स्वप्नप्रकाशिका ( स्व-  
प्नका शुभाशुभफल ) नाडीदर्पण ( अर्थात् नाडीपरीक्षा )  
और मूत्रपरिक्षा आदि उत्तमोत्तम वर्णित है. गत वर्ष-  
से इसका कागद अक्षर छपाई सर्वोत्तम है. परंतु फिर  
भी सबको सुगमताके हेतु किंमत वही रखी है. अ-  
र्थात् डाक मासूल सह ३ रु० ६ आणे है. यह श्रावणके

महिनेतक तयार होगा इसमें रसोई बनानेकीभी विधि सविस्तर वर्णित है।

## तुलसीदासकृत रामायण.

रामचरणरतिजोचैहै, अथवापदनि  
बान ॥ भावसहितसोयहकथा, क  
रैश्रवणपुटपान ॥ १ ॥

उपर लिखे हुये बडे अक्षरमें तुलसीकृत “रामायण ” गंगोत्पत्ति, सुलोचनासती, महिरावण, नरान्तक, विन्दममि, आधि क्षेपक कथा ओं सहित शुद्ध करवायके द्वितीयावृत्ती छापके तयार है. किंमत ट०म० सहित ६ रुपये.

॥ दोहा ॥

तवऋषि नारदकंसयह, लियेहस्तत

लबीन ॥ गुणगावत गोविंदके, आवे  
परम प्रवीन ॥ १ ॥

ऊपर लिखे दोहेके अक्षरमें 'ब-  
जविलास', छपताहै अन्दाजसे  
२।३ महिनें में तयार होगा.

धर्मशास्त्रग्रंथाः

गूढकमलाकर—किं० १॥ रु० डा० म० २ आणे क्षौ-  
रनिर्णय—किं० १॥ आ० डा० म० अर्धा आना क्षौ-  
रनिर्णय—सटीक किं० ४ आ० डा० म० अर्धा आना  
शांतिमयूख किं० १ रु० डा० म० २ आणे श्राद्ध-  
मयूख—किं० १ रु० डा० म० २ आणे प्रपंचसार-  
विवेक—किं० १ रु० डा० म० २ आणे

### कर्मकांडग्रंथाः

स्वस्तिवाचन—किं० १॥ आ० डा० म० अर्धा आ-  
ना नारायणभट्टी किं० १ रु० डा० म० २ आणे  
संस्कारभास्कर—किं० ३ रु० डा० म० ६ आणे  
पूजापंकजभास्कर—किं० २ रु० डा० म० ४ आणे  
आचारार्क—किं० १२ आ० डा० म० २ आणे आ-  
चारादर्श—किं० १० आ० डा० म० २ आणे दश-  
कर्मपद्धति—किं० ८ आ० डा० म० १ आना वा-  
सिष्ठीहवनपद्धति—किं० ४ आ० डा० म० अर्धा आना.  
लंबोदरिहवनपद्धति—किं० ४ आणे डा० म० अर्धा  
आना श्राद्धविवेक—किं० १ रु० डा० म० २ आ-  
णे व्रतोद्यापनकौमुदी—किं० १२ आणे डा०  
म० २ आणे दानचंद्रिका—किं० १० आणे कुंड-  
विंशति—कुंडकेवीसग्रंथहै किं० १ रु० डा० म० २ आ० सर्वदे-  
वप्रतिष्ठासंग्रह किं० ४ रु० प्रतिष्ठामयूख किं० ६  
आणे शांतिसार—किं० १॥ रु० नवग्रह-  
विधानपद्धति—किं० ५ आणे संध्या—किं० २ आ-  
णे तर्पण—किं० २ आणे नित्यकर्मपद्धति—



किं. ३ आणे नारायणवली-किं ६ आणे  
 विवाहपद्धति-अत्युत्तम किं. ६ आणे कर्मकां-  
 डसमुच्चय-किं ४ आणे. कुण्डलीभाष्य-किं.  
 ४ आणे सर्वपूजा-किं. २ आणे शिवार्चनपद्-  
 तिबेदोक्त-किं. ४ आणे रुद्रविधानपद्धति:- किं  
 ७ आणे. लक्ष्मीपूजन- किं. २ आणे.

### काव्यग्रन्थाः

गीतगोविंद- सटीक राधाविनोदसह किं. १ रुपय  
 रघुवंशसटीक-किं. २ रुपये रघुवंशसटीक-वा  
 रीक किं. ३ रुपया कुमारसंभव-किं. २ रुपय  
 मनोदूतिकाव्य-किं. १॥ आना. किरातार्जुनीय  
 काव्य- किं. २॥ रुपये भोजप्रबंध किं. ८ आना.  
 भर्तृहरिशतकत्रय-संस्कृतटीका औरभाषाटीका किं.  
 १॥ रुपया भर्तृहरिवैराग्यतरुसंस्कृतटीका-किं.  
 ८ आणे गीतगोविंदमूल- किं. ४ आणे हि-  
 तोपदेश-किं. ८ आणे. रामकृष्णविलोमकाव्य-  
 किं. ५ आणे गंगालहरी सटीक-किं. ५ आणे  
 गंगालहरीमूल-किं. २ आणे ट० म० अर्धा आणा. दशकुमारचरित-  
 किं. २ रु० ट० म० ४ आणे भामिनीविलास-किं. ४ जा० ट०  
 म० अर्धा आना मेघदूतकाव्य-किं. ८ जा० ट० म० १ आणा  
 विश्वगुणादर्श-किं. ८ जा० ट० म० १ आणा पद्यावली-अनेकमहा  
 नुभावोके संग्रहीतछो. किं. ८ जा० ट० म० १ आणा अष्टांगहृदय  
 सटीक[वाग्भट्ट] किं. २१ रु० ट० म० १॥ रुपया चौरसिंहावलोकन-  
 ज्योतिषशास्त्रादि कर्मविपाक चिन्तिता नविन टाइपमे अतिउत्तम किं.  
 १॥ रु० ट० म० ४ आना बालबोधशास्त्रावली किं. २ आना ट० म०

अर्धा आना योगचिंतामणीभाषाटीका किं १॥ रु० ट० म० ४ आना  
चिकित्साक्रमकल्पवल्ली कि० ३ रु० ट० म० ८ आणा कूटमुद्गराख्य  
सटीक किं० ३ आना ट० म० अर्धा आना अमृतसागर कि० २॥  
रु० ट० म० ८ आना चिकित्साघातुसार भाषा ६ आना ट० म०  
१ आना रसरजसुंदर भाषाटीकासह ३ खंड मथुराका किं २॥  
रु. ट. म. ४ आना माधवनिदान भाषाटीका मथुराका किं १॥ रु. ट.  
म. ६ आना वैद्यकल्पद्रुम भाषाटीका किं ५ आ. ट. म. माफ सप्त-  
शती भट्टनागोजीकृतटीकासहित किं. १ रु. ट. म २ आना

### प्रकीर्ण ग्रंथाः

सप्तशती मोठे अक्षरकी टाईप खुली पंक्ति ६ किं १ रु. ट. म. २ आ-  
ना सप्तशती ७ पंक्तिवाली बडा अक्षर खुलापत्रा कि. ॥ रु. ट.  
म. २ आना सप्तशती ७ पंक्तिकी बंधेली किं. १। रु. ट. म. २  
आना सप्तशती ९ पंक्तिवाली मध्यम अक्षर टाईप खुला पत्रा कि.  
॥ रु. ट. म. १ आना सप्तशती ९ पंक्ति वाली बंधेली रेशमी किं.  
॥ रु. ट. म. २ आना सप्तशती छोटा गुटका खुला पत्रा टाईपका  
कि ॥ रु. ट. म. १ आना सप्तशती छोटा गुटका किं. ॥ रु. ट. म.  
१ आना स्तोत्ररत्नावली सांप्रदायी भाग १ ला किं. १। रु. ट. म.  
२ आना „ भाग २ रा किं. १। रु. ट. म. २ आना „ भाग ३ रा  
कि. १। रु. ट. म. २ आना प्रपन्नामृततरेशमीपुढेका किं. ४ रु. ट. म.  
८ आना पंचस्तव किं. ४ आना ट. म. अर्धा आना नारायणसार  
संग्रह किं. ॥ रु. ट. म. १ आना गुरुपीयूषलहरी किं. ६ आणे ट. म.  
१ आना वैकटेशसहस्रनाम सटीक कि. ॥ रु. ट. म. १ आना वैकटेश-  
सहस्रनाममोठा किं. ४ आना ट. म. १ आना राधाकृष्णभूषण किं.  
३ आणा ट. म. ॥ आणा दुर्जनकरिपचानन किं. ५ आना ट. म.  
१ आना स्तोत्रदशकम् किं. ४ आना ट. म. ॥ आना मुकुंदमाला  
किं १ आना ट. म. ॥ आणा आलमंदार कि १ आणा ट. म. ॥ आ-  
ना वृहत्स्तोत्ररत्नाकर स्तोत्रसंख्या १४२ किं. १ रु. ट. म. २ आना  
लक्ष्मीनारायणहृदय किं. ४ आना ट. म. ॥ आना लक्ष्मीस्तोत्र कि.  
३ आना ट. म. अर्धा आना आदित्यहृदयबडा किं ४ आना ट. म.  
अर्धा आना आदित्यहृदयछोटा किं. १ आना ट. म. अर्धा आना

पुरुषोत्तमसहस्रनाम किं. २ आना ट. म. अर्धा आना विष्णुसहस्रना-  
 नामावली किं. २ आना ट. म. अर्धा आना शिवसहस्रनामावली  
 किं. २ आना ट. म. अर्धा आना गणेशसहस्रनामावली किं. २ आ-  
 ना ट. म. अर्धा आना देवीसहस्रनामावली किं. २ आना ट. म. अ-  
 र्धा आना वैकुण्ठसहस्रनामावली किं. २ आना ट. म. अर्धा आना  
 सूर्यसहस्रनामावली किं. २ आना ट. म. अर्धा आना पंचायतननामा  
 वली किं. दो. आना ट. म. अर्धा आना विष्णुसहस्रनामबडेअक्षर  
 का खुला किं ४ आना ट. म. अर्धा आना विष्णुसहस्रनामसटीक किं.  
 ॥ रु. ट. म. एक आना विष्णुसहस्रनाम रंगकै कान्हेका किं. ४ आना  
 ट. म. अर्धा आना विष्णुसहस्रनामसाधा किं. ३ आना ट. म. ॥ आ.  
 विष्णुसहस्रनाम गुटका चित्रसहित किं. ५ आना ट. म. एक आना वि-  
 ष्णुसहस्रनाम मध्यम किं. दीड आना ट. म. अर्धा आना गोपालसह-  
 स्रनाम छोटा किं. दो आना ट. म. अर्धा आना गोपालसहस्रनाम-  
 साधा ३ आना ट. म. अर्धा आना गोपालसहस्रनाम बडाअक्षरखुला  
 किं ४ आना ट. म. १ आना गोपालसहस्रनामगुटकारेशमीबडा किं.  
 ५ आना ट. म. १ आना स्तोत्रसप्तकनारायणवर्मादि किं ३ आना  
 ट. म. अर्धा आना शिवसहस्रनाम किं. दो. आना ट. म. अर्धा आना  
 भवानीसहस्रनाम किं. ४ आना ट. म. १ आना तुलसि कवच किं.  
 दो. आना ट. म. अर्धा आना रामसहस्रनाम किं. दो. आना ट.  
 म. अर्धा आना महिम्न सटीक. किं २॥ आना ट. म. अर्धा आना  
 महिम्न छोटा किं. १॥ आना ट. म. अर्धा आना महिम्नहरिहरापर  
 टीकासह किं. ६ आना ट. म. १ आना वृत्तिहकवच किं. १ आ-  
 ना ट. म. अर्धा आना रामस्तवराज बडे अक्षरका किं. दो आना  
 ट. म. अर्धा आना रामस्तवराज छोटे अक्षरका किं. १॥ आना  
 ट. म. अर्धा आना

छोकीगीता किं. अर्धा आना ट. म. अर्धा आना स्तोत्रकल्पद्रुम भा-  
 पहिला किं. दो आणा ट. म. अर्धा आना स्तोत्र. ,, भाग दु  
 ११ किं. दो आना ट. म. अर्धा आना स्तोत्र. ,, भाग ३  
 १२ किं. दो आना ट. म. अर्धा आना स्तोत्र. ,, भाग ४  
 १३ किं. दो आना ट. म. अर्धा आना स्तोत्र. ,, भाग ५  
 १४ किं. दो आना ट. म. अर्धा आना

तुलसीकृत रामायण मध्यमअक्षरका छापके तया-  
 है कागद चिकणा और जाडा किंमत ३ रुपया तुल  
 सीकृत रामायण दुरा २॥ रुपया.

### पुराणग्रंथाः

श्रीमहाभारत सटीक छापना है किंमत ६० रुप.  
 डाक महसूल ५ रुपया वाल्मीकिरामायण सटीक  
 किंमत २० रुपया डाक महसूल १ रुपया १४ आणा  
 वाल्मीकिरामायण सटीक किंमत १२ रुपया डाक म-  
 हसूल १॥ रुपया आत्मपुराण संस्कृत सटीक किं-  
 मत १६ रुपया टपाल महसूल १॥ रुपया श्रीमद्भा-  
 गवत श्रीधरी टीप्पणीसह किंमत ९ रुपया डाक मह-  
 सूल १॥ रुपया श्रीभद्भागवत श्रीधरीअक्षरमोटा प-  
 रमोत्तम है किंमत १२ रुपया डाक महसूल ३॥ रुपया  
 भावनसचूर्णिक किंमत ८॥ रुपया डाक महसूल १ रु-  
 पया भागवतमूल किंमत ४॥ रुपया डाक महसूल  
 ॥ रुपया भागवत गुटका मूल किंमत ३॥ रुपया डा-  
 क महसूल ॥ रुपया भागवतविजयध्वजी टीकासह  
 किंमत १६ रुपया डाक महसूल २ रुपया भागवत  
 चूर्णिका किंमत ४ रुपया डाक महसूल ॥ रुपया

कटाहे मृन्मये पात्रे किंवा पक्ककमूलके ॥  
 ताघ्रादिजेऽथवा पात्रे किंवा पाषाणसंभवे ॥ ४९ ॥  
 आकण्ठमग्नौ वासेत ग्रहरं प्रातरेव वै ॥  
 रोमांतेष्वनुकूपेषु स्थित्वा मात्राशतत्रयम् ॥ ५० ॥  
 ततः प्रविशति स्नेहश्चतुर्भिर्गच्छति त्वचम् ॥  
 पंचभिश्च भजेद्रक्तं पद्भिर्मांसं प्रपद्यते ॥ ५१ ॥  
 मेदःस्थानं सप्तशतैरष्टभिश्चास्थिषु व्रजेत् ॥  
 नवभिर्यातिमज्जानं ततो मात्रां न कारयेत् ॥ ५२ ॥  
 ततस्तु हरते रोगान्वातपित्तकफोद्भवान् ॥  
 स्रोतसां मार्दवकरः कफवातविनाशनः ॥ ५३ ॥  
 धातूनां पुष्टिजननो वलवर्णकरः परः ॥  
 वातरोगानशोषांश्च जयेदेव विशेषतः ॥ ५४ ॥

॥ इति वैद्यालंकारान् ॥ वस्त्यवगाहनविधिः ॥

रसाद्यैः पूरणं कर्णं भोजनात्प्राक्प्रशस्यते ॥  
 तैलाद्यैः पूरणं कर्णं भास्करेस्तमुपागते ॥ ५५ ॥  
 स्वेदयेत्कर्णदेशं तु परिवर्तनशायिनः ॥  
 मूत्रैः स्नेहै रसैः कोष्णै पूरयेच्च ततो भिषक् ॥ ५६ ॥  
 स्वस्थस्य पूरणे स्नेहैर्मात्राशतमयेदने ॥  
 शतत्रयं श्रोत्रगदे शिरोरोगे तथैव च ॥ ५७ ॥  
 कर्णं प्रपूरयेत्सम्यक्स्नेहाद्यैर्मात्रयोक्तया ॥  
 नोच्चैःश्रुतिर्न वाधिर्य स्यान्नित्यं कर्णपूरणात् ॥ ५८ ॥

॥ इति योगपारिजातान् कर्णपूरणमात्राविधिः ॥

निद्राकरोदेहमुखश्चक्षुष्यः पादरोगहा ॥  
 पादत्वङ्मृदुकर्ता च पादाभ्यंगः प्रशस्यते ॥ ५९ ॥

मृदौसमेमुपर्यैके गतः स्वस्थतमो नरः ॥  
 उत्तानशायी संभूय तैलाभ्यंगं समाचरेत् ॥ ५९ ॥  
 तपो विद्यां धनं चक्षुरायुः कीर्तिं प्रजां हरेत् ॥  
 श्रोत्राक्षिवलदं पित्तश्रमतृड्दाहमेहनुत् ॥ ६० ॥  
 वाते पित्ते कफे रक्ते सन्निपाते तथैव च ॥  
 मदमूर्च्छाप्रलापे च तृष्णाजीर्णज्वरेषु च ॥ ६१ ॥  
 संतप्ते सतताजीर्णे मार्गश्रान्ते विशेषतः ॥  
 वाले वृद्धे च तरुणे तैलाभ्यंगः सदोत्तमः ॥ ६२ ॥  
 कृष्णात्रेयात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां संक्षेपतो वस्तिविधिर्ना-  
 माष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

नवमस्तरंगः ।

॥ अथ नस्यम् ॥

नस्यं तत्कथ्यते धीरैर्नासाग्राह्यं यदौषधम् ॥  
 नावनं सूक्ष्मकर्मेति नस्यनामद्वयं मतम् ॥ १ ॥  
 तस्य भेदद्वयं प्रोक्तं रेचनं स्नेहनं तथा ।  
 रेचनं कर्षणं प्रोक्तं स्नेहनं वृंहणं मतम् ॥ २ ॥  
 कफपित्तानिलध्वंसी पूर्वमध्यापराह्लके ॥  
 दिनस्य गृह्यते नस्यं रात्रावप्युत्कटे गदे ॥ ३ ॥  
 नस्यं त्यजेद्भोजनादौ दुर्दिने चापतर्पिते ॥  
 तथा नवप्रतिश्यायी गर्भिणी गरदूषितः ॥ ४ ॥  
 अजीर्णी दत्तवस्तिश्च पीतस्नेहोदकासवः ॥  
 क्रुद्धः शोकाभिभूतश्च तृपात्तौ वृद्धवालकौ ॥ ५ ॥

वेगावरोधी स्नातश्च स्नातुकामश्च वर्जयेत् ॥  
 अष्टवर्षस्य बालस्य नस्यकर्म समाचरेत् ॥ ६ ॥  
 अशीतिवर्षादूर्ध्वं च नावनं नैव दीयते ॥  
 अथ वैरेचनं नस्यं ग्राह्यं तैलैः सुतीक्ष्णकैः ॥ ७ ॥  
 तीक्ष्णभेषजसिद्धैर्वा स्नेहैः काथै रसेस्तथा ॥  
 नासिकारंध्रयोरष्टौ पट्टचत्वारश्च विद्वः ॥ ८ ॥  
 प्रत्येकं रेचनं योज्यं मुख्यमध्यांत्यमात्रया ॥  
 नस्यकर्मणि दातव्यं शाणैकं तीक्ष्णमौषधम् ॥ ९ ॥  
 हिंगु स्याद्यवमात्रं तु मापैकं सैधवं मतम् ॥  
 क्षीरं चैवाष्टशाणं स्यात्पानीयं च त्रिकार्षिकम् ॥ १० ॥  
 कार्षिकं मधुरं द्रव्यं नस्यकर्मणि योजयेत् ॥  
 पङ्गुला द्विवक्त्री या नाली चूर्णं तथा धमेत् ॥  
 तीक्ष्णं कोलमितं वक्रवातैः प्रथमनं हितम् ॥ ११ ॥

॥ वैरेचनं यथा ॥

नस्यं स्याद्बुडुशुंठीभ्यां पिप्पल्या सैधवेन वा ॥  
 जलपिष्टेन तेनाक्षिकर्णनासाशिरोगदाः ॥ १२ ॥  
 मन्याहनुगलोद्भूता नश्यन्ति भुजपृष्ठजाः ॥  
 मधूकसारकृष्णाभ्यां वचामरिचसैधवैः ॥ १३ ॥  
 नस्यं कोष्णजलैः पिष्टं दद्यात्संज्ञाप्रबोधनम् ॥  
 अपस्मारे तथोन्मादे सन्निपातेपतंत्रके ॥ १४ ॥  
 सैधवं श्वेतमरिचं सर्पपाः कुष्ठमेव च ॥  
 वस्तमूत्रेण पिष्टानि नस्यं तंद्रानिवारणम् ॥ १५ ॥  
 रोहीतमत्स्यपित्तेन भावितं मरिचं वचा ॥  
 कंकोलं चेति चूर्णं हि देयं प्रथमनं बुधैः ॥ १६ ॥

॥ अथ वृंहणप्रकारः ॥

मर्शश्च प्रतिमर्शश्च द्वौ भेदौ स्नेहने मतौ ॥

मर्शस्य तर्पणी मात्रा मुख्याशाणैः स्मृताष्टभिः ॥ १७ ॥

मध्यमा च चतुःशाणैर्हीना शाणमिता मता ॥

एकैकस्मिन्स्तु मात्रेयं देया नासापुटे बुधैः ॥ १८ ॥

मर्शस्य द्वित्रिवेलं च दृष्ट्वा दोषबलावलम् ॥

एकांतरे द्यंतरे वा नस्यं दद्याद्विचक्षणः ॥ १९ ॥

त्र्यहं पंचाहमथवा सप्ताहं च सूर्यात्रितः ॥

मर्शः शिरोविरेके च व्यापदो विविधा स्मृताः ॥ २० ॥

दोषोत्केशाक्षयाच्चापि विज्ञेयास्ता यथाक्रमात् ॥

शिरोनासाक्षिरोगेषु सूर्यावर्तार्धभेदके ॥ २१ ॥

दंतारोगे बले हीने मन्यावाहंसजे गदे ॥

मुखशोषे कर्णनादे वातपित्तगदे तथा ॥ २२ ॥

अकालपलिते चैव केशश्मश्रुप्रपातने ॥

युज्यते वृंहणं नस्यं स्नेहैर्वा मधुरद्रवैः ॥ २३ ॥

॥ यथा ॥

सशर्करं पयः पिष्टं भृष्टमाज्येन कुंकुमम् ॥

नस्यप्रयोगतो हन्याद्वातरंक्तभवारुजः ॥ २४ ॥

ध्रुवांस्वाक्षिशिरःकर्णसूर्यावर्तार्धभेदकाः ॥

नस्यं स्यात्तिलतैलेन तथा नारायणेन वा ॥ २५ ॥

मापादिना वा सर्पिर्भिस्तत्तद्भेषजसाधितैः ॥

तैलं कफे स्याद्वाते च केवले पवने वसा ॥ २६ ॥

दद्यान्नस्यं सदा पित्ते सर्पिर्मज्जानमेव च ॥

मापांत्मगुप्तास्त्राभिर्वलारुचकरोहिषैः ॥ २७ ॥



कृतोश्वगंधयाक्वाथोर्हिगुसैधवसंयुतः ॥

कोष्णो नस्यप्रयोगेण पक्षाघातं संकंपनम् ॥ २८ ॥

जयेद्वर्धितवातं च मन्यास्तंभापवाहुके ॥

प्रतिमर्शस्य मात्रा तु द्वित्रिविंदुमिता मता ॥ २९ ॥

प्रत्येकशो नासिकयोः स्नेहेनेति विनिश्चितम् ॥

स्नेहे ग्रंथिद्वयं यावन्निमग्नं चोद्धृतं ततः ॥ ३० ॥

तज्जन्याश्च स्ववेत्तस्यां यः स विंदुरुदाहृतः ॥

एवंविधैऽरष्टसंख्यैर्विंदुभिः शाण उच्यते ॥ ३१ ॥

सं देयो मर्शनस्ये तु प्रतिमर्शो द्विविंदुकः ॥

समया प्रतिमर्शस्य वृधैः प्रोक्ताश्चतुर्दश ॥ ३२ ॥

प्रभाते दंतकाष्ठांते गृहान्निर्गमने तथा ॥

व्यायामाऽध्वव्यवापांते विण्मूत्रांतेऽजने कृते ॥ ३३ ॥

कवलांते भोजनांते दिवा स्वप्नोत्थिते तथा ॥

वमनांते तथा सायं प्रतिमर्शः प्रयुज्यते ॥ ३४ ॥

प्रतिमर्शेन शाम्भ्यांते रोगाश्चैवोर्ध्वजत्रुजाः ॥

विंभीतनिवकंभोराशिंवाशैल्लुश्चकाकिनी ॥ ३५ ॥

एकैकतैलनस्येन पलितं नश्यति ध्रुवम् ॥

वमनं रेचनं नस्यं निरूहश्चानुवासनम् ॥

एतानि पंचकर्माणि कथितानि मुनीश्वरैः ॥ ३६ ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां नस्यविधिर्नाम नवमस्तरंगः ॥

इति पंचकर्माणि समाप्तानि ॥

दशमस्तरंगः ।

अथ धूमपानविधिः ॥

धूमस्तु षड्विधः प्रोक्तो बृहणं शमनं तथा ॥  
 रेचनः कासहा चैव वामनो व्रणशोधनः ॥ १ ॥  
 शमनस्य तु पर्यायौ मध्यः प्रायोगिकस्तथा ॥  
 बृहणस्य तु पर्यायौ स्नेहनो मृदुरेव च ॥ २ ॥  
 रेचनस्य च पर्यायौ शोधनस्तीक्ष्ण एव च ॥  
 अधूमार्हाश्च खल्वेते श्रान्तो भीरुश्च दुःखितः ॥ ३ ॥  
 दत्तवस्तिर्विरक्तश्च रात्रौ जागरितस्तथा ॥  
 पिपासितश्च दाहार्तस्तालुशोपी तथोदरी ॥ ४ ॥  
 शिरोभितापी तिमिरी छर्द्याध्मानप्रपीडितः ॥  
 क्षतोरस्कः प्रमेहार्तः पांडुरोगी च गर्भिणी ॥ ५ ॥  
 रूक्षः क्षीणोभ्यवृद्धतक्षिरक्षौद्रघृतांसवः ॥  
 भुक्तान्नदधिमत्स्यश्च वालो वृद्धः कृशस्तथा ॥ ६ ॥  
 अकाले चातिपीतश्च धूमः कुर्यादुपद्रवान् ॥  
 धूमो द्वादशमाहर्पादीयतेऽशीतितो न च ॥ ७ ॥  
 कासश्वासप्रतिश्यायमन्याहनुशिरोरुजः ॥  
 वातश्लेष्मविकारांश्च हन्याद्धूमस्तु योजितः ॥ ८ ॥  
 धूमप्रयोगात्पुरुषः प्रसन्नैर्द्रियवाङ्मनाः ॥  
 दृढकेशद्विजश्मश्रुः सुगंधिवदनो भवेत् ॥ ९ ॥  
 वदनेन विवेद्धूमं वदनेनैव संत्यज्येत् ॥  
 नासिकाभ्यां ततः पीत्वा मुखेनैव वमेत्सुधीः ॥ १० ॥  
 शरावसंपुटे क्षिप्वा कल्कमंगारदीपितम् ॥  
 छिद्रे नेत्रं प्रवेश्याथ व्रणं तेनैव धूपयेत् ॥ ११ ॥  
 एलादिकल्कं शमने स्निग्धं सर्जरसं मृदौ ॥

रेचने तीक्ष्णकल्कं च कासघ्ने क्षुद्रिकौपेणम् ॥ १२ ॥

वामने स्नायुचर्मद्यं दद्याद्भूमस्य पानकम् ॥

व्रणे निववचाद्यं च धूमदानं प्रशस्यते ॥ १३ ॥

अन्येऽपि धूमा गेहेषु कर्तव्या रोगशांतये ॥

मयूरपिच्छं निवस्य पत्राणि बृहतीफलम् ॥ १४ ॥

मरिचं हिंगु मांसी च बीजं कार्पाससंभवम् ॥

छांगरोमाणि निर्मोक्तं विष्टा वैडालकी तथा ॥ १५ ॥

गजदंतस्य चूर्णं हि किञ्चित् घृतविमिश्रितम् ॥

गृहेषु धूपनं दत्तं सर्वान्वालयहाञ्जयेत् ॥ १६ ॥

पिशाचान्नाक्षसान्हत्वा सर्वज्वरहरं भवेत् ॥

इत्यपराजितो धूमः ॥

नेत्राणिधातुजान्याहुर्नलवंशभवान्यपि ॥

चतुर्विंशत्यंगुलानि खंडानि त्रीणि युक्तितः ॥ १७ ॥

योजितानि त्रिखंडेयं नलिका नेत्रसंज्ञका ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां धूमपानविधिर्नामदशमस्तरंगः ॥

एकादशस्तरंगः ।

अथ रक्तस्रुतिः ॥

शरत्काले स्वर्भावेन कुर्याद्रक्तस्रुतिं नरः ॥

त्वग्दोषग्रंथिशोफाद्या न स्यु रक्तस्रुतेर्यतः ॥ १ ॥

विस्त्रता द्रवता रागश्चलनं विलयस्तथा ॥

१ कंटकारी । २ मरिचं वा पिपिली । ३ गुरद्वृंगकृकशास्थिशुक्रमस्य-  
बद्धूरकृमिप्रभृतिभिः समनीयैश्च समनीयेतिष्ठभुतः । ४ चक्रीकेरोम । ५ सर्प-  
कचुकं । ६ विलाईल । ७ इस्तिद्वयस्य । ८ साधारण्येन । ९ कुटुवानरक्ता-  
दयः । १० रक्तभूम्यादीनांगुणानांगुणाभ्यसन्नितानाह । विस्त्रतेति । विस्त्रताभ्रम-  
गंधनाभूमिगुणः द्रवताजलगुणः रागारक्तनाग्रिगुणः चलनं सयुगुणः विलयोला-  
नताक्ताद्यगुणः सञ्चित्रताया एनेगुणाभूम्यादिपञ्चभूतानांक्रमनःस्मृताः ।

भूम्यादिपंच भूतानामेते रक्ते गुणाः स्मृताः ॥ २ ॥

इंद्रगोपप्रभं ज्ञेयं प्रकृतिस्थमसंहतम् ॥

अन्यत्सर्वमशुद्धं हि विज्ञेयं रुधिरं नृणाम् ॥ ३ ॥

शोथे दाहेंगपाके च रक्तवर्णोऽसृजः स्रुतौ ॥

वातरक्ते तथा कुष्ठे सपीडे दुर्जये ऽनिले ॥ ४ ॥

पाणिरोगे श्लीपदे च विषदुष्टे च शोणिते ॥

ग्रंथ्यर्जुदापचीक्षुद्रोरगरक्ताधिमंथिषु ॥ ५ ॥

विदारीस्तनरोगेषु वपुषश्चापि गौरवे ॥

रक्ताभिष्यंदतंद्रायां पूतिघ्राणस्य हेतवे ॥ ६ ॥

यकृत्क्षीहविसर्पेषु विद्रवौ पिंडकोद्गमे ॥

कर्णोष्ठघ्राणवक्त्राणां पाके दाहे शिरोरुजे ॥ ७ ॥

उपदंशे रक्तपित्ते रक्तस्रावः प्रशस्यते ॥

एषु रोगेषु शृंगैर्वा जलौकालांबुकैरपि ॥ ८ ॥

अथ वापि शिरावेधै रक्तमोक्षः प्रशस्यते ॥

पंचकर्मविशुद्धस्य पीतस्नेहस्य चार्शसाम् ॥ ९ ॥

सर्वांगशोथयुक्तानामुदरश्वासकासिनाम् ॥

छर्द्यतीसारजुघानां पांडूनां स्विन्नदेहिनाम् ॥ १० ॥

ऊनपोडशवर्षस्य गतसप्ततिकस्य च ॥

आघातस्रुतरक्तस्यशिरामोक्षो न शस्यते ॥ ११ ॥

गृह्णाति शोणितं शृंगं दशांगुलमितं वलात् ॥

जलौकाहस्तमात्रं तु तुवं च द्वादशांगुलम् ॥ १२ ॥

पदमंगुलमात्रं तु शिरा सर्वांगशोथनी ॥

रक्ते दुष्टे च शिष्टेषु व्याधिर्नैव प्रकुप्यति ॥ १३ ॥

अतः स्वास्थ्यं सावशेषं रक्ते नाऽतिक्रमो मतः ॥  
 आंध्यमाक्षेपकं तृष्णां तिमिरं च क्षिरोरुजम् ॥ १३ ॥  
 पक्षाघाते श्वासकासौ हिकां दाहं च पांडुताम् ॥  
 कुरुतेऽतिस्त्रुतं रक्तं मरणं वा करोति हि ॥ १४ ॥  
 देहस्योत्पत्तिरसृजा देहस्तेनैव धार्यते ॥  
 विना तेन ब्रजेज्जीवो रक्षेद्रक्तमतो बुधः ॥ १५ ॥  
 शीतोपचारैः कुपिते स्त्रुतरक्तस्य मारुते ॥  
 कोष्णेन सर्पिषा शोथं श्वयथुं परिपेचयेत् ॥ १६ ॥  
 क्षीणैर्यैर्णशशोरेभ्रहरिणच्छागमांसजः ॥  
 रसः समुचितः पाने क्षीरं वा पट्टिका हिता ॥ १७ ॥  
 पीडाशांतिर्लघुत्वं च व्याधेरुद्रेकसंक्षयम् ॥  
 मनः स्वास्थ्यं भवेच्चिह्नं सम्यग्विस्त्रावितेऽसृजि ॥ १८ ॥  
 व्यायाममैथुनक्रोधशीतस्नानप्रवातकान् ॥  
 एकाशनं दिवा निद्रां क्षाराम्लकटुभोजनम् ॥ १९ ॥  
 शोकं वा पियदाजीर्णं त्यजेद्यावद्बलो भवेत् ॥  
 फेनि रूक्षं भवेत्तैमूचि निस्तोदि पवनादसृक् ॥ २० ॥  
 विसृतापीतमाशयानं कोष्णं पित्तेन जायते ॥  
 मंदगं बहुलं स्निग्धं मांसपेशीनिभं कफात् ॥ २१ ॥  
 द्विदोषदुष्टं संसृष्टं त्रिदुष्टं पृथिगाधिकम् ॥  
 सर्वलक्षणसंपन्नं कांजिकाभं च जायते ॥ २२ ॥  
 विषदुष्टं भवेच्छ्यावं नासिकोन्मार्गं तथा ॥

१ अतःसावशेषंसाध्यमित्यर्थः । २ वायु । ३ अतिनिस्त्रुतं । ४ स-  
 धिरेण । ५ यमलोकगतेन । ६ पुनः । ७ बहुगतरक्तस्य ।  
 ८ क्षिण । ९ मेढा । १० दुग्धं । ११ एकभोजन । १२ म-  
 र्दकसमानव्ययापाकी । १३ फलनाय । १४ पथिरूपं । १५ हि  
 द्विदोषलक्षणयुक्तंभवति ।

दुर्गधिकंजिसंकाशं सर्वकुष्ठकरं भवेत् ॥ २३ ॥

॥ इति शार्ङ्गधरात् ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां रुधिरमोक्षविधिर्नामैका-  
दशस्तरंगः ॥ ११ ॥

॥ द्वादशस्तरंगः ॥

॥ अथ नाडीपरीक्षा ॥

सद्यः स्नातस्य भुक्तस्य तथा स्नेहावगाहिनः ॥

क्षुत्तृपार्तस्य सुप्तस्य सम्यङ् नाडी न बुध्यते ॥ १ ॥

अंगुष्ठमूलमार्गे या धमनी जीवसाक्षिणी ॥

तच्चेष्टया सुखं दुःखं ज्ञेयं कायस्य पंडितैः ॥ २ ॥

स्त्रीणां भिषग्बामहस्ते पादे वामे च यत्नतः ॥

शास्त्रेण संप्रदायेन तथा स्वानुभवेन वै ॥ ३ ॥

एकांगुलं परित्यज्य हस्तादंगुष्ठमूलतः ॥

परीक्षेद्रत्नवच्चासावभ्यासादेव जायते ॥ ४ ॥

अग्रे वातवहा नाडी मध्ये वहति पित्तला ॥

अंते श्लेष्मविकारेण नाडी ज्ञेया सदा बुधैः ॥ ५ ॥

सर्पजलौकादिगतिं वदन्ति विबुधाः प्रभञ्जने नाडीम् ॥

पित्तेन कौकलावकमंडूकादेस्तथा चंपलाम् ॥ ६ ॥

राजहंसमयूराणां पौरावतकंपोतयोः ॥

कुक्कुटस्य गतिं धत्ते धमनी कफसंगिनी ॥ ७ ॥

मुहुः सर्पगतिं नाडी मुहुर्भैरवगतिं तथा ॥

वातपित्तसमुद्भूतां तां वदन्ति विचक्षणाः ॥ ८ ॥

सर्पहंसगतिं तद्वद्वातश्लेष्मगतिं वदेत् ॥

१ विस्त्रा । २ कांजिकसनिभम् । ३ पूर्वजैः यत्कथितेन । ४ वात ।  
५ कौआ । ६ लघा । ७ नाडी । ८ वतक । ९ खवूत्तर । १० पडु-  
कीआ । ११ मुरगा । १२ नाडी । १३ मडूकगतिं । १४ वर्ताइत्यपिपाठः ।

हरिहंसगतिं धत्ते पित्तश्लेष्मान्विता धरा ॥ ९ ॥

काष्ठकुट्टो यथा काष्ठं कुट्टते चातिवेगतः ॥

स्थित्वास्थित्वा तथा नाडी सन्निपाते भवेद्भुवम् ॥ १० ॥

॥ इति वृद्धहारीतात् ॥

स्यंदते चैकमानेन त्रिंशद्वारं यदा धरा ॥

स्वस्थानेन तदा नूनं रोगी जिवति नान्यथा ॥

स्थित्वास्थित्वा वहति या सा ज्ञेया प्राणघातिनी ॥ ११ ॥

जिह्वंजिह्वं कुटिलकुटिलं व्याकुलंव्याकुलं वा

स्थित्वास्थित्वा वहति धमनी याति नांशं च सूक्ष्मा ॥

नित्यं कंठे स्फुरति पुनरप्यंगुलीः संस्पृशेद्वा

भावैरेवं बहुविधतरैः सन्निपातादंसाध्या ॥ १२ ॥

पूर्वं पित्तगतिं प्रभंजनगतिं श्लेष्माणमाविभ्रती

स्वस्थानाद्भ्रमणं मुहुर्विदधती चक्राधिरूढेव या ॥

भीमत्वं दधती कलापिगतिका सूक्ष्मत्वमातन्वती

नो साध्यां धमनीं वदन्ति मुनयो नाडीगतिज्ञानिनः ॥ १३ ॥

गंभीरा या भवेन्नाडी सा भवेन्मांसैवाहिनी ॥

ज्वरवेगेन धमनी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥ १४ ॥

कामात्क्रोधाद्वेगवहो क्षीणा चिंताभयप्लुता ॥

मंदाग्नेः क्षीणयातोश्च नाडी मंदतरा भवेत् ॥ १५ ॥

असृक्पूर्णा भवेत्कोष्णा गुर्वी सौमा गरीयसी ॥

लघ्वी वहति दीप्ताग्नेस्तथा वेगवती मत्ता ॥ १६ ॥

१ मट्टक । २ नाडी । ३ काष्ठकार्यकुट्ट । ४ कुट्टन कुर्याति । ५ ईष-  
त्तीर्यम्भरति रोप्सायादिरयन आर्द्ररोप्सा । ६ वहतिर्यग्भरति । ७ अद-  
र्शन । ८ पुनः । ९ भ्रमनीति शेषः । १० ज्ञेयेति शेषः । ११ यावेव-  
गति. पित्तनाशगतिः । कलं मंदगतिः । नाडी भवति एतद्विपर्ययम् । १२  
मोरगति । १३ मांसगता । १४ नाडी । १५ भवति । १६ आम संहितानाडी ।

चपला क्षुधितस्यापि तृप्तस्य बहति स्थिरा ॥  
 शीघ्रा नाडी मलापाते दिनार्द्धेऽग्निसमो ज्वरः ॥ १७ ॥  
 दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीये म्रियते भृशम् ॥  
 मरणे डमरुकस्येव भवेदेकदिनेन च ॥ १८ ॥  
 इति श्रीयोगतरंगे नाडीपरीक्षानामद्वादशस्तरंगः १२

त्रयोदशस्तरंगः

अथ वस्त्रपरीक्षा ॥

ज्वरव्याप्तशरीरस्य ऊष्मा भवति दारुणः ॥  
 स ऊष्मा वहिराप्नोति वस्त्रे तिष्ठति निश्चितम् ॥ १ ॥  
 वातपित्तकफानां च द्वित्रिदोषस्य लक्षणम् ॥  
 परीक्षेज्ज्वरिणो वस्त्रं वैद्यो वै शुद्धवंशजः ॥ २ ॥  
 वाते वस्त्रं सौरभं घ्राणतः स्यात्  
 पौष्प्यं पित्ते मत्स्यतुल्यं विगंधम् ॥  
 पाकस्थोणं श्लेष्मणः संप्रकोपात्  
 द्वैर्द्वैदोत्युल्वणैरुयैकता च ॥ ३ ॥  
 यदा वस्त्रे भवेद्रंधः सटिता जालकर्मः ॥  
 तदा दीर्घो भवेद्रोगो म्रियते शवगंधकः ॥ ४ ॥

अथ जिह्वापरीक्षा ॥

पीता जिह्वा खरस्पर्शा स्फुटिता मारुताधिके ॥  
 रक्ता श्यामा भवेत्पित्ते कफे शुभ्रातिपिच्छला ॥ ५ ॥  
 कृष्णा सकंटका शुष्का सन्निपाताधिके तु सा ॥  
 मिश्रिते मिश्रिता ज्ञेयाऽरिष्टे लक्षणवर्जिता ॥ ६ ॥  
 इति यो जिह्वापरीक्षानाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

१ जानीयाद्बध्ना वैद्यो निश्चयाच्छुद्धवंशजः । २ पुष्पसमान ।

३ पाकंघ्राणपाठः । ४ मृत्युसूचके । ५ जिह्वा ज्ञेया ।



अंशिरो मासमरणं विनाजंघे दिनाष्टकम् ॥

अष्टभिः कंधरानाशो छायालोपेन तत्क्षणात् ॥ ११ ॥

इति छायापुरुषविचारः ॥

अथमूत्रपरीक्षा ॥

परीक्षा विधिवत्कार्या रोगिमूत्रस्य तत्त्वतः ॥

तृणेन दत्त्वा तैलस्य विंदुं तत्रातिलार्धवात् ॥ १२ ॥

विकाशि चेतैलमथागुमूत्रे

साध्यः स रोगी न विकाशि चेत्तत् ॥

स्यात्कष्टसाध्यस्तलगे त्वसाध्यो

नागार्जुनेनैव कृता परीक्षा ॥ १३ ॥

नीलं च रूक्षं कुपिते च वायौ

पीतारुणं तैलसमं च पित्ते ॥

स्निग्धं कफात्पल्लवारितुल्यं

स्निग्धोष्णरक्तं रुधिरप्रकोपात् ॥ १४ ॥

मातुलुंगरसाभासं सौवीरोभं जलोपमम् ॥

प्रपांकरहितानां च मूत्रं चंदनसन्निभम् ॥ १५ ॥

अजीर्णप्रभवे रोगे मूत्रं तंदुलैतोयवत् ॥

नवज्वरे धूम्रवर्णं बहुमूत्रं प्रजायते ॥ १६ ॥

पित्तानिले धूम्रजलाभमुष्णं श्वेतं मरुच्छेष्मणिवुहुदाभं

तच्छेष्मपित्तेकलुपंसरक्तंजीर्णज्वरेमृक्सदृशं च पीतम् ॥

स्यात्सन्निपातादपि मिश्रवर्णं तूर्णविधिज्ञेन विचारणीयं

पूर्वस्यां वर्धते विदुर्यदा शीघ्रं सुखी भवेत् ॥

दक्षिणस्यां ज्वरो ज्ञेयस्तथारोग्यं क्रमान्भवेत् ॥ १८ ॥

१ शिरसः अदर्शन । २ मलके । ३ मृत्युर्भवेत् । ४ अतिहस्तकोशल्यत् ।

५ फेलाय । ६ आपार्येण । ७ मतिनगलतुल्यम् । ८ मिजोरो । ९ कां-

निराभ । १० मद्यप्रितायकानां दुःसां । ११ तदुलधारनजलसदृश । १२ शो-

ष । १३ वैधेन । १४ पूर्वदिशि । १५ मूत्रस्यतिशयः । १६ दक्षिणदिशि

उत्तरस्यां यदा विंदोः प्रसरः संप्रजायते ॥  
 आरोग्यता तदा नूनं पुरुषस्य न संशयः ॥ १९ ॥  
 वारुण्यां प्रसरद्विंदुः सुखारोग्यं तदा दिशेत् ॥  
 ईशान्यां वर्धते विंदुर्ध्रुवं मासेन नश्यति ॥ २० ॥  
 आग्नेय्यां तु तथा ज्ञेयं नैर्ऋत्यां प्रसरेद्यदा ॥  
 छिद्रितं च भवेत्पश्चाद्भुवं मरणमेव च ॥ २१ ॥  
 वायव्यां प्रसरोद्विंदुः सुधापोपि विनश्यति ॥  
 विकाशितं मत्स्यकूर्मसौरभाकारसंयुतम् ॥ २२ ॥  
 करंडमंडलं वापि नरं मूर्धविवर्जितम् ॥  
 गात्रखंडं च शस्त्रं च खड्गं मुशलपाट्टिशम् ॥ २३ ॥  
 शरं च लकुटं चैव तथैव त्रिचतुःपथम् ॥  
 विंदुरूपं नरो दृष्ट्वा न कुर्वीत क्रियां कचित् ॥ २४ ॥  
 हंसकैरंडताडगं कमलं गजचामरम् ॥  
 छत्रं च तोरणं हर्म्यं संपूर्णं दृश्यते यदि ॥ २५ ॥  
 आरोग्यता ध्रुवं ज्ञेया तदा कुर्यात्प्रतिक्रियाम् ॥  
 तैलविंदुर्यदा मूत्रे चालनीसदृशो भवेत् ॥ २६ ॥  
 कुलदोषो ध्रुवं ज्ञेयः प्रेतदोषसमुद्भवः ॥  
 नराकारं प्रजायेत किंवा स्यान्मस्तकद्वयम् ॥ २७ ॥  
 भूतदोषं विजानीयान्द्रूतविद्यां तदाचरेत् ॥  
 इति श्रीयोगतरंगिण्यां मूत्रपरीक्षानामचतुर्दशस्तरंगः १४

१ उत्तरदिशि । २ पश्चिमदिशि । ३ पूर्वोत्तरदिशोर्मध्ये । ४ पूर्व-  
 क्षिणमध्ये । ५ मासेनैव मृत्युर्भवति । ६ दक्षिणपश्चिमयोर्मध्ये ।  
 ७ पश्चिमोत्तरमध्येदेशे । ८ अमृतपानकम् । ९ बलीयर्दाकार । १० जौ-  
 लमण्डल । ११ त्रिचतुर्नागगामिन । १२ चिकित्सा । १३ जलगुरग ।  
 १४ तडागतुल्य । १५ हस्तो । १६ मदिरातुल्यम् । १७ नष्टद्वितीय ।  
 १८ पश्यतमः ।

पंचदशस्तरंगः

॥ अथदूतविचारः ॥

सुज्ञातः शुद्धवेपो द्रविणयुतकरः क्षत्रियो ब्राह्मणो वा  
तांवूलाढ्यः सुशीलः शुभवचनवदः स्यात्प्रशस्तोत्रदूतः ॥  
शस्ता योपिन्न दैत्ये न च जनयुगलं नांगहीनो न रोगी  
शोकात्तो वा रुदन्वा नतहतपतितभ्रष्टशब्दान्बुवाणः १॥  
आगत्यविश्रमेद्योर्वलिमथनदिशं पश्चिमामुत्तरां वा  
शंभोकाष्ठां संशस्तोपरदिशि न तुपांगारभस्मादिसंस्थः ॥  
रक्तसृगंधवत्स्वास्तृणलंगुडदलछेदिनं पंकतैला-  
भ्यक्ता वक्षोजनासालकानिहितकरा ये च विक्षिप्तकेशाः २

रसमंजरीतः ॥

दूतो रक्तकपायकृष्णवसनो दंडी जटी मुंडित-  
स्तैलाभ्यक्तवपुर्भयंकरवचा दीनोश्रुपूर्णक्षणः ॥  
भस्मांगारकपालपांसुमुशली सूर्यस्तगे व्याकुलो  
यः गूण्यस्वरसंस्थितो गंदवतो दूतस्तु कालानलः ॥ ३॥

इति दूतलक्षणम् ॥

अथ मलपरीक्षा ॥ रुद्रतंद्रात् ॥

त्रुटितं फेनिलं रूक्षं धूमलं वाततो मलम् ॥  
हरिर्पीतं च दुर्गंधि पित्तादुष्णश्लथं भवेत् ॥ ४ ॥  
शीतं शुल्कं मलं सांद्रं स्निग्धं स्यात्कफकोपतः ॥  
वातश्लेष्मविकारे च जायते कपिशं मलम् ॥ ५ ॥  
घट्टं संत्रुटितं पीतं श्यामं पित्तानिलाद्भवेत् ॥  
पीतश्यामं श्लेष्मपित्तदोषात्सांद्रं च पिच्छलम् ॥ ६ ॥

१ द्रव्ययुक्तहस्तः । २ भेठः । ३ स्त्री । ४ पूर्वदिश । ५ ईशान्यां ।  
६ दूतः । ७ भेठः । ८ लकुटमित्यपि । ९ रोगिणः । १० मृत्युतुल्यः ।  
११ धूसरमितिपाठः । १२ पवनम् ।

श्यामं त्रुटितपीताभं वद्धं श्वेतं त्रिदोषतः ॥  
 दुर्गन्धः शिथिलश्चैव विष्टोत्सर्गो यदा भवेत् ॥ ७ ॥  
 तदा जैर्णि मलं वैद्यैर्दोषज्ञैः परिभण्यते ॥  
 कपिलं गुटिकायुक्तं यदि वर्चोऽवलोक्यते ॥ ८ ॥  
 प्रक्षीणमलदोषेण दूषितः परिकथ्यते ॥  
 सितं महत्पूतिगन्धं मलं ज्ञेयं जलोदरे ॥ ९ ॥  
 श्यामं क्षये त्वामवाते पीतं सकटिवेदनम् ॥  
 अतिकृष्णं चातिशुभ्रमतिपीतमथारुणम् ॥  
 मरणाय मलं किंतु भृशोष्णं मृत्यवे ध्रुवम् ॥ १० ॥  
 इति योगतरंगं मलपरीक्षानाम पंचदशस्तरंगः १५

### पौडशस्तरंगः

अथ दृक्परीक्षा ॥

रुक्षा धूम्रा तथा रौद्रां चलो चांतर्ज्वलंत्यपि ॥  
 दृष्टिर्यदा तदा वातरोगं रोगविदो विदुः ॥ १ ॥  
 दीपद्वेपं च संतप्तं पीतं पित्ते च लोचनम् ॥  
 जलाद्रिं ज्योतिषा हीनं स्निग्धं मंदं कफेन तत् ॥ २ ॥  
 बद्धदोषे भवेन्मिश्रवर्णं तूर्णं निलोचनम् ॥  
 श्यामवर्णं च निर्भुग्रं तंद्रामोहसमन्वितम् ॥ ३ ॥  
 रौद्रं च रक्तवर्णं च भवेच्चक्षुस्त्रिदोषतः ॥  
 एकं चक्षुर्यदा भीमं द्वितीयं स्तिमितं भवेत् ॥ ४ ॥  
 त्रिभिर्दिनेस्तदा रोगी स यानि यममंदिग्म् ॥  
 ज्योतिर्विहीनं सहस्रा रोगिणो यस्य लोचनम् ॥ ५ ॥  
 र्दृष्टलृप्त्वं स नियतं प्रयानि यमसद्गानि ॥

सरक्तं कृष्णवर्णं च रौद्रं च प्रेक्षते तथा ॥ ६ ॥

इति लिङ्गैर्विजानीयान्मृत्युरेव न संशयः ॥

एकदृष्टिरचैतन्यो भ्रमस्फुरिततारकः ॥

एकरात्रेण नियतं परलोकपथं व्रजेत् ॥ ७ ॥

॥ यामलात् ॥

शुष्कौष्ठः श्यामकोष्ठोप्यसितरदतति शीतनासाप्रदेशः

शोणाक्षश्चैकनेत्रो लुलितकरपदः श्रोत्रपातित्ययुक्तः ॥

शीतश्वासोथ बोष्णश्वसनसमुदयः शतिगात्रः सकंपः

सोद्वेगो निष्प्रैपश्चः प्रभवति मनुजः सर्वथा मृत्युकाले ॥

॥ अथ शकुनाः ॥

यानेमांतंगविप्रास्तुरगवृषफलच्छत्रमांसोदकुंभा

योपित्पुत्रान्विता वा सुरभिर्रपि तथा खंजरीटामयूराः ॥

वीणाभेरीमृदंगांबुजपटहरवावेदमांगल्यघोषा-

श्वापाः सिद्धौन्नभूभृत्कुसुमपुरवधूचंदनाद्याः प्रशस्ताः १ ॥

एणः काकोपसव्ये शुभ इव कथितः संव्यतः सारमेय-

श्चक्रीयानाखुर्वभ्रुः शफरिदधिपयोरूपंगोमायुमेपाः ॥

प्रेतो नीरोदनश्च ज्वलदनलशिखाश्वेतवस्त्रो ध्वजो वा

चित्तेशस्तेत्रसिद्धिः प्रभजतिभिपजोनान्यथार्कचिदुक्तैः ।

॥ इति शकुनाः ॥

॥ अथ स्वप्नाः ॥

स्वप्नास्तु प्रथमे यामे संवत्सरं विपाकिनः ॥

१ कृष्णदंतपक्तिः । २ शीतलनासिकापः । ३ चचलहस्तपदः ।

४ इन्द्रियाशक्तिभिर्युतः । ५ सञ्चारहितः । ६ हस्ती । ७ जलयुक्तकलशा ।

८ गौ । ९ खजनपक्षिविशेषः । १० नगारेके शब्दः । ११ पपेहा । १२ प-

कात्र । १३ दक्षिणे । १४ वामभागतः । १५ गर्दभः । १६ न्योरः । १७ सि-

रकटः । १८ मेंढा । १९ रात्रेः चत्वारः प्रहरास्तत्र । २० वर्षेणफलदायिनः ।

पङ्क्तिमासैर्द्वितीये तु त्रिभिर्मासैस्तृतीयके ॥

अरुणोदयवेलायां दशाहेन फलप्रदाः ॥ ११ ॥

आरोहणं गोर्हयकुंजराणां

प्रासादशैलाग्रवनस्पतीनाम् ॥

विष्टानुलेपो रुदितं मृतं च

स्वप्नेष्वगम्यागमनं च धन्यम् ॥ १२ ॥

॥ इति स्वप्नाः ॥

इति श्रीयोगतरंगिण्यां दृक्परीक्षानाम षोडशस्तरंगः १६

सप्तदशस्तरंगः ।

॥ अथ धातुशोधनम् । तत्र प्रथमं पारदः ॥

जयेदयं संहितयाप्यजेयान्नादान्महापातकजान्क्षणेन ॥

शुद्धस्ततः शोधनमस्य कार्यमयैरशुद्धो न सुखाय सूतः १ ॥

अंतः सुनीलो वहिरुज्ज्वलो यो

मध्याह्नसूर्यप्रतिमप्रकाशः ॥

शस्तोथ धूम्रः परिपांडुरथ

चित्रो न योज्यो रसकर्मसिद्धौ ॥ २ ॥

स्वाभाविकाः संत्यङ्गुणा रसेस्मि-

न्नागाग्निवंगापिकनामधेयाः ॥

नागान्द्रवेयुर्गलगंडरोगाः

कुष्ठं च वंगान्मरणं विषेण ॥ ३ ॥

मलेन मूर्च्छा देहनेन दाहो

वीर्यच्युतिः स्यादसकृच्चलत्वात् ॥

स्यात्कंचुकाज्जाड्यमयोदराणि

ततो विशुद्धोभिमतो रसेन्द्रः ॥ ४ ॥

शुभेहि हुंढि परिचित्य सम्यक्  
कुर्यात्कुमारीवदुकार्चनं च ॥

विधाय रक्षां विधिमंत्रपूतां  
कर्मारभेदस्य रसस्य तज्ज्ञः ॥ ५ ॥

निशेष्टिकाधूमरजोम्लपिष्टो  
विकंचुकः स्याद्वैसेन सौर्णः ॥

वरारनालानलंकन्यकाभिः  
सद्रूपणीभिर्मृदितस्तु पूतः ॥ ६ ॥

स्विन्नो वराद्यैरथ दोलिकायां  
दिनं मलाद्यै रंहितस्त्रिभिः स्यात् ॥

तद्व्यंशताम्रेण विमर्द्य सूतं  
जंवीरनरिण ततः प्रगाढम् ॥ ७ ॥

संरुध्य भांडद्वयगर्भमध्ये  
पिष्टि ततः संपुटमव्रणं तत् ॥

निवेश्य चुल्ल्यां तु शनैः प्रदीप-  
प्रमाणमग्निं च तले प्रदध्यात् ॥ ८ ॥

ततः शिरस्यस्य जलाद्रमेकं  
वस्त्रं क्षिपेदल्पमनुष्णमेव ॥

वारत्रयेणोरगंवंगसंज्ञौ  
न स्तः प्रदिष्टो ह्यहमूर्ध्वपातः ॥ ९ ॥

कदर्यनेनैव न पुंसकत्वं प्रादुर्भवेदस्य वरस्य पश्चात् ॥

१ दुर्गा । २ इन्द्रि । ३ ईशतोया । ४ निवृत्तेनपिष्टः । ५ एकेन ।  
६ सूतः । ७ त्रिकला । ८ कांजी । ९ चीतो । १० फारको पाठो  
११ मलदहनयत्नैस्त्रिभिः । १२ शून्यः । १३ भांडस्य । १४ विप  
१५ नाम ।

बलेप्रकर्षाय च दोलिकायां स्वेद्यो जले सैध्वचूर्णगर्भे ११  
 बंध्याहिनेत्रांगुजमार्कवानां  
 सतिक्तकानां द्रवसंप्रपके ॥  
 स्थिन्नस्थिरत्वं लभते प्रितोये  
 सकांजिकेदीप्तिर्युतो तितिक्षणः ॥ ११ ॥

इति रसरत्नप्रदीपाद्रसशुद्धिः ॥ उक्तं च ॥

मृत्पापाणजलाख्याश्च अलीकोपोलिकास्तथा ॥  
 श्यामा कपालिका चेति पारदे सप्त कंचुकाः ॥ १२ ॥  
 मलदोषो वह्निदोषो भूदोषोऽन्मत्तदोषकौ ॥  
 शैलदोषश्च पंचैते दोषाः सूते समीरिताः ॥ १३ ॥  
 मृद्रूपश्चाश्मरूपश्च जलरूपः पयोनिभः ॥  
 पंचवर्णाः कृष्णवर्णस्तैलवर्णश्च कंचुकः ॥ १४ ॥  
 मृन्मयात्कंचुकात्कुष्ठं जाड्यं पापाणदोषतः ॥  
 बलीपलितखालित्यं वारिदोषात्प्रजायते ॥ १५ ॥  
 दद्रूच गजचर्माणि करोत्येव कपालिका ॥  
 कामलां पांडुरोगं च तथा कुष्ठं जलोदरम् ॥ १६ ॥  
 प्रमेहं श्वेतकुष्ठं च कुरुते श्यामकंचुकः ॥  
 मर्मच्छेदं वस्तिगूलं काली कुर्यादसंशयम् ॥ १७ ॥  
 कापाली वीर्यहानिं च कुरुते तां निवारयेत् ॥  
 मूर्च्छयेद्बह्निं संधुक्तो मलयुक्तश्च तापयेत् ॥ १८ ॥  
 तेजोनाशं च भूदोषोऽप्युन्मत्तश्चांगभंजनम् ॥  
 कुर्याज्जाड्यं शैलदोषस्तस्मात्संशोधयेद्रसम् ॥ १९ ॥  
 रसश्चतुर्विधो ज्ञेयो ब्रह्मक्षत्रविडंत्यजः ॥



श्वेतो रक्तस्तथा पीतः कृष्णो वर्णाद्विधीयते ॥ २० ॥  
 ब्राह्मणः कल्पते कल्पे गुटिकायां च बाहुजः ॥-  
 धातुवादे तथा वैश्यः शूद्रश्चेतरकर्मणि ॥ २१ ॥  
 सूतः शोध्यो निशायां मरिचनिचयके पिष्टके चेष्टकाया  
 धूमे किंपाकतोयेऽप्यधितुलसि विपे सूरणे शिथुपाके ॥  
 बर्जीदुग्धेऽर्कदुग्धे हुतभुजि लशुने चापि पालाशपंके  
 सोर्ध्वाधःपातने वै लशुनपदुमति स्वेदयेत्कांजिके च २२ ॥  
 दिनद्वयं दिनद्वयं प्रमर्दयेद्रसाधिपम् ॥  
 समीरितौषधं प्रतिप्रवृष्टमानसो भिषक् ॥ २३ ॥  
 एकेन लशुनेनापि शुद्धो भवति पारदः ॥  
 तस्रस्त्रल्वे मासमेकं पिष्टो लवणसंयुतः ॥ २४ ॥  
 सूते पादमितं सर्वं प्रक्षिपेच्छोधनौषधम् ॥  
 अष्टमांशं पुनः केऽपि कथयन्ति मनीषिणः ॥ २५ ॥

सहस्रनिवूफलतोषघृष्टो

रसो भवेद्बह्विसमप्रभावः ॥

सव्योपराजीलवणः सचित्रः

सरामठो विंशति वासराणि ॥ २६ ॥

इति रसार्चितामणेः ॥

सदुग्धभाण्डस्थपटस्थितोऽयं शुद्धो भवेत्कूर्मपुटेन गन्धः ॥  
 आभ्यांरुताकजलिकानुपानैः सर्वामयघ्नी रसगंधकाभ्यां  
 इति गंधकशोधनम् ॥

शुद्ध्या विशुद्धोय सुजीर्णगंधो दीप्तिप्रदः कांचनभुग्गदघ्नः ॥

१ रसायने । २ क्षत्रियः । ३ काजिकृजते । लिपाकेत्यपि पा-  
 ठः । ४ रसे । ५ सेहजनो । ६ चित्रके । ७ अजाशकृत्तुपानिवभृगर्भे  
 त्रितय क्षिपेत् ॥ तस्योपरि स्थितं खल्वं तत्प्रप्लवमिदं यदेत ॥ ८ सि-  
 द्ध इत्यपि पाठः । ९ रसेन्द्रः ।

वदांति चैनं त्रिविधं सुवद्धं संमूर्छितं चापि मृतं रसेन्द्रम् २८

मूर्छां प्रपन्नो हरते च रोगा-

न्वद्धस्तथा खेचरेतां ददाति ॥

मृतो मूर्तिं नाशयति प्रकर्षा-

ज्जीयाद्रसेन्द्रोऽगणितप्रभावः ॥ २९ ॥

मूर्छादिकर्मत्रितयं मुखं च

सूताद्वलेः षड्गुणजारणं च ॥

अजीर्णनाशं च यथातथं च

ब्रूमोऽस्य रूपं प्रतिभानुरूपम् ॥ ३० ॥

सूतप्रमाणं सिंकताख्ययन्त्रे

दत्त्वा वालिं मृद्वटितेऽल्पभाण्डे ॥

तैलावशेषेऽत्रं रसं नियुज्या-

न्मैग्राहकायं प्रतिलोक्य भूयः ॥ ३१ ॥

आषड्गुणं गंधकमल्पमल्पं

क्षिपेदसौ जीर्णवलिर्वली स्यात् ॥

रसेषु सर्वेषु नियोजनीय-

मसंशयं हन्ति गदं जवेन ॥ ३२ ॥

इति षड्गुणगंधकजारणविधिः ॥ अथान्यः प्रकारः

विलोलिते स्वर्णजलैर्विगुण्डे

वस्त्रेऽथ दत्त्वा नवनीतगर्भे ॥

चूर्णं शिलागंधकतालकानां

सपञ्चगानां समभागिकानाम् ॥ ३३ ॥

|                     |                 |                 |               |     |
|---------------------|-----------------|-----------------|---------------|-----|
| १ रसः ।             | २ आकाशगर्भि ।   | ३ रसेन्द्रः ।   | ४ मृत्युं ।   | ५ स |
| वाल्कर्येण वर्धते । | ६ पारदात् ।     | ७ गंधकस्य ।     | ८ मुद्रिसमानं |     |
| ९ बालुकायत्रे ।     | १० मृत्पात्रे । | ११ पिष्टीकरणे । | १२ रसं        |     |
| १३ धनुरजतेः ।       | १४ सीसो ।       |                 |               |     |

कर्षप्रमाणं च ततोऽस्य वार्ति  
प्रज्वालयेत्तद्गलितं घृतं स्यात् ॥  
अनेन कुर्याद्रसनायकस्य  
सर्वत्र पिष्टि वलिजारणाय ॥ ३४ ॥

इति पिष्टीकरणम् ॥

भागो रसस्य त्रय एव भागा  
गंधस्य भागः पवनाशनस्य ॥  
संमर्द्य गाढं सुकलं सुभांडे  
तां कज्जलीं काचरुते निदध्यात् ॥  
संरुध्य मृत्कर्पटकैर्यटीं तां  
मुखे सचूर्णां गुटिकां च दत्वा ॥  
क्रमाग्निना त्रीणि दिनानि पक्त्वा  
तां बालुकायंत्रगतां ततः स्यात् ॥ ३६ ॥  
वैंधूकपुष्पारुणमीशजस्य  
भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु ॥  
निजानुपानैर्मरणं जरां च  
हंत्यस्य बल्लक्रमसेवनेन ॥ ३७ ॥  
निखिलक्षयभक्षणदक्षतरं  
व्रणकुष्ठभगंदरमेहहरम् ॥  
वैलधीधृतिशुक्रसमृद्धिकरं  
रसभस्मसमस्तगदापहरम् ॥ ३८ ॥

इति भस्मसूतः ॥

इष्टकायां सुपक्वायां सुर्वातं चतुरंगुलम् ॥

कृत्वा कांचेन सँल्लिधं तस्यांतः पिष्टिकां क्षिपेत् ॥ ३९ ॥

निबूद्रवाद्रो गंधोस्य देयो मूर्ध्नि द्विकार्पिकः ॥

मुखं संरुध्य गुष्केथ दद्याद्वावपुटं ततः ॥ ४० ॥

शान्तिं तस्योपरि पुनः पुटं देयं ततोधिकम् ॥

एवं द्वित्रिचतुःकार्या यावज्जीर्यति गंधकः ॥ ४१ ॥

जीर्णे पुनस्तथा देयो यावज्जीर्यति षड्गुणः ॥

मूर्च्छितो विधिनानेन भवत्येव रसेश्वरः ॥ ४२ ॥

इति रसमूर्च्छनं ॥

जंबीरनिंबुनारेण मर्दितो हिंगुलुर्दिनम् ॥

ऊर्ध्वपातनयंत्रेण ग्राह्यः स्यान्निर्मलो रसः ॥ ४३ ॥

कंचुकैर्नागवंगार्धैर्विमुक्तो रसकर्मणि ॥

योज्यः सांबुपुटः स्विन्नः पूर्वाभावे भिषग्वरैः ॥ ४४ ॥

इति हिंगुलाकृष्टिः ॥

षेलाब्दरबभूधात्रिसैत्यघ्नीजिह्विकांबुभिः ॥

मर्दितस्तुर्यभावेन गंधकेन समन्वितः ॥ ४५ ॥

वेष्टितो हिंगुना फल्लगुक्षीराक्तेन दधित्थजे ॥

चूर्णगर्भे प्रदेयोऽयमंतर्लवणमीशजः ॥ ४६ ॥

प्रध्मातः शनकैर्वद्धो रसो भवति नान्यथा ॥

वक्रस्थो वपुषः स्थैर्यं करोत्यखिलरोगजित् ॥

इति रसवर्धनं ॥ अधान्यः प्रकारः ॥

राजिकाफलनिर्नाकंदतुलसीरक्तचित्रकैः ॥

मुखालेपस्तु कर्तव्यः क्षणार्थं वदसूतकः ॥ ४७ ॥

सास्यो रसः स्यात्पदुशिश्रुतुं त्यैः

१ नागेन । २ डमरुयंत्रेण । ३ खिरेटी । ४ चोराई । ५ गोभी ।  
६ भागेनेत्यपि पाठः । ७ कट्यारदुग्धेन । ८ कर्पित्यजे । ९ फागुत्त  
या करत्पेरंडः पाठः । १० सीताप्रांथो ।

सराजिकैः सोपणकैस्त्रिरात्रम् ॥

पिष्टस्तथा स्विन्नतनुः सुवर्ण-

मुखानयं खादति सर्वधातून् ॥ ४८ ॥

इति सुखकरणम् ॥

अजीर्णनाशाय सुभूर्जपत्रे

स्वेद्यस्त्रिरात्रं पदुकांजिकेऽथ ॥

मात्राधिकश्चेत्समतामुपैति

यावन्न तावद्भ्रसनाधिकारी ॥ ४९ ॥

॥ इत्यजीर्णनाशनम् ॥

सच्छिद्रं सलिलापूर्णभाण्डवक्त्रे शरावकम् ॥

दत्त्वा छिद्रे पक्कमूपा देया नीरोवियोगिनी ॥ ५० ॥

तस्यां विडौवृतः सूतो देयो लोहावृते मुखे ॥

शनैर्धर्मातो ग्रसत्येव कांचनं सूक्ष्मतां गतम् ॥ ५१ ॥

स्वल्पं सपित्ततापाक्तं शनैर्देयं समावधि ॥

देहार्थं धातुवादार्थं प्रयच्छेत्स्वल्पबुद्धयः ॥ ५२ ॥

इति सुवर्णजारणम् ॥

पिष्टं पांशुपदु प्रगाढमर्मलं वज्रांशुना चैकशः

सूतं धातुयुतं पटीकवलितं तं संपुटे रोधयेत् ॥

अंतःस्थं लवणस्य तस्य च तले प्रज्वाल्य वह्निं हठा-

दधेत्त्रं ग्राह्यमर्थेदुर्कुंदधवलं भस्मोपरिस्थं शनैः ॥ ५३ ॥

तद्वह्नद्वितयं लवंगसहितं प्रातः प्रभुक्तं च यै-

रुर्ध्वं रेचयति द्वियामभसकृत्पेयं जलं शीतलम् ॥

१ पिप्पलीसहितैः । २ होतिकायत्रेण । ३ जुलमै लगीरहे । ४ आच्छादितः ।  
५ रेह मृत्तिकाविशेषः । ६ शुद्ध । ७ सेहृण्डदुग्धेन । ८ केनापि अमृतधातुना  
युक्तम् । ९ वज्रेणाच्छादित । १० मध्ये गतम् । ११ एकदिनपर्यन्तम् ।  
१२ ईदृश वर्णम् ।

एतद्वन्ति च षत्सरावधि विषं पाण्मासिकं मांसिकम् ॥  
शैलोत्थं गरलं मृगेन्द्रकुटिलोद्भूतं च तात्कालिकम् ॥ ५४ ॥

इति लवणभेदी सुधानिधिः ॥

उत्कृत्य मूलं विपजं विदध्याद्भस्मस्य सूतं कनकांशपिटं ॥  
संवेष्टयेत्कोलभवेन तं तु मासेन पश्चाद्विषचेद्वियामम् ॥

धत्तूरबीजोद्भवतैलगर्भे

संवद्धतां याति मुखस्थितोयम् ॥

संभोगकाले दृढतां करोति

वीर्यस्य दुग्धं भजतां नराणाम् ॥ ५५ ॥

इति हिरण्यगर्भगुटिका ॥ रसरत्नप्रदीपात् ॥

सूतः पंचपलः स्वदोपरहितस्तत्तुल्यभागो बलि-

द्वौ टंकौ नवसादरस्य तुवरीकपै च संमर्दितः ॥

कूप्यां काचकृतौ स्थितश्च सिकतायंत्रे त्रिभिर्वासरैः

पक्वो यक्निभिरुद्भवत्यरुणभाः सिंदूरनामा रसः ॥ ५६ ॥

वाते सक्षौद्रपिप्पल्यपि च कफरुजि त्र्यूपणं चाग्निचूर्णं

पित्ते सैर्ला सिता स्याद्रेणवति बृंहती नागरार्द्रामृतांबु ॥

पुष्टौ साज्या त्रिव्यामा हरनयनफलो शाल्मलीपुष्पवृन्तं

किंवा कांताललाटाभरणरसपतेः स्यादनूपानमेतत् ॥ ५७ ॥

अपनयति रोगवृंदं द्रढयति कायं महद्वलं कुरुते ॥

पुत्रशतानि च सूते सिंदूराख्यो रसः पुंसाम् ॥ ५८ ॥

स्मरस्यायुर्नानागददहर्नदावानलशिखा

१ संवत्तादिकम् । २ सिंदूररसादिवोद्भूतम् । ३ शूकरमेज । ४ नूरेत्यपि पाठः । ५ फिटकरी । ६ भुञ्जीति पात्रनरम् । ७ चित्रकटुर्णम् । ८ इना-  
यची । ९ पुंछ । १० कटकाठी । ११ हरिद्रया । १२ यक्षायती । १३ विरु-  
ता । १४ दाहरो । १५ सिंदूरख्यस्य । १६ शूरीकरोति । १७ कामस्य ।  
१८ गहमेत्यपि पाठः ।

तत्त्वा बन्हेस्तेजोवलरुचिरतावल्लिर्मुदिरः ॥

अपि प्रौढस्त्रीणामतुलवलहारी निधुवने ॥

रसः सिंदूराख्यः सकलरसराजो विजयते ॥ ५९ ॥

इति वसंतराजात् रससिंदूररसः ॥

यंत्रे सुसिद्धे डमरूस्समाख्ये

निधाय सूतस्य पलानि पंच ॥

बलमीकमृत्स्ना खण्टिकेष्टिकानां

सगैरिकाणां तुवरीयुतानाम् ॥ ६० ॥

ससैंधवानां समभागिकानो

चूर्णाढकं चोपरितो निदध्यात् ॥

अम्लेन दध्ना महिषीभवेन

पिष्टं रसोनस्य शरावमेकम् ॥ ६१ ॥

समक्रमेणात्र निधाय खंडै-

राच्छादयेत्खर्परजैर्विसंधिः ॥

चूर्णप्रलिसोदरमूर्ध्वभांडं

संस्थाप्य संमुद्र्य दृढं सुचुल्लया ॥ ६२ ॥

प्रज्वालयेद्दह्निमधः क्रमेण

संस्थाप्य यंत्रोपरि वस्त्रमार्द्रम् ॥

वर्द्धिं प्रदद्याद्दिनपट्टमत्र

तत्स्वांगशीतं परिगृह्य बुद्ध्या ॥ ६३ ॥

तं द्रोणपुष्पीपयसा प्रपिष्टं कूप्यां विदध्यान्नवसादरं च ॥

कर्पप्रमाणं प्रहरत्रयं च वर्द्धिं प्रदद्यादथ शीतलांगीम् ॥ ६४ ॥

निष्कास्य कूर्पीं सिकताख्ययंत्रा-

दास्फोट्य कंठस्थममुं प्रगृह्यात् ॥

कर्पूरनामा रसनायकोऽयं

बलः पुराणेन गुडेन भुक्तः ॥ ६५ ॥

निर्वीरभाजा संरुजा च पथ्य-

शिलेन कुष्ठाभयनाशनः स्यात् ॥

फिरंगकरिकेसरी सकलकुष्ठतालानलोऽ-

खिलव्रणविनाशकृद्गणजंगतपूर्तिप्रदः ॥

सुवर्णसमवर्णकृद्बलहेताशतेजस्करः

समस्तगदतस्करो रसपतिः स कर्पूरकः ॥ ६६ ॥

इति कर्पूररसः वौद्धसर्वस्वात् ॥

शुद्धसूतसमं तुत्थं धनकाथेन सप्तधा ॥

भावयित्वा न्यसेत्कूप्यां मुखे मुद्रां च कारयेत् ॥ ६७ ॥

वालुकायंत्रमध्ये तु यौमार्कं ज्वालयेदधः ॥

रसकर्पूरविरल्याते खोटवद्धो भवेद्रसः ॥ ६८ ॥

स्वर्णाद्या धातवः सर्वे द्रवीभूताः सुयोजिताः ॥

शुध्यन्ति वक्ष्यमाणेषु द्रवद्रव्येष्वनुक्रमात् ॥ ६९ ॥

तैले तक्ने गवां मूत्रे कांजिकेथ कुलत्थके ॥

त्रिफलाकाथतोये च संशोभ्याः सर्वधातवः ॥ ७० ॥

इति सुवर्णादिसर्वधातुशुद्धिः ॥

स्यात्तीक्ष्णलोर्हयोः शुद्धी रजसोऽथ पुटैस्त्रिभिः ॥

रंभाजलेन घृष्टस्य शिशुमूलत्वगंबुना ॥ ७१ ॥

पुनस्तप्तं हिमीभूतं वाँह्रीकांबुनि तद्रजः ॥

भावितं मार्कवद्रावैः सप्तधा पुटितं ततः ॥ ७२ ॥

मत्स्याक्षीसालिलैस्तावहैरानीरैर्मृतिर्भवेत् ॥



तत्कुष्ठक्षयमंदाग्निपांडुकासादिकान्गदान् ॥ ७३ ॥

नाशयत्यनुपानैः स्वैर्जरां च पालितं तथा ॥

शुद्धिमारणयोरैक्यादुक्तमेतन्नदूपणम् ॥ ७४ ॥

इति रसरत्नप्रदीपान् ॥

शुद्धं हतं दरदगंधकयोगतः स-

द्वैद्येन वारितरमुख्यदिनप्रकाशम् ॥

लोहं निहंत्यनिलपित्तबलासरोगा-

नुक्तानुपानसहितं न हिताय कस्य ॥ ७५ ॥

अथवा ॥

शुद्धं दाडिमजैः काथैरनले पक्वतां गतम् ॥

संवरावारिभिर्घृष्टं नवसादरसंयुतैः ॥ ७६ ॥

तदर्थं गंधकं तस्याप्यर्थं सूतं नियोजयेत् ॥

कुमारीवारिभिः खल्वे मर्दितं गोलकीकृतम् ॥ ७७ ॥

शुष्कमेरंडजैः पत्रैर्वेष्टितं तंतुभिस्तथा ॥

संपुटे स्थापयित्वा तं वेष्टिते च मृदा पुनः ॥ ७८ ॥

कुंसूलधान्यमध्यस्थं दिनानि किल विंशतिः ॥

उद्धृत्य च ततो लोहं चूर्णितं सुंधया समम् ॥ ७९ ॥

सर्वामयहरं सम्यग्रसायनमनुत्तमम् ॥ ८० ॥

पांडुं खंडयेति क्षयं क्षपयति क्षेप्यं क्षिणोति क्षणा-  
त्कासं नाशयति भ्रमं नमयति श्लेष्मामयान्खादति ॥

अर्शोगुल्मसगूलपीनसवमीश्वासप्रमेहारुची-

राशून्मूलयति प्रभूतगुणकृद्धोहं परं मारितम् ॥ ८१ ॥

इति लोहमारणं बौद्धसर्वस्वात् ॥

कर्पूरनामा रसनायकोऽयं

वह्नुः पुराणेन गुडेन भुक्तः ॥ ६५ ॥

निर्वीतभाजा संरुजा च पथ्य-

शिलेन कुष्ठामयनाशनः स्यात् ॥

फिरंगकरिकेतरी सकलकुष्ठतालानलोऽ-

खिलव्रणविनाशरुद्रणजंगर्तपूर्तिप्रदः ॥

सुवर्णसमवर्णरुद्रलहृताशतेजस्करः

समस्तगदतस्करो रसपतिः स कर्पूरकः ॥ ६६ ॥

इति कर्पूररसः बौद्धसर्वस्वात् ॥

शुद्धसूतसमं तुत्थं धनकाथेन सप्तधा ॥

भावयित्वा न्यसेत्कूप्यां मुखे मुद्रां च कारयेत् ॥ ६७ ॥

बालुकायंत्रमध्ये तु यौमार्कं ज्वालयेदधः ॥

रसकर्पूरविख्याते खोटवद्धो भवेद्रसः ॥ ६८ ॥

स्वर्णाद्या धातवः सर्वे द्रवीभूताः सुयोजिताः ॥

शुध्यन्ति वक्ष्यमाणेषु द्रवद्रव्येष्वनुक्रमात् ॥ ६९ ॥

तैले तक्ने गवां मूत्रे कांजिकेथ कुलस्थके ॥

त्रिफलाकाथतोये च संशोध्याः सर्वधातवः ॥ ७० ॥

इति सुवर्णादिसर्वधातुशुद्धिः ॥

स्यात्तीक्ष्णलोर्हयोः शुद्धी रजसोऽथ पुटैस्त्रिभिः ॥

रंभाजलेन घृष्टस्य शिशुमूलत्वगंबुना ॥ ७१ ॥

पुनस्तप्तं हिमीभूतं वाँहीकांबुनि तद्रजः ॥

भावितं मार्कवद्रावैः सप्तधा पुटितं ततः ॥ ७२ ॥

मत्स्याक्षीसलिलैस्तावद्देरान्निर्मृतिर्भवेत् ॥

तत्कुष्ठक्षयमंदाग्निपांडुकासादिकान्गदान् ॥ ७३ ॥

नाशयत्यनुपानैः स्वैर्जरां च पालितं तथा ॥

शुद्धिमारणयोरैक्यादुक्तमेतन्नदूषणम् ॥ ७४ ॥

इति रसरत्नप्रदीपात् ॥

शुद्धं हतं द्रवदगंधकयोगतः स-

द्वैद्येन वारितरमुख्यदिनप्रकाशम् ॥

लोहं निहंत्यनिलपित्तबलासरोगा-

नुक्तानुपानसहितं न हिताय कस्य ॥ ७५ ॥

अथवा ॥

शुद्धं दाडिमजैः काथैरनले पक्वतां गतम् ॥

संवरावारिभिर्घृष्टं नवसादरसंयुतैः ॥ ७६ ॥

तदर्धगंधकं तस्याप्यर्धं सूतं नियोजयेत् ॥

कुमारीवारिभिः खल्वे मर्दितं गोलकीकृतम् ॥ ७७ ॥

शुष्कमेरंडजैः पत्रैर्वैष्टितं तंतुभिस्तथा ॥

संपुटे स्थापयित्वा तं वेष्टिते च मृदा पुनः ॥ ७८ ॥

कुसूलधान्यमध्यस्थं दिनानि किल विंशतिः ॥

उद्धृत्य च ततो लोहं चूर्णितं सुंधया समम् ॥ ७९ ॥

सर्वाभयहरं सम्यग्रसायनमनुत्तमम् ॥ ८० ॥

पांडुं खंडयेति क्षयं क्षपयति क्षैण्यं क्षिणोति क्षणा-

त्कासं नाशयति भ्रमं नमयति श्लेष्मामयान्खादति ॥

अर्शोगुल्मसगूलपीनसर्वमाश्वसप्रमेहारुची-

राशून्मूलयति प्रभूतगुणकृद्धोहं परं मारितम् ॥ ८१ ॥

इति लोहमारणं चोद्धतसर्वस्वात् ॥

शुद्धः स्यात्तालकः स्विन्नः कूष्माण्डसालिलैस्ततः ॥  
चूर्णोदकैः पृथक्तैले भस्मीभूतो न दोषकृत् ॥ ८२ ॥

इति तालकशुद्धिः ॥

वीजपूररसैः पिष्टा जंयान् रैर्मनःशिला ॥

सप्ताहं स्वेदितः शुद्धो रसको नरवारिणा ॥ ८३ ॥

इति मनःशिलारसकशुद्धिः ॥ अथ जेपालशोधनम् ॥

जेपालं रहितं त्वगंकुररसं ज्ञानिर्मले माहिषे  
निक्षिप्तं त्र्यहमुष्णतोयविमलं खल्वे सप्ताहोर्दितम् ॥  
लिप्तं नूतनखपरिपु विगतस्नेहं रजःसंनिभं  
निबूकांबुविभावितं च बहुशः शुद्धं गुणाढ्यं भवेत् ॥ ८४ ॥

॥ इति जेपालशोधनम् ॥

ओतोर्विष्ठासमं तुल्यं सक्षौद्रं टंकणांघ्रियुक् ॥

त्रिधैव पुटितं शुद्धं वांतिभ्रांतिविवर्जितम् ॥ ८५ ॥

इति तुल्यशुद्धिः ॥

भाविता विमला धर्मे जरज्जंवीरवारिणा ॥

मेपगृग्यंबुना घस्रं शुद्धः कर्कोटकाजलैः ॥ ८६ ॥

इति तारमाक्षिकशुद्धिः ॥

तुर्याशसैधवोपेतं माक्षिकं मर्दयेद्दृढम् ॥

वीजपूरांबुना दग्धं सम्यक्पात्रे च लोहजे ॥ ८७ ॥

॥ इति स्वर्णमाक्षिकशुद्धिः ॥

अम्लद्रव्यद्रवैः पिष्टो दरदो माहिर्येण तु ॥

दुग्धेन सप्तधा पिष्टः श्लक्ष्णीभूतो विशुध्यति ॥ ८८ ॥

इति दरदशुद्धिः ॥ ९

मोदुग्धत्रिफलाभृङ्गद्रवैः पिष्टं शिलाजतु ॥

दिनैकं लोहजे पात्रे शुद्धिमायात्यसंशयम् ॥ ८९ ॥

इति शिलाजतुशुद्धिः ॥

त्रिदिनं कांजिकैः स्विन्नः शुद्धः स्याद्विपतिदुकः ॥ ९० ॥

इति विपतिदुकशुद्धिः ॥

अक्षाम्रिदग्धं गोमूत्रे निर्वापितमयोमलम् ॥

पृथक्पृथक्सप्तवारं शुद्धं भवति सर्वथा ॥ ९१ ॥

॥ इति किट्टशुद्धिः ॥

पादांशशालिसंयुक्तमभ्रं बध्वा च कंवले ॥

त्रिरात्रं स्थापयेन्नरि तत्किञ्च मर्दयेत्करैः ॥ ९२ ॥

कंवलाद्गलितं श्लक्ष्णं बालुकारहितं च यत् ॥

तद्वान्याभ्रमिति प्रोक्तं सद्भिर्देहस्य शुद्ध्ये ॥ ९३ ॥

॥ इति धान्याभ्रकरणविधिः ॥ अथविपशुद्धिः ॥

विपं तु खंडशः कृत्वा वस्त्रखंडेन बंधयेत् ॥

गोमूत्रमध्ये निःक्षिप्य स्थापयेदातपे त्र्यहं ॥ ९४ ॥

गोमूत्रं तु प्रदातव्यं नूतनं प्रत्यहं बुधैः ॥

त्र्यहेऽतीते तदुद्धृत्य शोषयेन्मृदु पेपयेत् ॥ ९५ ॥

शुध्यत्येवं विपं सेवायोग्यं भवति चार्तिजित् ॥

॥ इति विपशुद्धिः ॥

कंकुष्टं गैरिकं शंखं कासीसं टंकणं तथा ॥ ९६ ॥

नीलांजनं शुक्तिभेदाः क्षुब्धकाः स्मैराटिकाः

जंवीरवारिणा स्विन्नाः क्षालिताः कोष्णवारिणा ॥

शुद्धिमायांत्यमी योज्या भिषग्भिर्योगसिद्धये ॥ ९७ ॥

इत्युपरसादिशुद्धिः ॥

रसस्य भस्मना वाथ रसेनालिप्य वै दलं ॥

हिंगुहिंगुलसिंदूराशीलौसोम्येन मेलयेत् ॥ ९८ ॥

संमर्द्य कांचनद्रावैर्दिनं कृत्वाथ गोलकम् ॥

तं भांडस्य तले दत्वा भस्मना पूरयेद्दृढम् ॥ ९९ ॥

अग्निं प्रज्वालयेद्भाटं द्विनिशं स्वांगशीतलम् ॥

उद्धृत्य सावशेषं चेत्युनर्दयं पुटद्वयम् ॥ १०० ॥

अनेन विधिना स्वर्णं निरुत्थं जायते मृतम् ॥

एतद्रसायनं बल्यं वृष्यं शीतं क्षयादिजित् ॥ १०१ ॥

स्वर्णं स्वर्णसवर्णवर्णजनकं सर्वक्षयोन्मूलक-

द्वल्यं वृष्यमनुष्णवीर्यमसकृत्क्षुब्धनं वृंहणम् ॥

निःशेषामयसंधसंढातिकरं तेजस्करं शुक्रक-

च्चक्षूरोगजरापहं नवमुधाषानोपमं प्राणिनाम् ॥ १०२ ॥

इति स्वर्णमारणं ॥

विधाय पिष्टं सूतस्य रजस्तस्याथ मेलयेत् ॥

तालगंधं समं पश्चान्मेलयेन्नवुकद्रवैः ॥

द्वित्रिः पुटैर्भवेद्भस्म योज्यमेतद्रसादिषु ॥ १०३ ॥

तारं शीतकषायमम्लमधुरं दोषत्रयच्छेदनं

स्निग्धं दीपनमक्षिकुक्षिगदजिह्वाहप्रमेहप्रणुत् ॥

मेदोभेदि मदात्ययात्ययकरं कांत्यायुरारोग्यक-

ल्पक्षमापस्मृतिपांडुगूलपलितक्षीहज्वरघ्नं परम् ॥ १०४ ॥

इति रूप्यमारणगुणाः ॥

तालेन वंगं दरदेन तीक्ष्णं  
नागेन निष्कं शिलया च नागम् ॥  
गंधाश्मना चैव निहन्ति गुल्वं  
तारं च माक्षीकर्सेन हन्यात् ॥ १०५ ॥

राजेरीति तथा घोषं सार्वभौममारयेद्विपक् ॥

इति रीतिकांस्यमारणम् ॥

त्रिभिः कुंभीपुटैर्नागो वातारसविमर्दिनः ॥  
सशिलो भस्मतामेति तद्रंजः सर्वमेहनुत् ॥ १०६ ॥

इति नागमारणम् ॥

वंगं सतालमर्कस्य पिष्ट्वा दुग्धेन संपुटेत् ।  
शुष्काश्वत्थभवैर्वलैः समया भस्मतां व्रजेत् ॥ १०७ ॥  
आयुःप्रदाता बलवीर्यकर्ता रोगापहर्ता मदनस्य कर्ता ॥  
वंगेन तुल्यं न च किञ्चिदन्यद्रसायनं श्रेष्ठतमं नराणाम् ॥ ८  
बल्यं दीपकपाचनं रुचिकरं प्रज्ञाकं शीतलं  
सौंदर्यैकविबर्धनं हतजरं नीरोगताकारणम् ॥  
धातुस्थौल्यकरं क्षयक्षयकरं सर्वप्रमेहापहं  
वंग भक्षयतो नरस्य न भवेत्स्वप्नेऽपि शुक्रक्षयः ॥ १०९ ॥

इति वंगमारणगुणौ ॥

ताम्रपादांशतः सूतं तत्तुल्यं गंधकं क्षिपेत् ॥  
कन्यारसेन संपिष्ट्वा ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ ११० ॥  
निक्षिप्य हंडिकामध्ये शरावेण निरोधयेत् ॥  
हंडिकां पट्टनापूर्य पट्टनामयं विपक् ॥ १११ ॥

- |             |                       |               |            |               |
|-------------|-----------------------|---------------|------------|---------------|
| १ राग ।     | २ लाह ।               | ३ सुवर्णम् ।  | ४ सोसा ।   | ५ चुवकपापाण । |
| ६ ताम्रम् । | ७ रूपम् ।             | ८ पारदेन ।    | ९ पोतल ।   | १० कासीव ।    |
| ११ गजपुटे । | १२ सनाग इत्यपि पाठः । | १३ बुद्धिकर । | १४ लरणेन । |               |

स्वांगशीतं विचूर्ण्यथ वांतिदाहविवर्जितम् ॥  
सर्वदोषहरं ताम्रं सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ ११२ ॥

अथान्यः प्रकारः ॥

सूक्ष्मं ताम्रदलं विमर्द्य पटुना क्षारेण जंवीरजै-  
नीरैर्यस्यमिदं स्रुगर्कपयसा लिप्तं धमेत्सप्तधा ॥  
निर्गुडचंवुहिमं रसेन्द्रकलितं दुग्धाढ्यगंधेन त-  
त्तुल्येनाथ मृतं भवेत्सुपुटितं पंचामृतेन त्रिधा ॥ ११३ ॥  
वांतिभ्रांतिविवर्जितं ज्वररुजः कुष्ठानि पांड्वामयं  
गूलं मेहगुदांकुरानिलगदानुक्तानुपानैर्जयेत् ॥  
गुंजामात्रमिदं ततो द्विगुणितं संशुद्धकायेन चे-  
त्प्रोक्तं स्थौल्यजराविपत्तिशमनं पथ्याशिनो वत्सरात् १४

इति ताम्रमारणम् ॥

दुग्धत्रयं कुमार्यश्चु गंगापुत्रं नृमूत्रकम् ॥  
वटगुंगमजारक्तमेभिरभ्रं सुमर्दितम् ॥ ११५ ॥  
शतधा पुटितं भरुम जायते पद्मरागवत् ॥  
निश्चंद्रिकं भवेत्तनु शुद्धदेहे रसायनम् ॥ ११६ ॥  
रोगान्हन्ति द्रवयति वपुर्वीर्यवृद्धिं विधत्ते  
तारुण्याद्यं रमयति शतं योपितां नित्यमेव ॥  
दीर्घायुष्का अनयति मृतान्सिहनुल्यप्रभावा-  
न्मृत्योर्भोजि हरति च सदा सेव्यमानो मृताभ्रः ॥ ११७ ॥  
गौरितेजः परमममृतं वातपित्ताक्षयांत्यं  
प्रज्ञोद्बोधि प्रशमितजरं वृष्यमायुष्यमव्ययम् ॥  
वत्यं स्निग्धं रुचिरमरुफं दीपनं शीतवीर्यं



तत्तद्योगात्सकलगदजिद्वयोम सूतेद्रवेधि ॥ ११८ ॥

वयःस्तंभकारी जरामृत्युहारी

वलारोग्यकारी महाकुष्ठहारी ॥

मृतो मेघ एकः सुयोगे सुयोग्यः

सदा सूतराजस्य तुल्यो गुणेन ॥ ११९ ॥

इत्यभ्रकमारणगुणौ ॥

व्याघ्रीकण्टकं वज्रं दोलायत्रे निपाचितम् ॥

सप्ताहं कोद्रवकाथे कौलत्थे निमलं भवेत् ॥ १२० ॥

त्रिःसप्त कृत्वा संतप्तं खरमूत्रेण सेचयेत् ॥

मत्कुणैस्तुल्यं पिष्ट्वा जटोले कुलिशं क्षिपेत् ॥ १२१ ॥

प्रध्मातं वाजिमूत्रेण सिक्तं पूर्वक्रमेण च ॥

भस्मीभवति तद्भुक्तं वज्रवत्कुरुते तनुम् ॥ १२२ ॥

इति वज्रमारणम् ॥

वैक्रांतं वज्रवच्छोध्यं ध्मातं तद्वयमूत्रके ॥

हिमं तद्भस्म संघोष्यं वज्रस्थाने विचक्षणैः ॥ १२३ ॥

इति वैक्रांतमारणम् ॥

यद्वज्रं न निर्भं क्षिप्तं बह्वी नो विकीर्तं व्रजेत् ॥

वज्रसंज्ञं हि तद्योज्यं व्योम सर्वत्र नेतव्यम् ॥ १२४ ॥

भावयेच्चूर्णितं वज्रं दिनैकं कांजिकेन च ॥

रंभासूरणैर्जैरैर्मूलकोत्पैश्च मूलयेत् ॥ १२५ ॥

तुर्यांशटकणैश्च क्षुद्रमत्स्यै समं पुनः ॥

महिषीमलसंघिघ्नं निधाय स्थाप्य गोलकान् ॥ १२६ ॥

खराग्निना धमेद्वाटं सत्त्वं मुच्यते कांस्थवत् ॥

१ कटकारीमूलगतम् । २ शुद्ध । ३ एकविंशतिवारम् । ४ खटमल ।  
५ कुष्णवर्णम् । ६ वर्णम् । ७ केर । ८ जिमीकद ।

सत्वसेवी वयःस्तंभं कृतंशुद्धिलभेत्ततः ॥ १२७ ॥

इत्यभ्रकसत्त्वपातनविधिः ॥

ताम्रभूभवभूनांगान्निशापिष्टान्समेन तान् ॥

गुडगुग्गुलुलाक्षोर्णामित्स्यपिण्याकटकैः ॥ १२८ ॥

दृढमैतैश्च संयोज्य मर्दयित्वा धमेत्सुखम् ॥

मुंचन्ति ताम्रसत्त्वं तत्तन्मुद्राजलपानतः ॥

नश्यन्ति जंगमविषाण्यशेषाण्यपि सर्वथा ॥ १२९ ॥

इति भूनागसत्त्वपातनविधिः ॥

सर्वेषामुपपूर्वाणां रसानां सत्वमारणाम् ॥

कर्तव्यं भस्म सूतेन गंधकेनाग्निगर्भके ॥ १३० ॥

इति सर्वसत्त्वमारणम् ॥

ये धातवो येप्युपयूयकाश्च रसाश्चमृत्स्नाद्वैपदोल्पसांध्याः ॥

मुंचन्ति सत्त्वं विमलांगणेन गुडादिना तत्र न संशयोस्ति ॥

यत्रोपरसभागोस्ति रसे तत्सत्त्वयोजनम् ॥

कर्तव्यं तत्फलाधिक्यमिच्छता निश्चितात्मना ॥ १३१ ॥

॥ इति श्रीयो रसधातुशोधनमारणनामसप्तदशस्तरंगः ॥

अष्टावशरतरङ्गः ॥

॥ अप स्वरसादिः ॥

अथात्र स्वरसः कल्कः काथश्च हिमफांटकी ॥

शेषाः कपायाः पच्यन्ते लयवः स्युर्यथोत्तरम् ॥ १ ॥

॥ तत्र स्वरसकल्पना ॥

आहता तत्क्षणात्तृष्टा द्रव्यान् क्षुण्णान्समुद्भवेन ॥

बभ्रानिर्ष्पादतोपन्नु स्पर्शान् रम उच्यते ॥ २ ॥

१ वसन्तिरुच्यते इति । २ नामनी शब्दमे गिरावै राव निर्वर्तते नाम ।  
३ रम । ४ मृत्तिका । ५ पुष्पकपाण्डुरवः । ६ मृदवाः । ७ घृताः ।

कुडवं चूर्णितं द्रव्यं क्षिप्तं तद्विगुणे जले ॥  
 अहोरात्रस्थितं यस्मान्द्रवेद्वा रस उत्तमः ॥ ३ ॥  
 आदाय शुष्कद्रव्यं वा स्वरसानामसंभवे ॥  
 जलेष्टगुणिते साध्यं पादशिष्टं च गृह्यते ॥ ४ ॥  
 स्वरसस्य गुरुत्वाच्च पलमर्थं प्रयोजयेत् ॥  
 निःशेषितं चाग्निसिद्धं पलमात्रं रसं पिबेत् ॥ ५ ॥  
 मधुश्वेतागुक्षारान् जीरकं लवणानि च ॥  
 घृतं तैलं च चूर्णादीन्कोलमात्रान् रसे क्षिपेत् ॥ ६ ॥  
 स यथा ॥

अमृताया रसः क्षौद्रयुक्तः सर्वप्रमेहजित् ॥  
 हरिद्राचूर्णयुक्तो वा रसो धान्याः समाक्षिकः ॥ ७ ॥  
 इत्यादि ॥ अथ कल्ककल्पना ॥  
 यः पिण्डश्चार्द्रद्रव्याणां स कल्क इति कीर्तितः ॥  
 वृक्षवैद्यवचः साक्षात्कल्को द्रुपदि पोषितः ॥  
 मात्रा पिबुमिता तत्र द्विगुणं माक्षिकादिकम् ॥ ८ ॥  
 यथा ॥

पचेत्क्षुद्रां सपंचांगां पुटपाकेन तद्रसः ॥  
 पिप्पलीचूर्णसंयुक्तः कासश्वासक्षयापहः ॥ ९ ॥  
 अथ काथः ॥  
 पानीयं पीडशगुणं क्षुण्णद्रव्याद्विनिक्षिपेत् ॥  
 मृत्पात्रे कथितं आस्यमष्टमांशावगोषितम् ॥  
 गृतः काथः कपायश्च निर्यूहः स निगद्यते ॥ १० ॥  
 यथा ॥

गुडूचीधान्यकारिष्टरक्तचंदनपद्मकः ॥  
 गुडूच्यादिरयं काथः सर्वज्वरहरः स्मृतः ॥ ११ ॥

अथ यवागूः ॥

साध्यं चतुष्पलं द्रव्यं चतुःषष्टिपलैवुनि ॥

तत्काथेनार्द्धशिष्टेन यवागूं साधयेद्वराम् ॥ १२ ॥

सा यथा ॥

आम्रांम्रातकजंवूत्वक्कपाये विषचेद्बुधः ॥

यवागूं शालिभिर्युक्तां तां भुक्त्वा ग्रहणीं जयेत् ॥ १३ ॥

अथ यूपः ॥

कल्कद्रव्यपलं गुंठी पिप्पली चार्द्धकार्षिकी ॥

वारिप्रस्थेन विषचेत्स द्रवो यूप उच्यते ॥ १४ ॥

स यथा ॥

कुलत्थयपकोलैश्च मुद्गैर्मूलैरुगुंठैः ॥

गुंठीधान्यकयुक्तैश्च यूपः श्लेष्मानिलापहः ॥

सतमुष्टिक इत्येष सन्निपातज्वराशयेत् ॥ १५ ॥

इति सप्तमुष्टिको यूपः ॥

अधैषां प्रक्रियां त्रैष प्रोच्यते नातिविस्तरात् ॥

यवागूः षड्गुणजले सिद्धा स्यात्कृशरा घना ॥ १६ ॥

तंदुलैर्मुद्गैर्माषैश्च तिलैर्षां साधिता हिता ॥

यवागूमाहिणीं कृत्वा तर्पिणीं पातनाशिनी ॥ १७ ॥

आर विजय ॥

अथ यवागूः ॥

साध्यं चतुष्पलं द्रव्यं चतुःषष्टिपलैर्वुनि ॥

तत्काथेनार्द्धशिष्टेन यवागूं साधयेद्वराम् ॥ १२ ॥

सा यथा ॥

आम्रांम्रातकजंवूत्वक्कपाये विपचेद्दुधः ॥

यवागूं शालिभिर्युक्तां तां भुक्त्वा ग्रहणीं जयेत् ॥ १३ ॥

अथ यूपः ॥

कल्कद्रव्यपलं गुंठी पिप्पली चार्द्धकार्पिकी ॥

वारिप्रस्थेन विपचेत्स द्रवो यूप उच्यते ॥ १४ ॥

स यथा ॥

कुलत्थयवकोलैश्च मुद्गैर्मूलैकगुंठकैः ॥

गुंठीधान्यकयुक्तैश्च यूपः श्लेष्मानिलापहः ॥

सप्तमुष्टिक इत्येष सन्निपातज्वराञ्जयेत् ॥ १५ ॥

इति सप्तमुष्टिको यूपः ॥

अथैषां प्रक्रियात्रैव प्रोच्यते नातिविस्तरात् ॥

यवागूः पङ्कजले सिद्धा स्यात्कडारा घना ॥ १६ ॥

लेहवत्साधयेद्वह्नौ गुडो वा शर्कराथ वा ॥  
 गुग्गुलुर्वा क्षिपेत्तत्र चूर्णं तन्निर्मिता वटी ॥ ३८ ॥  
 सिता चतुर्गुणा देया वटीषु द्विगुणो गुडः ॥  
 सर्वचूर्णे समः कार्यो गुग्गुलुर्मधु तत्समम् ॥ ३९ ॥  
 द्रवश्च द्विगुणो देयो मोदकेषु भिषग्वरैः ॥  
 कर्पप्रमाणं तन्मात्रा बलं दृष्ट्वा प्रकल्पयेत् ॥ ४० ॥

अथावलेहः ॥

क्वाथादेर्यत्पुनः पाक्वाद्घनत्वं सा रसक्रिया ॥  
 सोवलेहश्च लेहश्च तन्मात्रा स्यात्पलोन्मिता ॥ ४१ ॥  
 सिता चतुर्गुणा देया चूर्णाच्च द्विगुणो गुडः ॥  
 द्रवश्चतुर्गुणो देय इति सर्वत्र निश्चयः ॥ ४२ ॥  
 दुग्धमिक्षुरसो यूपः पंचमूलकपायकः ॥  
 वासाक्वाथश्च तद्योग्यमनुपानं प्रशस्यते ॥ ४३ ॥

इत्यवलेहविधिः ॥ अथ गणाः ॥

एका हरीतकी योज्या द्वौ योज्यौ च विभीतकौ  
 चत्वार्यामलकान्याहुः सिता च द्विगुणा भवेत् ॥ ४४ ॥  
 त्रिफला मेहशोथघ्नी कुष्ठहंत्री रसायनी ॥  
 सर्पिर्मधुभ्यां संयुक्ता सैव नेत्रामयापहा ॥ ४५ ॥

इति त्रिफला ॥

पिप्पली मरिचं गुंठी त्रिभिरुयूपणमुच्यते ॥  
 दीपनं श्लेष्ममेदोघ्नं कुष्ठपीनसनाशनम् ॥ ४६ ॥

इति त्रिकटुः ॥

पेप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ॥

मधुश्वेतागुडां दीश्व काथवत्तत्र निक्षिपेत् ॥ २८ ॥

॥ स यथा ॥

मधूकपुष्पं मधुकं चंदनं सपरूपैकम् ॥

मृणांलं कर्मलं लोध्रं कंभारी नागकेसरम् ॥ २९ ॥

त्रिफलासारिवाद्राक्षायवान्कोष्णजले क्षिपेत् ॥

सितामधुयुतः पेयः फांटो वासौ हिमोथ वा ॥ ३० ॥

वातं पित्तं तथा दाहं तृष्णामूर्च्छामतिभ्रमान् ॥

रक्तपित्तं मदं हन्यान्नात्रकार्या विचारणा ॥ ३१ ॥

इति मधूकपुष्पादिफांटः ॥ अथ हिमकल्पना ॥

क्षुण्णं द्रव्यपलं सम्यक्पट्भिर्निरपलैः पुतम् ॥ ३२ ॥

निःशोपितं हिमः स स्यात्तथा शीतकपायकः ॥

तन्मानं फांटवज्ज्ञेयं सर्वत्रैवैष निश्चयः ॥ ३३ ॥

स यथा ॥

आम्रजंबू च ककुभं चूर्णीकृत्य जले क्षिपेत् ॥

हिमः स स्यात्पिप्पेत्प्रातः सक्षौद्रं रक्तपित्तजित् ॥ ३४ ॥

इत्याम्रादिहिमः ॥ अथ चूर्णकल्पना ॥

अत्यंतशुष्कं यद्रव्यं सुपिष्टं वस्त्रगालितम् ॥

तत्स्याच्चूर्णं रजः क्षोदस्तन्मात्रा कर्पसंमिता ॥ ३५ ॥

चूर्णे गुडः समो देयः शर्करा द्विगुणा मता ॥

चूर्णेपु भर्जितं हिं गु जीरकं चेति केचन ॥ ३६ ॥

इति चूर्णकल्पना ॥ अथ वटिका ॥

वटिका अथ कथ्यन्ते तन्नाम गुटिका वटी ॥

मोदको वटिका पिंडी मुडो वर्तिस्तथोच्यते ॥ ३७ ॥

सर्जिका यावशूकश्च क्षारयुग्ममुदाहृतम् ॥

ज्ञेयौ वक्रिसमौ क्षारौ सर्जिकायावशूकजौ ॥ ५६ ॥

क्षाराश्चान्येपि गुल्माशौग्रहणीरुक्छिदः सदा ॥

पाचनाः कृमिपुंस्त्वघ्नाः शर्कराश्मरिनाशनाः ॥ ५७ ॥

इति क्षारौ ॥

शालिपर्णी पृष्ठिपर्णी बृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥

विल्वाग्निमंथस्योनाककाश्मरीपाटलायुतैः ॥ ५८ ॥

दशमूलमिति ख्यातं पूर्वाद्धं तु लघु स्मृतम् ॥

पराद्धं महदारुख्यं स्यात्पंचमूलमिति द्विधा ॥ ५९ ॥

दशमूलं सन्निपातशमनं प्रायशः स्मृतम् ॥

वातपीतश्वासकासमूतिकारोगनाशनम् ॥ ६० ॥

दशमूलं सन्निपाते शोफे त्वक्पचकं तथा ॥

तत्तद्योगे तथान्यांश्च वदिष्यामि गणान्पुनः ॥ ६१ ॥

न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थपारिशिष्टक्षपादपाः ॥

पंचैते क्षीरिणो वृक्षास्तेषां त्वक्पश्चवल्कलम् ॥ ६२ ॥

इतिश्रीयोगतरंगिण्यां स्वरसादिकथनं नामा-

ष्टादशस्तरंगः ॥ १७ ॥

एकोनविंशस्तरंगः ।

अथ स्वरूपनिरूपणाय तत्तद्दोषप्रतीकाराय च रोगा  
संक्षेपतः परिगण्यन्ते ते यथा ॥

ज्वरोतिसारो ग्रहणी हृशौर्जीर्णविपूचिका ॥

सालसा च बिलंवी च कृमिरुक्पण्डुकामलाः ॥ १ ॥

हलीमकं रक्तपित्तं राजयक्ष्मा ह्युरक्षतम् ॥ ॥

कासो हिक्रा तथा श्वासः स्वरभेदस्त्वरोचकः ॥ २ ॥



कोलमात्रप्रमाणत्वात्पंचकोलमिदं मतम् ॥ ४७ ॥

पाचनं दीपनं रुच्यं शूलगुल्मोदरापहम् ॥

पंचकोलं समरिचं पटूपणमुदाहृतम् ॥ ४८ ॥

इति पंचकोलम् ॥

त्रिगंधमेलात्वक्पत्रैश्चातुर्जातं सकेसरैः ॥

त्रिगंधं च चतुर्जातं तीक्ष्णोष्णं लघुपित्तकृत् ॥

वर्ण्यं रुचिकरं तीक्ष्णं विपश्चेष्टमामयापहम् ॥ ४९ ॥

इति त्रिसुगंधीचातुर्जातके ॥

काकोली क्षीरकाकोली जीवकर्पभकौ तथा ॥

मेदा चान्या महामेदा जीवन्ती मधुकं तथा ॥ ५० ॥

मुद्रपर्णी मापपर्णी जीवन्तीयगणो मतः ॥

जीवन्तीयगणः स्वादुर्गर्भसंधानकृद्गुरुः ॥ ५१ ॥

स्तन्यकृद्बृंहणो वृष्यः स्निग्धः शीतस्तृषापहः ॥

रक्तपित्तं क्षयं कासं ज्वरदाहानिलाजयेत् ॥ ५२ ॥

इति जीवन्तीयो गणः ॥

द्वे मेदे द्वेच काकोल्यौ जीवकर्पभकौ तथा ॥

ऋद्धिर्वृद्धिश्च तैः सार्द्धमष्टवर्गं उदाहृतः ॥

अष्टवर्गो बुधैः प्रोक्तो जीवन्तीयसमो गुणैः ॥ ५३ ॥

इत्यष्टवर्गः ॥

सिधुसौवर्चलं चैव विडं सामुद्रिकं गुडम् ॥

एकद्वित्रिचतुःपंचलवणानि क्रमाद्विदुः ॥ ५४ ॥

उरं सृष्टविष्णुमूत्रं स्निग्धं सूक्ष्मं बलापहम् ॥

वीर्योष्णं दीपनं तीक्ष्णं कफपित्तविवर्द्धनम् ॥ ५५ ॥